॥ श्री महावीराय नमः ॥

तत्त्व का ताला ज्ञान की कुंजी

भाग -1



सकलनकर्ता
मदनलाल कटारिया



प्रकाशक
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
बीकानेर

तत्त्व का ताला ज्ञान की कुंजी

संस्करण : षष्ठम् सन् 2006

प्रतियाँ . 5000

मूल्य : रुपए 15/-

अर्थ सहयोगी : शासननिष्ठ, धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् झुमरमलजी छल्लाणी व उनके सुपुत्र श्री सायरचन्दजी, कैलाशचन्दजी व सुमेरचन्दजी छल्लाणी परिवार, दिल्ली

पुस्तक प्राप्ति स्थान .

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, रामपुरिया मार्ग बीकानेर - 334005 (राज)
☎ 0151-2544867, 2203150

श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार
समता भवन, नौलाईपुरा रतलाम (म प्र) ☎ 07412-244443

आचार्यश्री नानेश ध्यान केन्द्र
पद्मिनी मार्ग, राणाप्रताप नगर, उदयपुर (राज) ☎ 0294-2490628

श्री जैन जवाहर मित्र मण्डल
महावीर बाजार ब्यावर (राज)

श्री पृथ्वीराजजी पारख
पारख ट्रेडर्स, आपापुरा, कचहरी रोड, दुर्ग (छत्तीसगढ)
☎ (0788) 2324255 (नि), 2324584 (ऑ)

श्री सोहनलालजी सिपाणी
831, 13th मेन II ब्लॉक, कोरमंगला, बैंगलोर
☎ 25537878 (नि), 25537833 (ऑ)

श्री सायरचन्दजी छल्लाणी
छल्लाणी उपकरण व जैन साहित्य भंडार,
मकान नं 4 वेस्ट पटेल नगर, न्यू दिल्ली
☎ 0124 - 5052629, 011 - 25883344

मुद्रक
छाजेड़ प्रिन्टरी प्रा. लि.
[illegible]

भूमिका

आचरण के पूर्व ज्ञान आवश्यक है। भगवान महावीर ने कहा 'पढम नाण तओ दया' पहले ज्ञान फिर आचरण। श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ सम्यक् ज्ञान के प्रचार-प्रसार एव ज्ञानवर्द्धक साहित्य प्रकाशन के क्षेत्र मे अग्रणी रहा है। 'तत्त्व का ताला ज्ञान की कुँजी' पुस्तक इसी उद्देश्य के सफलता हेतु एक कदम है। इसमे जैन सिद्धान्तो के मौलिक ज्ञान को छोटे-छोटे बोल सग्रह एव थोकडो के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। पूर्व मे प्रकाशित पुस्तक की निरतर माग के कारण सशोधित पाँचवाँ सस्करण प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता हो रही है।

समीक्षण ध्यान योगी, समता विभूति स्व आचार्य श्री नानेश को स्मरण करते हुए परमागम रहस्यज्ञाता, व्यसनमुक्ति के प्रणेता, तपोनिधि, प्रशान्तमना आचार्य श्री 1008 श्री रामलालजी म सा को वन्दन करते हुए ज्ञान की अभिवृद्धि हेतु यह कुजी सादर समर्पित है।

पुस्तक के सकलन मे प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से जिनका मार्गदर्शन एवम् सहयोग मिला, उनके प्रति हम हृदय से आभार व्यक्त करते है।

इस पुस्तक के प्रकाशन मे शासननिष्ठ, धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् झूमरमलजी छल्लाणी व उनके सुपुत्र सायरचन्दजी, कैलाशचन्दजी व सुमेरचन्दजी छल्लाणी परिवार, दिल्ली का अर्थ- सौजन्य प्राप्त हुआ। अतएव श्री सघ हृदय से उनका आभार व्यक्त करता है।

पुस्तक के सकलन-सम्पादन मे पूरी तरह सावधानी बरती गई है। इसके उपरान्त भी कोई त्रुटि रह गई हो तो हम क्षमाप्रार्थी है। सुधी पाठक सुधार कर ज्ञानार्जन मे वृद्धि करेगे, ऐसी आशा है।

जय नानेश । जय रामेश ।

: विनीत :

शान्तिलाल सांड — सयोजक, साहित्य समिति

उमरावसिंह ओस्तवाल — अध्यक्ष

मदनलाल कटारिया — महामत्री

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ

बीकानेर (राजस्थान)

आचार्य श्री नानेश

जीवन–आलेख

(1) आचार्य श्री नानेश का जन्म वि स 1977 ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया को दातागॉव (राजस्थान) मे हुआ। आपश्री की माताजी श्रीमती शृगाराबाई पोखरना एव पिता श्रीमान् मोडीलालजी पोखरना थे। आपकी दीक्षा विक्रम सम्वत् 1996 को कपासन मे हुई। आचार्य पद वि स 2019 माघ कृष्णा द्वितीया को उदयपुर मे प्राप्त हुआ।

(2) लगभग 60 वर्ष तक सयम साधना की कठोर मर्यादाओ मे रह कर मुक्तिपथ पर कदम बढाया।

(3) लगभग 38 वर्ष तक आचार्य पद पर आसीन होकर हजारो किलोमीटर की पदयात्रा करके जनसाधारण को अपने मधुर, प्रेरक एव मर्मस्पर्शी उपदेशो से लाभान्वित किया।

(4) लगभग एक लाख से अधिक बलाई जाति के व्यक्तियो को व्यसन मुक्त बनाकर मानवीय गुणो मे सम्पन्न किया तथा उन्हे 'धर्मपाल' सज्ञा प्रदान की।

(5) तनावयुक्त जीवन से मुक्ति पाने एव आत्म शान्ति के लिये **''समीक्षण ध्यान''** तथा विश्व शान्ति के लिये **''समता दर्शन''** का प्रवर्तन किया।

(6) 350 से अधिक भव्य आत्माओ को प्रवर्जित कर आगार से अणगार धर्म मे प्रवेश दिया। आपकी सन्निधि मे अनेकानेक भव्य आत्माओ ने श्रावक धर्म स्वीकार किया।

(7) आचार्य श्री का सस्कृत, प्रकृत तथा हिन्दी आदि भाषाओ पर पूर्ण अधिकार था।

(8) आचार्य श्री की प्रसिद्ध कृतियो मे 'समता दर्शन और व्यवहार', 'समीक्षण धारा', 'गहरी पर्त के हस्ताक्षर', 'क्रोध समीक्षण', 'मान समीक्षण', 'माया समीक्षण', 'लोभ समीक्षण', 'ऐसे जिये', 'जिण धम्मो' आदि प्रमुख हैं।

(9) कर्म प्रकृति भगवती सूत्र, आचाराग सूत्र, अन्तगडदशाग सूत्र, कल्प सूत्र आदि शास्त्रो का अनुवाद कर आगम सम्मत हृदयस्पर्शी अभिनव विवेचना प्रस्तुत की।

(10) आचार्य श्री नानेश का सलेखना सथारा पूर्वक महाप्रयाण वि स 2056 कार्तिक कृष्णा तृतीया (27 अक्टू 1999 बुधवार) को उदयपुर मे हुआ।

आचार्य श्री रामेश

जीवन-आलेख

(1) आचार्य श्री रामेश की जन्म थलीप्रान्त के देशनोक ग्राम (राजस्थान) मे चैत्र शुक्ला चतुर्दशी वि स 2009 मे हुआ। आपश्री की माताजी धर्मनिष्ठ सुश्राविका गवराबाईजी एव पिता धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् नेमचन्दजी भूरा थे।

(2) अनाथी मुनि की तरह दृढ सकल्प के साथ माघ शुक्ला 12 सन् 1974 देशनोक मे समीक्षण ध्यान योगी, समता विभूति श्रद्धेय गुरुवर आचार्य श्री नानेश से प्रवर्ज्या अगीकार की।

(3) चित्तौड मे आसोज शुक्ला द्वितीया सन् 1990 को आचार्यश्री नानेश द्वारा **'मुनिप्रवर'** की उपाधि से विभूषित किया गया।

(4) बीकानेर मे फाल्गुन शुक्ला तीज सन् 1992 को आचार्य श्री नानेश ने उत्कृष्ट मुनिचर्या, स्व पर अनुशासन की विशिष्ट क्षमता, सेवा गुण सम्पन्नता, बहुज्ञता, धीरोदत्त चारित्र के गुणो से युक्त आदि आचार्यत्व के विशिष्ट गुणो से सम्पन्न मुनि प्रवर श्री रामलालजी म सा को हुक्म सघ के नवम् पटधर के रूप मे 'युवाचार्य' पद पर प्रतिष्ठित किया।

(5) अद्भूत व्यक्तित्व के धनी, कठोर सयम के पक्षधर, सयम के प्रति सजग, ज्ञानार्जन के प्रति विशिष्ट रुझान रखने वाले युवाचार्य श्री रामेश उदयपुर मे कार्तिक कृष्णा तृतीया सम्वत् 2056 तदनुसार 27 अक्टूबर 1999 बुधवार को आचार्य पद पर विराजित हुए। श्रीसघ का कुशल नेतृत्व करते हुए अभी तक 113 मुमुक्षु आत्माओ को प्रवर्जित किया।

(6) चित्तौड जिले के बाबरी समाज के लोगो को नियत्रित करने मे प्रशासन को जटिल समस्याओ का सामना करना पड रहा था। ऐसे अराजक गतिविधियो मे सलग्न बाबरी समाज को प्रतिबोधित कर व्यसनमुक्त

बनाकर सीरीवाल की सज्ञा प्रदान की। व्यसनमुक्ति आदोलन के अतर्गत सघ ने अभी तक लगभग एक लाख लोगो को व्यसनमुक्त बनाया।

(7) आपश्री को प्रत्युत्पन्न मति एव गुढ आगम सम्मत ज्ञान हेतु सन् 1990 मे **परमागम रहस्यज्ञाता** की उपाधि से विभूषित किया गया।

(8) आपश्री का हिन्दी, सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश आदि भाषाओ तथा जैन आगम के साथ ही जैनेत्तर साहित्य एव ज्योतिष विज्ञान पर भी विशेष अधिकार है।

(9) लगभग 29 वर्षो से सयम की कठोर मर्यादाओ के साथ सयम पथ पर निरतर अग्रसर।

आप श्री के नेतृत्व मे यह चतुर्विध सघ ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि कर विकास के पथ पर उत्तरोत्तर आगे बढता रहे इन्हीं उत्तम भावनाओ के साथ।

वर्तमान के वर्द्धमान हो, जिनमार्ग में गतिमान हो।
भक्तों के भगवान हो, हुक्म संघ के प्राण हो॥

अनुक्रमणिका

मुक्तक

शाकाहार से जीवन दान,
व्यसन मुक्ति से जन कल्याण।

सामान्य तत्त्वज्ञान

आध्यात्म पाठ

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसति, जस्स धम्मे सयामणो ॥1॥

धर्म सर्वोत्तम मगल है। अहिसा, संयम और तप धर्म है। जिनका मन सदा धर्म मे लगा रहता है, उनको देवता भी नमस्कार करते है॥1॥

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणं वणं ॥2॥

यह आत्मा खुद ही नरक की वैतरणी नदी और कूट शाल्मली वृक्ष के समान दु खदायी है, और इच्छित वस्तु देने वाली कामधेनु और नन्दन वन के समान सुखदायी है॥2॥

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ॥3॥

यह आत्मा ही अपने सुख-दुख का कर्त्ता और विकर्त्ता भोक्ता है, और यह आत्मा सुमार्ग पर रहने पर मित्र और कुमार्ग पर रहने पर अपना ही शत्रु होता है॥3॥

अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पादन्तो सुही होई, अस्सिं लोए परत्थ य ॥4॥

अपनी आत्मा को ही दमन करना चाहिये, आत्मा दुर्दमनीय है। आत्मा का दमन करने वाला ही इस लोक और परलोक मे सुखी होता है॥4॥

पंचिंदियाणि कोहं, माणं मायं तहेव लोहं य।
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वमप्पे जिए जियं ॥5॥

पाचो इन्द्रियो के विषय, क्रोध, मान,माया, लोभ और आत्मा दुर्जय हैं। आत्मा को जीत लेने पर इन सबको जीत लिया जाता है॥5॥

जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ ॥6 ॥

दस लाख योद्धाओ को दुर्जय संग्राम मे जो जीत लेता है, उस से भी श्रेष्ठ विजयी वह है जो अपने-आपको जीत लेता है ॥6 ॥

जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए।
जयं भुंजन्तो भासन्तो, पावकम्मं, न बंधई ॥7 ॥

सावधानी (यतना) से चले, खडा रहे, बैठे, सोवे, भोजन करे और बोले तो पापकर्म का बन्ध नहीं होता है ॥7 ॥

लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो निंदापसंसासु, तहा माणावमाणओ ॥8 ॥

लाभ मे या हानि मे, सुख मे या दुःख मे, जीवित रहने या मरने में, निन्दा या प्रशंसा किए जाने पर और मान या अपमान किये जाने पर समभाव रखें ॥8 ॥

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ ॥9 ॥

मैं सब जीवो को क्षमा करता हूं, सब जीव मुझे क्षमा करे, मेरी सब जीवो के साथ मित्रता है, किसी के साथ मेरा वैर नहीं है ॥9 ॥

मार्गानुसारी के 35 गुण

साधारणतया पूर्वाचार्यो ने सम्यक्त्व प्राप्ति की सुलभता उन मनुष्यों मे मानी है जिनका गृहस्थ जीवन अनिन्दनीय हो। इस प्रकार की दशा को 'मार्गानुसारिता' के नाम से बताया गया है। आचार्य हेमचन्द्र ने अपने योगशास्त्र ग्रंथ मे मार्गानुसारी के 35 गुण इस प्रकार बताये हैं।

1 न्याय सम्पन्न विभवत्व- जिसकी आजीविका के साधन, न्याय के अनुकूल तथा सच्चाई से युक्त हो।

2 शिष्टाचार प्रशंसक- जिसका आचरण उत्तम लोग करते हैं, उन आचार की प्रशंसा करना। लोकापवाद से डरना, दुखियो की सेवा

करना।

3 विवाह विवेक- समान कुल शील वाले अन्य गोत्रीय के साथ विवाह-सम्बन्ध करना।

4 पाप भीरु- पापजनक कार्यो से डरकर अलग रहना।

5 प्रसिद्ध देशाचार का पालक- खान, पान, वेशभूषा,भाषा आदि का पालन, अपने देश के उत्तम व्यक्तियो द्वारा मान्य हो वैसा ही करना।

6 अवर्णवाद त्याग- पर निन्दा का त्यागी होना।

7. घर की व्यवस्था- रहने के लिए घर ऐसा हो कि जिसमे चोरो अथवा दुराचारियो का प्रवेश सुगम नहीं हो सके। पड़ौसी भी भले और उत्तम हो।

8 सत्सगति वाला- भले और सदाचारियो की सगति करना और दुराचारियो से दूर रहना।

9 माता-पिता की सेवा करना- यह सबसे पहला सदाचार है। माता-पिता के उपकार से उऋण होना बहुत कठिन है।

10 उपद्रव युक्त स्थान का त्याग करना।

11 घृणित-निन्दनीय कृत्य नहीं करना।

12 आय के अनुसार व्यय करे अर्थात् आमदनी से अधिक खर्च नहीं करना।

13 अपना वेश, देश, काल और अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार रखना।

14 बुद्धि के आठ गुणो से सम्पन्न होना।

15 प्रतिदिन धर्म श्रवण करना।

16 अजीर्ण होने पर भोजन नहीं करना।

17 यथासमय भोजन करना।

18 अबाधित त्रिवर्ग साधन- अर्थ और काम की इस प्रकार साधना नहीं करे जिससे कि धर्म बाधित हो।

19 साधु और दीन-अनाथो को दान देना।

20. दुराग्रह से रहित होना।

21 गुण पक्षपात- गुणवानो, सदाचारियो, धर्मीजनो और सज्जनो तथा अहिसा, सत्यादि सद्गुणो का पक्ष करना।

22 निषिद्ध देशादि मे नहीं जाना।

23 अपनी शक्ति को तोल कर कार्य मे प्रवृत्ति करना।

24 वृत्तस्थ ज्ञानियो की सेवा भक्ति करने वाला।

25 पोष्य पोषक- माता, पिता, पत्नी, पुत्रादि और आश्रित जनो का पोषण करना।

26 दीर्घदर्शी- दूरदर्शितापूर्वक भावी हानि-लाभ का विचार कर के कार्य करना।

27 विशेषज्ञ- अपना ज्ञान बढा कर कार्य-अकार्य एव हेय-उपादेय के विषय मे अनुभव बढाना।

28 कृतज्ञ- अपने पर किये हुए उपकारो को सदा याद रख कर उनका आभार मानते रहना।

29 लोकवल्लभ- विनय सेवा, सहायतादि से लोकप्रिय होना।

30 लज्जाशील- लज्जावान् होना।

31 सहृदय- दु·खी प्राणियो के दुःख देखकर हृदय का कोमल होना और उनके दुःख दूर करने का यथाशक्ति प्रयत्न करना।

32 सौम्य-सदैव शान्त स्वभाव और प्रसन्न रहना।

33. परोपकार कर्मठ- दूसरो की भलाई मे सदैव तत्पर रहना।

34 क्रोध, लोभ, मद, मान, काम और हर्ष- इन छः अन्तरग शत्रुओं का यथासंभव त्याग करना।

35. इन्द्रिय जय- इन्द्रियो पर यथाशक्ति अंकुश रखना।

प्राथमिक प्रश्नोत्तर

1. प्रश्न– अरिहन्त कौन है ?
   उत्तर– चार घनघाति कर्मो को नष्ट करने वाले परम वीतराग, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी।
2. प्रश्न– सिद्ध कौन है ?
   उत्तर– जिनके समस्त प्रयोजन सिद्ध हो चुके हो, ऐसे मोक्ष प्राप्त परमेश्वर।
3. प्रश्न– वीतराग कौन है ?
   उत्तर– जिनके राग-द्वेष नष्ट हो चुके।
4. प्रश्न– भगवत कौन है ?
   उत्तर– भव-भ्रमण (जन्म-मरण) का अन्त करने वाले।
5 प्रश्न– शूरवीर कौन है ?
   उत्तर– जो उत्पन्न परीषह (उपद्रव, विपत्ति) को सहन करे।
6. प्रश्न– श्रमण कौन है ?
   उत्तर– सयम और तप मे श्रम करे, विषय-वासना का शमन करे और समभाव युक्त रहे।
7. प्रश्न– निर्ग्रंथ कौन है ?
   उत्तर– कनक और कामिनी के तथा बाह्य एव आभ्यन्तर परिग्रह के त्यागी।
8 प्रश्न– भिक्षु कौन है ?
   उत्तर– निर्दोष भिक्षा लेने वाले।
9 प्रश्न– अनगार कौन है ?
   उत्तर– जिन्होने अपने घर का त्याग कर दिया हो।
10 प्रश्न– यति कौन हैं ?
   उत्तर– इद्रियो को वश मे रखने वाले।
11. प्रश्न– मुनि कौन हैं ?

उत्तर- अधर्म के कार्यो मे मौन रहने वाले।

12. प्रश्न- पंडित कौन है ?

उत्तर- पाप से डरने वाले।

13. प्रश्न- ऋषीश्वर कौन है ?

उत्तर- समस्त जीवो के रक्षक।

14 प्रश्न- योगीश्वर कौन है ?

उत्तर- जो मन, वचन और काया के योगो को वश मे रखे।

15. प्रश्न- दयालु कौन है ?

उत्तर- दुःखी जीवो पर दया करे।

16. प्रश्न- दानेश्वर कौन है ?

उत्तर- अभय और सुपात्र दान देने मे उदार हृदय वाले।

17. प्रश्न- ब्रह्मचारी कौन है ?

उत्तर- नव वाड युक्त ब्रह्मचर्य पाले।

18. प्रश्न- साधु कौन हैं ?

उत्तर- आत्महित की साधना करे।

19. प्रश्न- स्थविर कौन है ?

उत्तर- स्व-पर को धर्म मे स्थिर करे।

20. प्रश्न- गणधर कौन है ?

उत्तर- गण एवं गुणो को धारण करे।

21. प्रश्न- सुपुत्र कौन है ?

उत्तर- माता-पिता का आज्ञाकारी हो।

22. प्रश्न- शिष्य कौन हैं ?

उत्तर- गुरू की आज्ञा का पालन करे।

23. प्रश्न- भार्या कौन हैं ?

उत्तर- गृह व्यवस्था के भार का वहन करे।

24. प्रश्न- मित्र कौन है ?

उत्तर- दुःख-सुख मे पूर्ण रूप से साथ देने वाला।

25. प्रश्न– तपस्वी कौन है ?

उत्तर– आत्मा मे लगे कर्मो की निर्जरा के लिए तप करने वाला।

26. प्रश्न– जैनी कौन है?

उत्तर– जिनेश्वर भगवत का उपासक।

27. प्रश्न– श्रावक कौन है?

उत्तर– जिनवाणी सुनने का रसिक।

28. प्रश्न– श्रमणोपासक कौन है?

उत्तर– निर्ग्रंथ-श्रमणो की उपासना करने वाला।

29. प्रश्न– व्रती कौन है?

उत्तर– पापो का त्याग करने वाला।

30. प्रश्न– मार्गानुसारी कौन है।

उत्तर– सदाचार का पालन करने वाला।

श्रावक का वचन–व्यवहार

श्रमणोपासक का वचन–व्यवहार उत्तम प्रकार का होता है। इसके आठ नियम इस प्रकार हैं :–

1 श्रावकजी थोडा (कम) बोले।

2 श्रावकजी आवश्यकता होने पर बोले।

3 श्रावकजी मीठा बोले।

4 श्रावकजी चतुराईपूर्वक(अवसर के अनुसार) बोले।

5 श्रावकजी अहकाररहित वचन बोले।

6 श्रावकजी मर्म खोलने वाले (एव आघातजनक) वचन नहीं बोले।

7 श्रावकजी सूत्र सिद्धांत के न्याययुक्त बोले।

8 श्रावकजी सभी जीवो के लिए हितकारक साताकारी वचन बोलें।

श्रावकजी के 21 गुण

जिनेश्वर भगवंत के प्रियधर्मी-दृढधर्मी उपासक मे नीचे लिखे 21 गुण होते हैं:-

1 श्रावकजी, नव तत्त्व और पचीस क्रिया के जानकार होवे।

2. श्रावकजी, धर्म-आराधना मे देव, मनुष्य, तिर्यच - किसी की सहायता की इच्छा नहीं करे।

3 श्रावकजी,धर्म पर दृढ रहे। देव, मनुष्य या तिर्यच के उपसर्ग से डिगाना चाहे, तो डिगे नहीं।

4 श्रावकजी, श्री जिन धर्म मे शका नहीं करे, परदर्शन की इच्छा नहीं करे और करनी के फल मे सन्देह नहीं लावे।

5 श्रावकजी, सूत्र और अर्थ दोनो को प्राप्त करने वाले, ग्रहण करने वाले, पूछ कर निश्चित करने वाले और रहस्य ज्ञान प्राप्त करने वाले होवे।

6 श्रावकजी की धर्मरुचि इतनी गहरी हो कि जिसका प्रभाव रक्त और मांस पर ही नहीं, हड्डियो और मज्जा तक मे व्याप्त हो जाय।

7 श्रावकजी, निर्ग्रंथ- प्रवचन ही सार है, अर्थ है और परमर्थ है, शेष सभी बाते, सभी वस्तुए और सभी संयोग अनर्थ है- ऐसी दृढ, श्रद्धा रखे और धर्म-बन्धुओ मे चर्चा करे।

8 श्रावकजी, कूड-कपट, ठगाई, अन्याय,अनीति एवं अनाचार से दूर रहकर अपना जीवन एव आजीविका न्याय, नीति, सदाचार और धर्म-साधना से निर्मल एवं स्वच्छ रखे।

9 श्रावकजी, दान के लिए अपने घर के द्वार खुले रखे।

10 श्रावकजी, प्रतिमास दोनो पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या, इस प्रकार छह पौषध करे।

11 श्रावकजी के सदाचार की प्रतिष्ठा इतनी व्याप्त हो कि यदि वे धन से भरे हुए भंडारो और महिलाओ के निवास- अतःपुर (राजाओं

के निवास) मे भी चले जाये तो उन पर किसी प्रकार की शका नहीं हो, उनका विश्वास हो।

12 श्रावकजी, अपने-व्रत नियमो का निर्दोष रीति से पालन करे।

13 श्रावकजी, श्रमण-निर्ग्रंथो को भक्तिपूर्वक निर्दोष आहारादि का दान करे।

14 श्रावकजी, धर्म का प्रचार करे। वक्तव्य, लेखन, भाषण आदि से धर्म की वृद्धि करे।

15 श्रावकजी, अल्प इच्छा वाले होवे। लोभ को वश मे रखे।

16 श्रावकजी, अल्प आरम्भ वाले होवे।

17 श्रावकजी, प्रतिदिन तीन मानोरथ का चिन्तन करे।

18 श्रावकजी, गुणवान साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका की प्रशसा करे।

19 श्रावकजी, उभयकाल प्रतिक्रमण करे।

20 श्रावकजी, साधर्मी भाई-बहिनो की सहायता करे।

21 श्रावकजी, नित्य सामायिक करे, धर्मोपदेश सुने।

(भगवती सूत्र श 2, उ 5,)

अनमोल शिक्षा

1 दीजे दान 2 लीजे यश, 3 कीजे परोपकार, 4 खाइजे गम 5 पीजे प्रेम रस, 6 पालजे शील 7 टालजे कुसगत 8 छोडजे पाप, 9 आदरजे धर्म 10 ध्याइजे अरिहन्त देव, 11 सेवजे निर्ग्रन्थ गुरु और 12 रमजे स्वाध्याय ध्यान मे।

मूल

जिससे वस्तु की तथा गुण या दोष की उत्पत्ति हो, उसे 'मूल' कहते है। मूल ही विकसित होकर फल बनता है :-

1 समस्त गुणो का मूल विनय है।

2. सभी रसो का मूल पानी है।

3. सभी पापो का मूल **लोभ** है।
4. सभी धर्मो का मूल **दया** है।
5. सभी कलह का मूल **हँसी** है।
6. सभी रोगो का मूल **अजीर्ण** है।
7 सभी प्रकार के मरण का मूल **शरीर** है।
8 सभी बन्धनो का मूल स्नेह **बन्धन** है।

नहीं

1 क्रोध के समान **विष** नहीं। 2. क्षमा के समान **अमृत** नहीं।
3 पाप के समान **वैरी** नहीं। 4 धर्म के समान **मित्र** नहीं।
5 कुशील के समान **भय** नहीं। 6 शील के समान **शरण** भूत नहीं।
7 लोभ के समान **दु.ख** नहीं। 8 संतोष के समान सुख नहीं।

शृंगार

1 शरीर का शृंगार शील। 2 शील का शृगार तप।
3 तप का शृंगार क्षमा। 4 क्षमा का शृगार ज्ञान।
5 ज्ञान का शृंगार मौन। 6 मौन का शृंगार शुभ ध्यान।
7 शुभ ध्यान का शृगार संवर। 8 संवर का शृगार निर्जरा।
9 निर्जरा का शृंगार केवलज्ञान। 10. केवलज्ञान का शृंगार अक्रिया।
11. अक्रिया का शृगार मोक्ष और 12 मोक्ष का शृंगार अव्याबाध सुख।

महापापी

1 आत्मघाती महापापी
2 विश्वासघाती महापापी
3. गुरुद्रोही महापापी

4	कृतघ्नी	महापापी
5	झूठी सलाह देने वाला	महापापी
6	झूठी साक्षी देने वाला	महापापी
7	हिसा मे धर्म बताने वाला	महापापी
8	सरोवर की पाल तोड़ने वाला	महापापी
9	जगल मे दव- आग लगाने वाला	महापापी
10	हरा-भरा वन कटाने वाला	महापापी
11	बाल-हत्या करने वाला	महापापी
12	सती-साध्वी का शील-भग करने वाला	महापापी

दस मुण्डन

मुण्डन- शब्द का अर्थ अपनयन अर्थात् त्यागना, दूर करना है। यह मुण्डन द्रव्य और भाव से दो प्रकार का है। सिर के बालो को अलग करना द्रव्य मुण्डन है तथा 5 इन्द्रियो के 240 विकारो को और कषायो को दूर करना भाव मुण्डन है। इस प्रकार द्रव्य और भाव मुण्डन धर्म से युक्त पुरुष मुण्ड कहलाता है। (स्थानाग सूत्र)

1	श्रोतेन्द्रिय-मुण्डन	6	क्रोध-मुण्डन
2	चक्षुरिन्द्रिय-मुण्डन	7	मान-मुण्डन
3	घ्राणेन्द्रिय-मुण्डन	8	माया-मुण्डन
4	रसनेन्द्रिय-मुण्डन	9	लोभ-मुण्डन
5	स्पर्शनेन्द्रिय-मुण्डन	10.	सिर-मुण्डन।

जीतना कठिन

1	8 कर्मो मे मोहनीय कर्म	जीतना कठिन
2	5 महाव्रतो मे दूसरा महाव्रत	पालना कठिन
3	3 योग मे मन का योग	जीतना कठिन
4	5 इन्द्रिय मे रसनेन्दिय	जीतना कठिन
5	6 काया मे वायुकाय की रक्षा करना	कठिन

6 भर जवानी मे शील पालना कठिन

7 कृपण के हाथ से दान देना कठिन

8 बलवान द्वारा क्षमा करना कठिन

ज्ञान हानि के सात कारण

1 आलस्य करे तो ज्ञान घटे।

2, निद्रा अधिक लेवे तो ज्ञान घटे।

3 क्लेश करे तो ज्ञान घटे।

4 शोक करे तो ज्ञान घटे।

5 चिन्ता अधिक करे तो ज्ञान घटे।

6 शरीर मे रोग अधिक रहे तो ज्ञान घटे।

7 कुटुम्ब-परिवार के मोह मे डूबा रहे तो ज्ञान घटे।

ज्ञानवृद्धि के 11 कारण

1 उद्यम करे तो ज्ञान बढे।

2 निद्रा तजे तो ज्ञान बढे।

3 ऊनोदरी (भूख से कम खाना) तप करे तो ज्ञान बढे।

4 अल्प बोले तो ज्ञान बढे।

5 पडित पुरुषो की सगति करे तो ज्ञान बढे।

6 विनय करे तो ज्ञान बढे।

7 माया-कपट रहित तप करे तो ज्ञान बढे।

8 ससार असार जाने तो ज्ञान बढे।

9 सीखे हुए ज्ञान को बारम्बार चितारे तो ज्ञान बढे।

10 ज्ञानवत के पास ज्ञान सीखे तो ज्ञान बढे।

11 पाचो इन्द्रियो के विषयो को त्यागे तो ज्ञान बढे।

शिक्षाशील के आठ गुण

1 हास्य-क्रीडा न करे।

2 इन्द्रियो को वश मे रखने का अभ्यास करे।
3 किसी के मर्म तथा दोषो को प्रकट न करे।
4 सदाचार का ध्यान रखे।
5 अनाचार का सेवन न करे।
6 रसना-लोलुपी न हो।
7 क्रोध से सदा दूर रहे।
8 सत्य बात को स्वीकार करने मे सदा तत्पर रहे।

(उत्तराध्ययन सूत्र, अध्य 11)

गुरु-शिष्य के प्रश्नोत्तर

शिष्य गुरुदेव से प्रश्न करता है और गुरुदेव शिष्य को उत्तर देते है।

1. **प्रश्न**–अहो भगवन् ! समुद्र मे तो पानी बहुत है?
उत्तर–हे शिष्य ! इस समुद्र से भी अधिक ससार रूपी समुद्र मे, मोह रूपी पानी भरा है।

2 **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे कीचड बहुत है?
उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे काम-भोग रूपी कीचड बहुत है।

3. **प्रश्न**–अहो भगवन् ! समुद्र मे तो बेल है?
उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे तृष्णा की बेल, उससे भी बडी है।

4 **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे बडे-बडे पाताल कलश हैं?
उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे कषाय रूपी पाताल कलश उससे भी बडे है।

5. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे तो फेन होता है?
उत्तर– हे शिष्य ! संसार-समुद्र मे अहकार रूपी फेन विशाल है।

6. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे मच्छ-कच्छ बहुत हैं?
उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे भी कुटुम्ब रूपी मच्छ-कच्छ हैं।

7. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे बडे-बडे मगर-मच्छ हैं?

उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे क्रूर, अधर्मी राजा आदि भी बडे-बडे मगर-मच्छ जैसे है।

8. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे तो पहाड भी है?

उत्तर–हे शिष्य ! ससार -समुद्र मे आठ कर्म भी पहाड के समान है।

9. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे शंख-शीप आदि भी है?

उत्तर– हे शिष्य ! संसार-समुद्र मे भी 363 पाखड मत रूप शख-शीप है।

10. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे मणि, रत्न, मोती, मुगा आदि है?

उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे भी जिनेश्वर भगवत की वाणी रूपी रत्न, मणि, मोती आदि है।

11. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र मे तो द्वीप है ?

उत्तर– हे शिष्य ! ससार-समुद्र मे धर्म रूपी द्वीप है।

12. **प्रश्न**– अहो भगवन् ! समुद्र के किनारा है?

उत्तर– हे शिष्य ! संसार-समुद्र मे मोक्ष रूपी किनारा है।

तीर्थंकर पद प्राप्ति के 20 बोल

(ज्ञातासूत्र के 8वें अध्ययन के आधार पर)

1 अरिहन्त भगवान की भक्ति, उनके गुणो का चिन्तन और आज्ञा का पालन करते रहने से उत्कृष्ट रस जमे, तो तीर्थंकर नाम कर्म का बन्ध होता है।

2. सिद्ध भगवान् की भक्ति और उनके गुणो का चिन्तन करने से।

3. निर्ग्रथ- प्रवचन रूप श्रतुज्ञान मे अनन्य उपयोग रखने से।

4. गुरु महाराज की भक्ति, आहारादि द्वारा सेवा और उनके गुणो का प्रकाशन करने एव आशातना टालने से।

5 जाति- स्थविर (60 वर्ष की वय वाले), श्रुत- स्थविर (स्थानांग,

समवायाग के धारक), प्रव्रज्या- स्थविर (20 वर्ष की दीक्षापर्याय वाले) की भक्ति करने से।

6. बहुश्रुत (सूत्र, अर्थ, तदुभययुक्त) मुनिराज की भक्ति करने से।
7 तपस्वी मुनिराज की भक्ति करने से।
8 ज्ञान की निरन्तर आराधना करते रहने से।
9 सम्यकत्व का निरतिचार पालन करने से।
10 गुणज्ञ रत्नाधिको का तथा ज्ञानादि का विनय करने से।
11 भावपूर्वक उभयकाल षडावश्यक (प्रतिक्रमण) करते रहने से।
12 मूलगुण, उत्तरगुणो का निर्दोष रीति से शुद्धतापूर्वक पालन करने से।
13 सदा सवेग भाव रखने से अर्थात् शुभ ध्यान करते रहने से।
14 तपस्या करते रहने से।
15 भक्तिपूर्वक सुपात्र दान देने से।
16 आचार्यादि दस की वैयावृत्य* करने से।
17 सेवा तथा मिष्ट भाषणादि के द्वारा गुर्वादि को प्रसन्न रखने से और स्वय समाधिभाव मे रहने से।
18 नवीन ज्ञान का अभ्यास करते रहने से।
19 श्रुतज्ञान की भक्ति तथा बहुमान करने से।
20 प्रवचन की प्रभावना करने (धर्म का प्रचार करने) से ।

उपर्युक्त बीस बोलो की उत्कृष्टता पूर्वक आराधना करने से तीर्थकर नाम- कर्म का बन्ध होता है। इस बन्ध के उदय वाले महापुरुष, तीर्थंकर बन कर मोक्ष-मार्ग का प्रवर्तन करते हैं और भव्य जीवो का कल्याण करते है।

---

* आचार्यादि 10 की वैयावृत्य- 1 भक्त, 2. पान, 3. आसनदान, 4. उपकरण सपादन, 5. पाद प्रमार्जन 6 वस्त्र, 7. भैषज्य 8 मार्ग में सहायता करना, 9 दुष्ट चोर आदि से रक्षा करना, 10 गावादि में प्रवेश करते समय पात्र (दण्ड) आदि ग्रहण करना 11-12-13 उच्चार, प्रश्रवण, श्लेष्म मात्रक समर्पण करना आदि से की जाती है।

पच्चीस बोल का थोकड़ा

पहले बोले गति 4 – नरकगति, तिर्यचगति, मनुष्यगति और देव गति।

प्रश्न – गति किसे कहते हैं ?

उत्तर – संसारी जीव मरकर जहॉ जाते हैं उसके गति कहते हैं।

प्रश्न – नरक गति किसे कहते हैं।

उत्तर – नरक गति नामकर्म के उदय से प्राप्त जीवो की गति को नरक गति कहते हैं। जो जीव अत्यन्त पाप कर्म करते हैं, मर कर नरक मे जाते हैं उन्हे घोर कष्टो का सामना करना पडता है।

प्रश्न – तिर्यच गति किसे कहते हैं ?

उत्तर – तिर्यच गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त जीवो की गति तिर्यचगति है अथवा जो जीव झूठ बोलते हैं, छल-कपट करते हैं, व्यापार मे धोखा देते हैं, वे मरकर प्राय: पशु-पक्षी की योनी मे जाते हैं, उसे तिर्यच गति कहते हैं।

प्रश्न – मनुष्य गति किसे कहते हैं ?

उत्तर – मनुष्य गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त जीवो की गति को मनुष्य गति कहते हैं। जो जीव स्वभाव से भद्र, विनयवान और दयालु होते हैं, वे मरकर प्राय: मनुष्य होते हैं, उसे मनुष्य गति कहते है।

प्रश्न – देव गति किसे कहते हैं ?

उत्तर – देव गति नाम कर्म के उदय से प्राप्त जीवो की गति को देव गति कहते हैं। जो जीव शुभकर्म करने वाले हैं, जो सराग संयमादि पालते हैं वह प्राय: देव होते हैं उसे देव गति कहते हैं।

दूसरे बोले जाति 5 –एकेन्द्रिय, वेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय।

प्रश्न – जाति किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमे जीव का जन्म हो अर्थात् समान इन्द्रिय वाले जीवो के समूह तथा जाति नाम कर्म के उदय से प्राप्त हुई जीव की एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय रूप पर्याय को जाति कहते है।

एकेन्द्रिय – जिसके सिर्फ स्पर्श इन्द्रिय ही हो, जैसे - मिट्टी, पानी, अग्नि, वायु, और वनस्पति के जीव।

वेइन्द्रिय – जिन जीवो मे स्पर्श, रसना (जिव्हा) ये दो इन्द्रिया हो, जैसे - सीप, शख, जोक, अलसिया (वर्षा के समय उत्पन्न जीव) आदि।

तेइन्द्रिय – जिन जीवो मे स्पर्श, रसना, घ्राण और (नासिका) ये तीन इन्द्रिया हो, जैसे –जू, लीख, चींटी, कुथवा, खटमल आदि।

चउरिन्द्रिय – जिन जीवाले के स्पर्श, रसना, घ्राण एव चक्षु ये चार इन्द्रिया हो, जैसे–मक्खी, मच्छर, भवरा, पतगिया, बिच्छु आदि।

पंचेन्द्रिय – जिन जीवो मे स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत ये पॉच इन्द्रिया हो जैसे - नारकी देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि।

तीसरे बोले काया 6 – पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय।

प्रश्न – काय किसे कहते हैं ?

उत्तर - काया का अर्थ समुदाय है, पुद्गलो का समुदाय होने से शरीर, पृथ्वी को भी काया कहते है।

पृथ्वीकाय - पृथ्वी ही जिन जीवो का शरीर है, जैसे-मिट्टी, हिगलु, हडताल, पत्थर, नमक, धातु, हीरा, पन्ना आदि।

अपकाय - पानी ही जिन जीवो का शरीर है, जैसे-बरसात, ओस, धुअर, कुआ, बावडी, समुद्र आदि का पानी।

तेउकाय - अग्नि ही जिन जीवो का शरीर है, जैसे-झाल की अग्नि, बिजली की अग्नि, उल्कापात आदि।

वाउकाय - हवा ही जिन जीवो का शरीर है, जैसे-उक्कलिया, वायु, मडलिया वायु, धनवायु, तनवायु पूर्वादि की वायु आदि।

वनस्पति - वनस्पति ही जिन जीवो का शरीर है, जैसे - वृक्ष, लता, फल, फूल, शाक, भाजी गेहूँ, धान आदि।1 बादर वनस्पति के दो भेद - **प्रत्येक और साधारण** एक शरीर मे एक जीव हो उसे 'प्रत्येक' कहते हैं। जैसे आम, अंगूर, मुग, मोठ, बड, पीपल, गेहूँ, धान। **जिन जीवों के आहार, आयु, श्वासोच्छ्वास और काय ये साधारण (समान अथवा एक) हो उसको साधारण वनस्पति कहते हैं। जैसे जमीकंद, काई, उगता हुआ अंकुरादि।**

त्रसकाय - त्रसनामकर्म के उदय से एक शरीर के आश्रित अनन्त जीव हो, जो जीव सर्दी, गरमी आदि से बचने के लिये चल-फिर सकते है, को त्रिस काय कहते हैं। जैसे बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय।

चौथे बोले इन्द्रियाँ 5 – श्रोतेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय

प्रश्न – इन्द्रियाँ किसे कहते हैं ?

उत्तर - इन्द्र का अर्थ आत्मा। जिसके माध्यम से छद्मस्थ आत्मा शब्द, रुप, रस, गध, स्पर्श का ज्ञान कराती है, उसे इन्द्रिय कहते है।

पॉचवें बोले पर्याप्ति 6 – आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, श्वासोश्वास पर्याप्ति भाषा पर्याप्ति और मनः पर्याप्ति

प्रश्न – पर्याप्ति किसे कहते है ?

उत्तर - आहारादि के पुद्गलो को ग्रहण करने तथा उन्हे आधार शरीरादि रुप मे परिमणाने की आत्म शक्ति विशेष को पर्याप्ति कहते है।

छठे बोले प्राण 10 – 1. श्रोतेन्द्रिय बलप्राण 2. चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण, 3. घ्राणेन्द्रिय बलप्राण, 4. रसनेन्द्रिय बलप्राण 5. स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण, 6. मनोबलप्राण, 7. वचन बलप्राण, 8 काय बलप्राण, 9. श्वासोश्वास बलप्राण 10. आयुष्य बलप्राण

प्रश्न – प्राण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसके सहारे से जीव जीवित रहे उन्हे प्राण कहते हैं। इन दस प्राणो मे मूल प्राण आयुष्य है, शेष प्राण इसके कार्य साधक है। यदि आयुष्य बल प्राण न रहे तो शेष सभी प्राण निष्फल हो जाते हैं।

सातवें बोले शरीर 5 – औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तेजस् और कार्मण

प्रश्न – शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – जो समय-समय पर जीर्ण-शीर्ण होकर क्षीण होता जाता है, उसे शरीर कहते है।

प्रश्न – औदारिक शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – औदारिक शरीर नाम कर्म के उदय से प्राप्त शरीर तथा उदार-अर्थात् स्थूल पुद्गलो से बने हुए शरीर को औदारिक शरीर कहते है।

प्रश्न – वैक्रिय शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – वैक्रिय शरीर नामकर्म के उदय से प्राप्त शरीर को अर्थात् जिस शरीर से विविध क्रियाएँ (छोटे-बडे, एक अनेक आदि नाना प्रकार के रुप बनाने की शक्ति) होती है, तथा वैक्रिय पुद्गलो से बना होता है, उसे ''वैक्रिय शरीर'' कहते है।

प्रश्न – आहारक शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – आहारक शरीर नाम कर्म के उदय से प्राप्त, आहारक पुद्गलो से बना हुआ शरीर आहारक कहलाता है।

प्रश्न – आहारक शरीर कौन, कब और कैसा बनाते हैं ?

उत्तर – आहारक लब्धि से युक्त छट्ठे गुणस्थान वर्ती 14 पूर्व धारी मुनिराज प्राणी दया, तीर्थकरो की ऋद्धि का दर्शन सूक्ष्म पदार्थों को समझने एव सशय निवारण इन चार कारणो से मूल शरीर से एक हाथ प्रमाण अति विशुद्ध स्फटिक के समान निर्मल आहारक पुद्गलो का पुरुषाकार पुतला निकालते है। इसकी

अवगाहना जघन्य देशोन एक हाथ, उत्कृष्ट परिपूर्ण एक हाथ की होती है।

प्रश्न – तैजस शरीर किसे कहते है ?

उत्तर – तैजस् शरीर नामकर्म के उदय से तैजस पुद्गलो से बना शरीर तैजस शरीर कहलाता है। यह उष्मारुप और आहार को पचाकर उसे रसादि मे परिणत करने मे सहायक है व तेजोलब्धि का हेतु है।

प्रश्न – कार्मण शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर – कार्मण शरीर नामकर्म के उदय से प्राप्त शरीर को कार्मण शरीर कहते है, अर्थात् जीव के प्रदेशो के साथ लगे हुए आठ प्रकार के कर्म पुद्गलो को कार्मण शरीर कहते है। तैजस् व कार्मण ये दो शरीर सभी ससारी जीवो मे होते है।

आठवें बोले योग 15 – 1. सत्य मनोयोग, 2. असत्य मनोयोग, 3. मिश्र मनोयोग, 4 व्यवहार मनोयोग, 5. सत्यभाषा, 6 असत्य भाषा, 7 मिश्र भाषा, 8 व्यवहार भाषा, 9. औदारिक 10 औदारिक मिश्र, 11. वैक्रिय, 12. वैक्रिय मिश्र 13 आहारक 14. आहारक मिश्र 15 कार्मण।

प्रश्न – योग किसे कहते हैं ?

उत्तर – मन, वचन, काया की प्रवृत्ति को योग कहते है।

नौवें बोले उपयोग 12 – पाँच ज्ञान – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन. पर्यायज्ञान और केवलज्ञान।

तीन अज्ञान – मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंगज्ञान।

चार दर्शन – चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन और

केवलदर्शन।

प्रश्न - उपयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - ज्ञान, दर्शन मे होती हुई आत्म-प्रवृत्ति को उपयोग कहते हैं।

दसवें बोले 8 कर्म

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य नाम, गोत्र और अन्तराय

प्रश्न - कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और योग के निमित्त से जिन कार्मण वर्गणा रुप पुद्‌गलो का आत्मा के साथ बध होता है, उसे कर्म कहते ह। इसके 8 भेद है।

1. ज्ञानावरणीय कर्म - जो कर्म आत्मा के ज्ञान गुण को ढॉकता है।
2. दर्शनावरणीय कर्म - जो आत्मा के देखने की शक्ति को ढॉकता है।
3. वेदनीय कर्म - जिस कर्म के फल से सुख-दुख भोगा जाता है।
4. मोहनीय कर्म - जिस कर्म से आत्मा धर्म से विमुख हो, पाप में प्रवृत हो, क्रोध, मान, माया और लोभ में समय व्यतीत करे, जिससे आत्मा मोहित (सत्, असत् के ज्ञान से शून्य) हो जाए।
5. आयुकर्म - जिस कर्म के उदय से जीव चार गतियो मे रुका रहे।
6. नामकर्म - जिस कर्म से आत्मा गति आदि नाना पर्यायो का अनुभव करे (शरीर आदि बने या जो जीव के अमूर्तत्व गुण को प्रगट न होने दे।

7. गौत्रकर्म - जिस कर्म से जीव ऊँच-नीच कुलो मे उत्पन्न हो।

8 अंतराय कर्म - जिस कर्म से दान, लाभ, भोग, उपयोग और वीर्य मे विघ्न उपस्थित हो जाते है।

ग्यारहवें बोले गुणस्थान 14 - 1. मिथ्यात्व गुणस्थान, 2. सास्वादन गुणस्थान 3 मिश्र गुणस्थान 4. अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थान 5. देशविरति श्रावक गुणस्थान, 6. प्रमादी साधु गुणस्थान, 7. अप्रमादी साधु गुणस्थान 8. नियट्टि बादर गुणस्थान 9. अनियट्टि बादर गुणस्थान, 10. सूक्ष्म संपराय गुणस्थान 11. उपशांत मोहनीय गुणस्थान 12. क्षीण मोहनीय गुणस्थान 13. सयोगी केवली गुणस्थान 14. अयोगी केवली गुणस्थान

प्रश्न - जीवो की क्रमशः उन्नत अवस्थाओं को जैन शास्त्र मे क्या कहते है ?

उत्तर - गुणस्थान।

प्रश्न - गुणस्थान की परिभाषा क्या है ?

उत्तर - मोह कर्म के क्षय उपशम और क्षयोपशम से तथा योग (मन, वचन और काय की प्रवृत्ति) के निमित्त से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग् चारित्र रूप आत्मा के गुणो मे जो तरतम भाव आता है, उसको गुणस्थान कहते है।

बारहवें बोले पॉच इन्द्रियों के तेईस विषय

श्रोतेन्द्रिय के तीन विषय - जीव शब्द, अजीव शब्द और मिश्र शब्द।

※ ये तीन शुभ और 3 अशुभ, इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष इस प्रकार 12 विकार।

चक्षुरिन्द्रिय के पॉच विषय - काला, नीला, लाल, पीला और सफेद।

✻ ये पॉच सचित्त , 5 अचित्त, 5 मिश्र, ये 15 शुभ 15 अशुभ । इन 30 पर राग और 30 पर द्वेष। इस प्रकार 60 विकार।

घ्राणेन्द्रिय के दो विषय - सुरभिगध, दुरभिगंध।

✻ ये 2 सचित्त, 2 अचित्त, 2 मिश्र इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष, इस प्रकार 12 विकार।

रसनेन्द्रिय के पॉच विषय - तीखा, कडवा, कषायला, खट्टा और मीठा।

✻ ये 5 सचित्त, 5 अचित्त, 5 मिश्र ये 15 शुभ और 15 अशुभ 30 पर राग और 30 पर द्वेष। इस प्रकार 60 विकार।

स्पर्शनेन्द्रिय के आठ विषय - कर्कश, कोमल, लघु, गुरु, उष्ण, शीत, रुक्ष और स्निग्ध।

ये 8 सचित, 8 अचित, 8 मिश्र ये 24 शुभ और 24 अशुभ। 48 पर राग, 48 पर द्वेष, इस प्रकार 96 विकार।

प्रश्न - विषय किसे कहते हैं ?

उत्तर - इन्द्रियो के द्वारा जीव जिन शब्द, रूप आदि को ग्रहण करता है, उसे विषय कहते है।

प्रश्न - विकार किसे कहते हैं ?

उत्तर - विषयो पर राग-द्वेष की प्रवृत्ति को विकार कहते हैं।

तेरहवें बोल मिथ्यात्व के 10 भेद - 1. जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व 2. अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व 3. धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व 4. अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व 5. साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 6.असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व 7. संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 8. मोक्ष के मार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 9. आठ कर्मो से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व

10 आठ कर्मो से अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व।

प्रश्न - मिथ्यात्व किसे कहते है ?

उत्तर - मिथ्यात्व मोहनीय के उदय से जीव, अजीव आदि जो तत्व जैसे है, वैसा नहीं मानना न्यूनाधिक मानना तथा विपरीत मानना मिथ्यात्व है।

चौदहवें बोले छोटी नवतत्त्व के 115 भेद

नव तत्वो के नाम - 1.जीव तत्व, 2 अजीव तत्व, 3 पुण्य तत्व, 4 पाप तत्व 5. आश्रव तत्व, 6 सवर तत्व, 7. निर्जरा तत्व, 8. वंध तत्व, 9. मोक्ष तत्व।

नव तत्वो के भेद - जीव के 14, अजीव के 14, पुण्य 9, पाप के 18, आस्रव के 20, सवर के 20, निर्जरा के 12, बध के 4, मोक्ष के 4, कुल मिलाकर 115 भेद हुए।

प्रश्न - तत्व किसे कहते है ?

उत्तर - वस्तु के (जीव, अजीव आदि के) वास्तविक स्वरूप को तत्व कहते है।

जीव के 14 भेद

सूक्ष्म एकेन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
बादर एकेन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
द्वीन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
त्रीन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
चतुरिन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
असन्नी पचेन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त
सन्नी पंचेन्द्रिय के दो भेद	अपर्याप्त और पर्याप्त

प्रश्न - जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो द्रव्य प्राण और भाव प्राण को धारण करता है अर्थात् चेतन लक्षण से युक्त है उसे जीव कहते है।

प्रश्न - सूक्ष्म जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर - सूक्ष्म नाम कर्म के उदय से जो सूक्ष्म पृथ्वी, पानी आदि शरीर धारी जीव है, उनको सूक्ष्म जीव कहते है। ये सारे लोक मे व्याप्त है। उनकी आयु पूर्ण होने पर ही उनकी मृत्यु होती है। उनको कोई किसी भी शस्त्र से नहीं मार सकता। आग उन्हे जला नहीं सकती और न ही पानी गला सकता है। असख्यात सूक्ष्म पृथ्वी कायिक आदि जीवो के शरीर इकट्ठे हो जाने पर भी छद्मस्थ को दिखाई नहीं देते है। केवलज्ञानी ही इन्हे देख सकते है। सूक्ष्म नाम कर्म का उदय एकेन्द्रिय मे ही होता है।

प्रश्न - बादर एकेन्द्रिय किसे कहते हैं ?

उत्तर - बादर नाम कर्म के उदय से जो स्थूल शरीरधारी जीव हैं, उनको बादर एकेन्द्रिय कहते है। वे सारे लोक मे व्याप्त नहीं है। वे आख से या यत्र की सहायता से देखे जा सकते है। उन पर शस्त्र का प्रभाव पडता है। वे दूसरो के लिये भी अनुकूल प्रतिकूल होते है। पृथ्वी, पानी, वनस्पतिकाय आदि पाचो स्थावरो मे वे होते है। सचित्त मिट्टी, पानी, लीलोतरी आदि के रूप मे जिनका शरीर हम प्रतिदिन देखते है, वे बादर एकेन्द्रिय जीव है। एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म और बादर दोनो ही होते हैं। किन्तु बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय एव पचेन्द्रिय सभी जीव बादर ही होते है।

प्रश्न - पर्याप्त और अपर्याप्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस जीव मे जितनी पर्याप्तियॉ कही गई है, उन सभी पर्याप्तियो को पूर्ण कर लेने पर वह जीव पर्याप्त कहलाता है। एकेन्द्रिय

जीव को आहार, शरीर इन्द्रिय और श्वासोच्छ्वास मे ये चार पर्याप्तियॉ होती है। जब जीव इनको पूरा कर लेता है, तब वह पर्याप्त कहलाता है तथा स्व प्रायोग्य पर्याप्तियो को जब तक पूर्ण नहीं कर लेता है तब तक अपर्याप्त कहलाता है। ऐसे ही द्वीन्द्रियादि जीवो मे भी समझना।

प्रश्न - संज्ञी और असंज्ञी किसे कहते है ?

उत्तर - जो मन वाले है, उनको सज्ञी कहते है। मन पचेन्द्रिय जीवो के ही होता है। जैसे गर्भज मनुष्य, गर्भज तिर्यञ्च देवता तथा नारकी जीव। जिन जीवो के मन नहीं होता है उनको असज्ञी कहते है। जैसे एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, सम्मूर्च्छिम मनुष्य एव बिना गर्भ से उत्पन्न तिर्यच पचेन्द्रिय जीव।

अजीव के 14 भेद

धर्मास्तिकाय के तीन भेद - (1) स्कध (2) स्कध का देश ओर (3) प्रदेश।

अधर्मास्तिकाय के तीन भेद -(1) स्कध (2) स्कध का देश ओर (3) प्रदेश।

आकाशास्तिकाय के तीन भेद - (1) स्कध (2) स्कध का देश ओर (3) प्रदेश।

और दसवा काल। ये दस भेद अरूपी अजीव के होते हैं। रूपी पुद्गल के चार भेद हैं - (1) स्कध (2) स्कंध का देश (3) प्रदेश और (4) परमाणु पुद्गल। ये 14 भेद अजीव के होते हैं।

प्रश्न - अजीव किसे कहते है ?

उत्तर - जो सर्वथा चेतना शून्य जड हो उसे अजीव कहते हैं।

प्रश्न - धर्मास्तिकाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव और पुद्गल जिस द्रव्य की सहायता से हलन-चलन करते है, उस द्रव्य का नाम धर्मास्तिकाय है, जैसे मछली के हलन-चलन मे पानी सहायक होता है अथवा पटरी रेल के चलने मे सहायक होती है। यह द्रव्य चलने की प्रेरणा नहीं देता है, परन्तु स्वभावत गति परिणत जीवो और पुद्गलो का सहायक होता है।

प्रश्न - अधर्मास्तिकाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव और पुदगलो की स्थिति मे सहायक द्रव्य का नाम अधर्मास्तिकाय है, जैसे थके हुए पथिक को ठहरने मे छाया उपकारक होती है। यह द्रव्य स्थिर होने के लिए विवश नहीं करता, परन्तु स्थिर होते हुए पदार्थ का सहायक हो जाता है।

प्रश्न - आकाशास्तिकाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो सब द्रव्यो को जगह (स्थान) देता है उसे आकाशास्तिकाय कहते है। जैसे दूध, शक्कर को और पानी नमक को स्थान देता है। इसके दो भेद होते है - लोकाकाश और अलोकाकाश। लोकाकाश मे सभी द्रव्य रहे हुए है जबकि अलोकाकाश मे आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य नहीं है क्योकि हलन-चलन मे सहायक करने वाला धर्मास्तिकाय द्रव्य लोकाकाश तक ही सीमित है।

प्रश्न - आकाशास्तिकाय के कितने भेद हैं ?

उत्तर - आकाश तो अनादि अनंत अखड एक द्रव्य है, लेकिन लोकाकाश (जहाँ सभी द्रव्य रहते है) और अलोकाकाश (सिर्फ आकाश) की अपेक्षा इसके दो भेद है।

प्रश्न – काल द्रव्य किसे कहते है ?

उत्तर - जो द्रव्यो के परिणमने मे सहायक हो अर्थात् नये-पुराने, छोटे-बडे आदि की पहचान जिस द्रव्य से होती है, उसे काल द्रव्य कहते है। समय, आवलिका मुहूर्त, प्रहर, दिन-रात, मास, वर्ष आदि व्यवहार इसी द्रव्य के आधार से किये जाते है।

प्रश्न – काल द्रव्य को अस्तिकाय क्यो नही कहा जाता है ?

उत्तर - जिस द्रव्य के भेद हो सकते है, उसे ही अस्तिकाय कहा जाता है। लेकिन काल स्वतत्र द्रव्य नहीं है, वह परपदार्थ सापेक्ष है यथा सूर्य के चलने से, घडी का काटा घूमने से काल का ज्ञान होता है, यह अप्रदेशी है इसलिए आस्तिकाय नहीं है।

प्रश्न – अस्तिकाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - अस्ति अर्थात् प्रदेश, काय अर्थात् समूह। अर्थात् प्रदेशो के समूह को अस्तिकाय कहते है।

प्रश्न – पुद्गलास्तिकाय किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमे वर्ण, गध, रस, स्पर्श हो जो सडन-गलन स्वभाव वाला हो उसे पुद्गल कहते है तथा पुद्गलो के समूह को पुद्गलास्तिकाय कहते है। ससार मे हम जिन पदार्थो को देखते है, वे सब पुद्गल है। सडना-गलना बिखरना और एकत्रित होना, ये सब क्रियाएँ पुद्गलो मे होती है। जब तक जीव के साथ इसका सम्बन्ध बना रहा है, तब तक इनके साथ सचित्त का व्यवहार किया है। जीव के सम्बन्ध छूटते ही ये अपने असली स्वरूप मे अचित्त रह जाते है, जैसे-निर्जीव शरीर। यह द्रव्य ससारी जीवो की प्रवृत्तियो मे विशेष सहायक होता है।

प्रश्न - प्रदेश किसे कहते हैं ?

उत्तर - प्रदेश वह सूक्ष्म भाग कहलाता है, जिसके दूसरे भाग की कल्पना भी न की जा सकती हो और स्कध के साथ अवयव रूप से मिला हुआ हो।

अनेक प्रदेश मिल के देश कहलाते है और अनेक देशो का समूह स्कन्ध कहलाता है। देश भी स्कन्ध से मिले हुए ही होते है, स्वतत्र नहीं रहते।

प्रश्न - परमाणु किसे कहते हैं ?

उत्तर - पुद्गल के अति सूक्ष्म भाग को, जिसका फिर हिस्सा न किया जा सके, उसे परमाणु कहते है। परमाणु और प्रदेश मे यही अन्तर है कि प्रदेश अपने देश और स्कध से मिले हुए होते है जबकि परमाणु उससे पृथक होता है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के प्रदेश पृथक नहीं हो सकते है। अत इन द्रव्यो मे परमाणु नहीं कहा गया है। रूपी अजीव द्रव्य मे ही परमाणु होते है। किन्तु हम ऑख से या किसी यत्र के सहारे से इसे नहीं देख सकते है।

पुण्य के 9 भेद

1. अन्न पुण्य – अन्न देने से पुण्य होता है। **2. पान पुण्य** – पानी देने से पुण्य होता है। **3. लयन पुण्य** – जगह देने से पुण्य होता है। **4. शयन पुण्य** – शय्या, पाट, पाटला आदि देने से पुण्य होता है। **5. वस्त्र पुण्य** – वस्त्र देने से पुण्य होता है। **6. मन पुण्य** – शुभ मन रखने से पुण्य होता है। **7 वचन पुण्य** – शुभ वचन बोलने से पुण्य होता है। **8. काय पुण्य** – शरीर द्वारा सेवा तथा विनय करने से पुण्य होता है। **9. नमस्कार पुण्य** – गुणवान को नमस्कार करने से पुण्य होता है।

प्रश्न - पुण्य किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो आत्मा को पवित्र करे और जिससे प्राणियो को सुख की प्राप्ति हो, उसे पुण्य कहते है। यह शुभ योगो से बधता है।

पाप के 18 भेद

1 **प्राणातिपात** – जीवो की हिसा करना। 2 **मृषावाद** – झूठ बोलना 3 **अदत्तादान** – चोरी करना। 4. **मैथुन** – कुशील सेवन करना। 5 **परिग्रह** – धन-सग्रह की लालसा करना। 6 **क्रोध** – रोष करना। 7 **मान** – अहकार करना। 8. **माया** – छल-कपट करना। 9 **लोभ** – लालच, तृष्णा बढाना 10. **राग** – स्नेह, प्रीति करना। 11 **द्वेष** – बैर 12 **कलह** – क्लेश करना 13 **अभ्याख्यान** – झूठा कलक चढाना 14 **पैशुन्य** – चुगली करना। 15 **पर-परिवाद** – दूसरो की निदा करना। 16. **रति-अरति** – मनोज्ञ वस्तुओ पर प्रसन्न होना और अमनोज्ञ वस्तुओ पर नाराज होना। 17. **माया-मृषावाद** – छल-कपट के साथ झूठ बोलना। 18. **मिथ्यादर्शन शल्य** – कुदेव, कुगुरु और कुधर्म पर श्रद्धा रखना।

प्रश्न - पाप किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो आत्मा को मलिन करे, जो अशुभ योगो से बधे और दु ख पूर्वक भोगा जाय उसे पाप कहते है।

आस्रव के 20 भेद

1 **मिथ्यात्व** – असत्य विचार करे तो आस्रव। 2. **अव्रत** – प्रत्याख्यान नहीं करे तो आस्रव। 3. **प्रमाद** – पाच प्रमाद का सेवन करे, सो आस्रव। 4 **कषाय** – क्रोध, मान, माया और लोभ का सेवन करे सो आस्रव। 5. **अशुभयोग** – मन, वचन और काया द्वारा अशुभ प्रवृत्तियाँ करे सो आस्रव। 6. **प्राणितिपात** – जीव हिसा करे सो आस्रव। 7. **मृषावाद** – झूठ बोले सो आस्रव । 8. **अदत्तादान** – चोरी करे सो आस्रव। 9. **मैथुन** – कुशील

सेवे सो आस्रव। **10. परिग्रह** – धन सग्रह करे सो आस्रव। **11. श्रोत्रेन्द्रिय** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **12. चक्षुरेन्द्रिय** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **13. घ्राणेन्द्रिय** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **14. रसनेन्द्रिय** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **15. स्पर्शनेन्द्रिय** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **16 मन** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **17 वचन** – वश मे नहीं रखे सो आस्रव। **18. काया** – वश मे नही रखे सो आस्रव। **19. भंड** – उपकरण अयतना से लेवे और रखे सो आस्रव। **20. सुई** – कुशाग्र मात्र कोई भी वस्तु अचेतना से लेवे और रखे सो आस्रव।

प्रश्न – आस्रव तत्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस क्रिया द्वारा आत्मा मे शुभ, अशुभ कर्म आते हैं उसे आस्रव कहते है। जीव रुपी तालाब मे कर्म रूपी पानी आस्रव रूप नालो द्वारा आता है।

संवर के 20 भेद

1 समकित सवर। **2. व्रत पच्चक्खाण** करे, सो सवर। **3. प्रमाद** नहीं करे, सो सवर। **4. कषाय** नहीं करे, सो संवर। **5. शुभयोग** प्रवर्तावे सो सवर। **6. प्राणातिपात** – जीव हिसा न करे, सो सवर। **7. मृषावाद** – झूठ नहीं बोले, सो सवर। **8. अदत्तादान** – चोरी नहीं करे, सो सवर। **9 मैथुन** – कुशील नहीं सेवे, सो सवर। **10. परिग्रह** – मूर्च्छा सग्रह नहीं रखे, सो सवर। **11. श्रोत्रेन्द्रिय** – वश मे करे, सो सवर। **12. चक्षुरिन्द्रिय** – वश मे करे, सो सवर। **13. घ्राणेन्द्रिय** – वश मे करे, सो संवर। **14. रसनेन्द्रिय** – वश मे करे, सो संवर। **15. स्पर्शनेन्द्रिय**– वश मे करे, सो सवर। **16. मन** – वश मे करे, सो संवर। **17. वचन** – वश मे करे, सो संवर। **18. काया** – वश मे करे, सो सवर। **19. भंड** – उपकरण यतना से लेवे और रखे, सो संवर। **20. सुई** – कुशाग्र मात्र यतना से लेवे और

यतना से रखे सो, सवर।

प्रश्न - संवर किसे कहते है ?

उत्तर - जिस क्रिया द्वारा आत्मा मे शुभ-अशुभ कर्मो का आना रुकता है, उसे सवर कहते है। जीव रुपी तालाब मे आस्रव रुप नालो द्वारा आता हुआ कर्म रूपी पानी सम्यक्त्व, व्रत, प्रत्याख्यानादि द्वारा रुकता है।

निर्जरा के 12 भेद

1 **अनशन** (उपवास करना) 2 **ऊनोदरी** (कम खाना), 3.**भिक्षाचर्या** (साधुवृत्ति के अनुसार भिक्षा मागना) 4 **रस-परित्याग** (घृतादि का त्याग), 5 **कायक्लेश** (आसनादि लगाना) 6 **प्रतिसलीनता** (इन्द्रियो को वश मे करना) 7. **प्रायश्चित** (दण्ड लेना) 8. **विनय** (विनय करना) 9 **वैयावृत्य** (सेवा करना) 10 **स्वाध्याय** (पढाना-पढना) 11. **ध्यान** (योगाभ्यास करना) 12. **कायोत्सर्ग** (काया को ध्यान मे स्थिर रखना)

प्रश्न - निर्जरा किसे कहते है ?

उत्तर - आत्मा पर लगे हुए कर्मो का आशिक रूप से नष्ट होना निर्जरा है। उपवासादि 12 प्रकार के तप से आत्मा निर्मल बन कर सिद्धि को प्राप्त कर लेती है। निर्जरा के दो भेद- सकाम और अकाम। सकाम निर्जरा ही मुक्ति को प्राप्त करने मे सहायक बनती है।

बंध के 4 भेद

1 प्रकृति बध 2. स्थिति बध 3. अनुभाग बध 4. प्रदेश बंध

प्रश्न - बंध तत्व किसे कहते हैं ?

उत्तर - कषाय व योग के कारण आत्मा के साथ कर्म पुद्‌गलो के मिलने

को बध कहते है। जैसे- दूध और पानी, लोहपिण्ड और अग्नि एकमेक हो जाते है, वैसे ही आत्मप्रदेश आठ कर्मो के स्वभाव को **प्रकृति बंध** कहते है। आठ कर्मो के काल परिमाण को **स्थिति बंध** कहते है। आठ कर्मो के तीव्र मंदादि रस को **अनुभाग बंध** कहते है। कर्म पुद्गलो के दल का आत्मा के साथ वध होना **प्रदेश बंध** कहलाता है।

प्रकृति बंध और **प्रदेश बंध** का कारण योग है तथा **स्थिति वंध** और **अनुभाग बंध** का कारण कषाय ।

मोक्ष के 4 भेद

1. सम्यक् दर्शन 2. सम्यक् ज्ञान 3. सम्यक् चारित्र और 4 सम्यक् तप।

सम्यक् दर्शन - जिनेश्वर भगवान के वचनो पर शुद्ध श्रद्धा रखना।

सम्यक् ज्ञान - श्रद्धापूर्वक सच्चे ज्ञान को सम्यक् ज्ञान कहते हैं।

सम्यक् चारित्र - दर्शन और ज्ञान पूर्वक सत् आचरण करना।

सम्यक् तप - आत्मशुद्धि के लिए विशिष्ट अनुष्ठान करना।

प्रश्न - मोक्ष किसे कहते हैं ?

उत्तर - जब आत्मा सर्वथा कर्म रहित होकर जन्म-मरण के वंधन से मुक्त हो जाती है उसे मोक्ष कहा जाता है। मोक्ष दशा मे न शरीर रहता है और न शरीर मे काम आने वाले संसारी भोग ही रहते है। उस समय यही जीव आत्मा परमात्मा वन जाता है। निर्जरा मे कर्मो का नाश अधूरा रहता है, जवकि मोक्ष मे कर्मो का पूर्णतया नाश हो जाता है। यही इन दोनो मे भेद है।

पन्द्रहवें बोले आत्मा 8

1.द्रव्य आत्मा 2.कषाय आत्मा 3 योग आत्मा 4.उपयोग आत्मा 5.ज्ञान आत्मा 6 दर्शन आत्मा 7.चारित्र आत्मा 8 वीर्य आत्मा

1 द्रव्य आत्मा - त्रिकालवर्ती, असख्य प्रदेशी, द्रव्य रूप आत्मा।

2 कषाय आत्मा - क्रोध, मान, माया, लोभ रूप कषाय युक्त आत्मा।

3 योग आत्मा - मन, वचन और काया रूप योग युक्त आत्मा।

4. उपयोग आत्मा - पाच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शन रूप उपयोग विशिष्ट आत्मा।

5. ज्ञान आत्मा - मतिज्ञानादि (साकारोपयोग) रूप ज्ञान युक्त आत्मा।

6. दर्शन आत्मा - चक्षुदर्शनादि (निराकारोपयोग) रूप दर्शन युक्त आत्मा।

7. चारित्र आत्मा - सामायिक चारित्र आदि रूप चारित्र विशिष्ट आत्मा।

8 वीर्य आत्मा - उत्थान रूप वीर्य युक्त आत्मा।

प्रश्न - आत्मा किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो ज्ञानादि पर्यायो मे निरन्तर गमन करे उसे आत्मा कहते है।

सोलहवें बोले दण्डक 24

सात नारकी का एक दंडक। सात नारकी के नाम धम्मा, वंशा, शीला, अंजणा, रिट्ठा, मघा और माघवई।

इनके गोत्र-रत्ना-प्रभा, शर्करा-प्रभा, बालुका-प्रभा, पंक-प्रभा, धूम-प्रमा, तम:-प्रभा और तमस्तम:-प्रभा।

दस भवनपतियों के दस दंडक उनके नाम - 1.असुरकुमार 2.नागकुमार 3. सुवर्णकुमार, 4. विद्युतकुमार, 5. अग्निकुमार, 6. द्वीपकुमार, 7. उदधिकुमार 8. दिशाकुमार, 9 पवनकुमार, 10. स्तनितकुमार।

पांच स्थावरों के पांच दण्डक। पांच स्थावरो के नाम पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय।

तीन विकलेन्द्रिय के तीन दण्डक- तीन विकलेन्द्रियो के नाम - द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय।

तिर्यच पंचेन्द्रिय का एक दण्डक, मनुष्य का एक दण्डक, वाणव्यन्तर देवता का एक दण्डक, ज्योतिषी देवता का एक दण्डक, वैमानिक देवता का एक दण्डक। ये सब चौबीस दण्डक हुए। (1+10+5+3+1+1+1+1+1 = 24)।

प्रश्न - दण्डक किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपने किये गये कर्मो का जहॉ दण्ड भोगा जाता है, वे स्थान दण्डक कहे जाते है।

प्रश्न - विकलेन्द्रिय किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिनकी पॉचो इन्द्रियॉ पूरी न मिली हो। जैसे बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय आदि कहीं-कहीं एकेन्द्रिय को भी विकलेन्द्रिय माना गया है।

प्रश्न - तिर्यच पंचेन्द्रिय किसे कहते हैं ?

उत्तर - तिर्यच गति वाले ऐसे जीव, जिन्हें पॉचो इन्द्रियॉ पूरी मिली हो। जैसे मछली, पशु, पक्षी, सर्प, नेवला आदि।

सत्रहवें बोले लेश्या 6

1 कृष्ण लेश्या 2. नील लेश्या 3. कापोत लेश्या 4. तेजो लेश्या, 5 पद्म लेश्या, 6 शुक्ल लेश्या।

प्रश्न - लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर - आत्मा के शुभाशुभ परिणामो को लेश्या कहते है।

छह लेश्या का दृष्टान्त

यदि जामुन के वृक्ष पर फल लगे हुए हो और उनको खाने की इच्छा हो तो कृष्ण लेश्या वाला वृक्ष की जड काटकर फल खाना चाहेगा। नील लेश्या वाला बडी-बडी शाखाये काटकर फल खाना चाहेगा, कापोत लेश्या वाला छोटी-छोटी शाखाएँ काटकर फल खाना चाहेगा। तेजोलेश्या वाला फलो के गुच्छे तोडकर फल खाना चाहेगा। पद्म लेश्या वाला सिर्फ पके हुए फलो को तोडकर खाना चाहेगा। शुक्ल लेश्या वाला धरती पर पडे हुए फल खाकर ही सतोष कर लेगा।

इन छह लेश्याओ मे पहले की तीन अशुभ और अधर्म लेश्याएँ है। इन लेश्याओ मे अशुभ गति का बध पडता है। शेष तीन लेश्याये शुभ व धर्म-लेश्याये है। इन लेश्याओ मे शुभ गति का बध पडता है।

अठारहवें बोले दृष्टि 3

1. सम्यक् दृष्टि 2 मिथ्या दृष्टि 3 सम्यक्-मिथ्या दृष्टि।

प्रश्न - दृष्टि किसे कहते हैं ?

उत्तर - यद्यपि दृष्टि शब्द का अर्थ नेत्र ज्योति या देखने की शक्ति होता है, परन्तु प्रस्तुत प्रकरण मे दृष्टि का अर्थ मान्यता या सिद्धान्त है। देव, गुरु धर्म एव जीवादि तत्व विषयक श्रद्धाविशेष को

दृष्टि कहते है।

सम्यक् दृष्टि – वीतराग देव की वाणी पर अखण्ड श्रद्धा रखने वाला।

मिथ्या दृष्टि – वीतराग वाणी को देशत या सर्वत मिथ्या मानता है।

मिथ्या दृष्टि – वीतराग वाणी के प्रति न रुचि हो न अरुचि हो।

उन्नीसवें बोले ध्यान 4

1.आर्तध्यान 2. रौद्र ध्यान 3. धर्म ध्यान और 4. शुक्ल ध्यान

प्रश्न – ध्यान किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक वस्तु या विषय पर मन को स्थिर करना। पहले के दोनो ध्यान अशुभ है और शेष दोनो शुभ है।

बीसवें बोले षट्द्रव्यों के 30 भेद

षट् द्रव्य के नाम :- 1.धर्मास्तिकाय 2.अधर्मास्तिकाय 3 आकाशास्तिकाय 4 काल द्रव्य 5. जीवास्तिकाय 6 पुद्गलास्तिकाय। सभी को 5 बोलो से जाना जाता है।

1. धर्मास्तिकाय के 5 भेद

धर्मास्तिकाय के पॉच बोलो से जाना जाता है- 1 द्रव्य से एकद्रव्य 2 क्षेत्र से-सम्पूर्ण लोक प्रमाण 3 काल से-आदि अत रहित 4 भाव से-वर्ण, गध, रस और स्पर्श रहित, अर्थात् अरूपी अजीव शाश्वत सर्वव्यापी और असख्यात प्रदेशी है। 5 गुण से – चलन गुण। पानी मे मछली का दृष्टांत। जैसे पानी के आधार से मछली चलती है वैसे ही जीव और पुद्गल

दोनो धर्मास्तिकाय के आधार से चलते है।

2. अधर्मास्तिकाय के 5 भेद

अधर्मास्तिकाय को 5 बोलो से जाना जाता है। **1. द्रव्य से** – एक द्रव्य। **2. क्षेत्र से** - सम्पूर्ण लोक प्रमाण। **3. काल से** - आदि अत रहित। **4 भाव से** - वर्ण नही, गध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी अजीव शाश्वत सर्वव्यापी और असख्यात प्रदेशी है। **5. गुण से** - स्थिर गुण थके हुए पथिक को छाया का दृष्टात। जैसे थके हुए पथिक को छाया का आधार है, उसी तरह ठहरे हुए जीव और पुद्गल को अधर्मास्तिकाय का आधार है।

3. आकाशास्तिकाय के 5 भेद

आकाशास्तिकाय को 5 बोलो से जाना जाता है। **1 द्रव्य से** – एक द्रव्य। **2. क्षेत्र से**– लोकालोक प्रमाण। **3.काल से** – आदि अन्त रहित। **4. भाव से** – वर्ण, गध रस और स्पर्श रहित। अरूपी, अजीव शाश्वत सर्वव्यापी और अनन्त प्रदेशी है। **5 गुण से** – स्थान देने का गुण। भीत से खुँटी का दृष्टात। जैसे खुँटी को भींत स्थान देने मे सहायक है। वैसे ही धर्मास्तिकायादि पॉच द्रव्यो को आकाशस्तिकाय स्थान देने मे सहायक है।

4. काल के 5 भेद

काल द्रव्य को पॉच बोलो से जाना जाता है। **1. द्रव्य से** - अनन्त द्रव्य। **2. क्षेत्र से** - अढाई द्वीप प्रमाण। **3 काल से** – आदि अत रहित। **4 भाव से** – वर्ण, गध और स्पर्श रहित। अरूपी शाश्वत और अप्रदेशी है। **5. गुण से** – वर्तन गुण। नये को पुराना और पुराने का नष्ट करे। कपडे को

कैची का दृष्टात। प्रदेश रहित होने से काल अस्तिकाय नहीं है।

5. जीवास्तिकाय के 5 गुण

जीवास्तिकाय को 5 बोलो से जाना जाता है। **1. द्रव्य से** – अनन्त जीव द्रव्य। **2. क्षेत्र से** – सम्पूर्ण लोक प्रमाण। **3. काल से** – आदि अत रहित। **4. भाव से** – वर्ण, गध और स्पर्श रहित। अरूपी शाश्वत, सर्वव्यापी और अनन्त प्रदेशी है। एक आत्मा आश्रित शरीर व्यापी एव असख्यात प्रदेशी है। **5. गुण से**–उपयोग गुण। चन्द्रमा की कला का दृष्टात। जैसे आवरण के कारण चन्द्रमा न्यूनाधिक प्रकाशित है। वैसे ही ज्ञानवरणीयादि के कारण आत्मा का उपयोग गुण न्यूनाधिक प्रकट होता है।

6. पुद्गलास्तिकाय के 5 भेद

पुद्गलास्तिकाय को 5 बोलो से जाना जाता है। **1. द्रव्य से**– अनन्त द्रव्य। **2. क्षेत्र से**– सम्पूर्ण लोक प्रमाण। **3. काल से** – आदि अत रहित। **4. भाव से** - रूपी अर्थात् वर्ण, गंध, रस और स्पर्श युक्त। अजीव शाश्वत और सख्यात-असख्यात एव अनन्त प्रदेशी है। **5 गुण से** – पूरण गलन, सडन और विध्वसन गुण। बादल का दृष्टात। बादल की तरह पुद्गल भी मिलते और बिखरते है।

प्रश्न – द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर – भूत, भविष्य और वतर्मान तीनो काल मे रहने वाला गुण और पर्यायो का जो आधार होता है, उसे द्रव्य कहते है।

प्रश्न – लोक किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिसमे धर्मास्तिकाय आदि द्रव्य हो उसे लोक कहते है।

प्रश्न – अलोक किसे कहते है ?

उत्तर - जिसमे आकाश के सिवाय अन्य द्रव्य का अस्तित्व न हो उसे अलोक कहते है।

प्रश्न - गुण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो द्रव्य के आश्रित हो, द्रव्य के सब अशो मे हर समय हो उसे गुण कहते है।

इक्कीसवें बोले राशि 2

1. जीव राशि 2. अजीव राशि

प्रश्न - राशि किसे कहते हैं ?

उत्तर - समूह, वर्ग या ढेर को राशि कहते है। जीव राशि के 563 भेद और अजीव राशि के 560 भेद होते है।

बाईसवें बोले श्रावकजी के 12 व्रत

1 **पहले अहिंसा व्रत** मे श्रावकजी त्रस जीवो को मारे नही, मरावे नहीं, मन, वचन और काया से। त्रस जीवो को मारने का त्याग करे, स्थावर की मर्यादा करे।

2 **दूसरे सत्यव्रत** मे श्रावकजी-मोटा (स्थूल) झूठ बोले नहीं, बोलावे नही, मन वचन और काया से।

3 **तीसरे अचौर्य व्रत** मे श्रावकजी मोटी चोरी करे नहीं, करावे नहीं, मन, वचन और काया से।

4 **चौथे परदार-विवर्जन एवं स्वदार-सतोष व्रत** मे श्रावकजी पर-स्त्री का सेवन का त्याग करे और अपनी स्त्री मे मर्यादा करे।

5 **पांचवॉ परिग्रह परिमाण व्रत** मे श्रावकजी परिग्रह की मर्यादा करे।

6 **छठे, दिशा परिमाण व्रत** मे श्रावकजी छहो पूर्व, पश्चिम, उत्तर,

दक्षिण, ऊँची-नीची दिशाओ की मर्यादा करे।

7 **सातवे उपभोग, परिभोग, परिमाण, व्रत** मे श्रावकजी 26 बोल की मर्यादा करे और पन्द्रह कर्मादान का त्याग करे।

8 श्रावकजी अनर्थदण्ड का त्याग करे।

9 **नौवे सामायिक व्रत** मे श्रावकजी प्रतिदिन शुद्ध सामायिक करे।

10 **दसवे देशावकाशिक व्रत** मे श्रावकजी देशावकाशिक पौषध करे। दया करे, सवर करे, चौदह नियम चितारे।

11 **ग्यारहवें पौषधोपवास व्रत** मे श्रावकजी प्रतिपूर्ण पौषध करे।

12 **बारहवे अतिथि संविभाग व्रत** मे श्रावकजी प्रतिदिन चौदह प्रकार की वस्तुओ मे से जो निर्दोष हो, देवे।

तेइसवें बोले साधुजी के पांच महाव्रत

1 **अहिंसा महाव्रत** – पहले महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से जीव हिसा करे नहीं। करावे नही और करते हुए को भला जाने नही मन-वचन और काया से (तीन करण, तीन योग से)

2 **सत्य महाव्रत** – दूसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से झूठ बोले नहीं, बोलावे नही, बोलते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन और काया से (तीन करण, तीन योग से)

3 **अचौर्य महाव्रत** – तीसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से चोरी करे नहीं, करावे नही, करते हुए को भला जाने नहीं, मन, वचन और काया से (तीन करण, तीन योग से)

4. **ब्रह्मचर्य महाव्रत** – चौथे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं, सेवते हुए को भला जाने नहीं , मन, वचन और काया से (तीन करण, तीन योग से)

5. अपरिग्रह महाव्रत – पाचवे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से परिग्रह रखे नहीं, रखावे नहीं, रखते हुए को भला जाने नही, मन, वचन और काया से (तीन करण, तीन योग से)

प्रश्न – व्रत और महाव्रत में क्या अन्तर है।

उत्तर - गृहस्थ जीवन की मर्यादा मे रहकर अपनी शक्ति के अनुसार अहिसादि बारह अणुव्रतो का पालन व्रत कहलाता है। घर-बार को छोडकर सर्वथा निर्दोष रूप से अहिसादि व्रतो का पूर्ण पालन करना महाव्रत कहलाता है। श्रावक अणुव्रती कहलाता है और पच महाव्रतधारी साधु या साध्वी महाव्रती कहलाते है। सक्षेप मे कहा जाय तो दोषो की पूर्ण निवृत्ति को महाव्रत कहते है और आशिक निवृत्ति को अणुव्रत या देश विरति कहते है।

चौबीसवें बोले भांगा 49 का जाणपणा

नौ अंक 11, 12, 13, 21, 22, 23, 31, 32, 33, इसमे प्रथम अंक 'करण' और दूसरा अंक 'योग' रूप है।

11 अक एक ग्यारह का भंग उपजे नौ। एक करण एक योग से कहना।

1 करूगा नहीं मन से , 2 करूगा नहीं वचन से, 3 करूगा नहीं काया से, 4 कराऊगा नहीं मन से। 5 कराऊगा नहीं वचन से 6 कराऊगा नहीं काया से, 7 अनुमोदना दूगा नहीं मन से, 8 अनुमोदना दुगा नहीं वचन से, 9 अनुमोदना दूगा नहीं काया से।

12 अंक एक बारह का भंग उपजे नौ। एक करण दो योग से कहना।

1 करुगा नही-मन से, वचन से।

2 करुगा नहीं - मन से, काया से।

3 करुगा नहीं - वचन से, काया से।

4 कराऊंगा नहीं - मन से वचन से।

5 कराऊंगा नहीं- मन से, काया से।

6 कराऊगा नहीं - वचन से, काया से।

7 अनुमोदूगा नहीं - मन से वचन से।

8 अनुमोदूगा नहीं- मन से, काया से।

9 अनुमोदूगा नहीं - वचन से, काया से।

13 अंक एक तेरह का भंग उपजे तीन। एक करण तीन योग से कहना।

1 करुगा नहीं - मन से, वचन से काया से।

2 कराऊगा नहीं - मन से, वचन से, काया से।

3 अनुमोदूगा नहीं - मन से, वचन से, काया से।

21 अंक एक इक्कीस का भंग उपजे नौ। दो करण एक योग से कहना।

1 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं - मन से।

2 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं - वचन से।

3 करुंगा नहीं, कराऊंगा नहीं - काया से।

4 करुंगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं - मन से।

5 करुगा नही, अनुमोदूगा नहीं - वचन से।

6 करुगा नहीं, अनुमोदूंगा नहीं - काया से।

7 कराऊगा नहीं, अनुमोदूंगा नहीं - मन से।

8 कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं - वचन से।

9 कराऊंगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं - काया से।

22 अंक एक बाईस का भंग उपजे नौ। दो करण, दो योग से कहना।

1 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं- मन से, वचन से।

2 करुगा नहीं, कराऊगा नही- मन से, काया से।

3 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं- वचन से, काया से।

4 करुगा नही, अनुमोदूगा नही- मन से, वचन से।

5 करुगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं- मन से, काया से।

6 करुगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं- वचन से, काया से।

7 कराऊगा नही, अनुमोदूगा नहीं- मन से, वचन से।

8 कराऊगा नही, अनुमोदूगा नही- मन से, काया से।

9 कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नही- वचन से, काया से।

23 अंक एक तेईस का भंग उपजे तीन। दो करण तीन योग से कहना।

1 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं-मन से, वचन से, काया से।

2 करुगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं-मन से, वचन से, काया से।

3 कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नही-मन से, वचन से, काया से ।

31 अक एक इकतीस का भग उपजे तीन, तीन करण एक योग से कहना।

1 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं-अनुमोदूगा नहीं मन से।

2 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं-अनुमोदूगा नहीं वचन से।

3 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं-अनुमोदूगा नहीं काया से।

22 अंक एक बत्तीस का भंग उपजे तीन। तीन करण दो योग से कहना।

1 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं-मन से, वचन से।

2 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं-मन से, काया से।

3 करुगा नहीं, कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं-वचन से, काया से।

33 अंक तैतीस का भंग उपजे एक। तीन करण तीन योग से कहना।

1. करुंगा नहीं, कराऊगा नहीं, अनुमोदूगा नहीं-मन से, वचन से, काया से।

यंत्र

आंक	11	12	13	21	22	23	31	32	33	आंक
करण	1	1	1	2	2	2	3	3	3	
योग	1	2	3	1	2	3	1	2	3	
भागा	9	9	3	9	9	3	3	3	1	49

भांगे - 49

प्रश्न - भंग किसे कहते हैं ?

उत्तर - श्रावक के प्रत्याख्यान करने के विकल्प को भग कहते है।

पच्चीसवें बोले चारित्र 5

1. सामायिक चारित्र 2. छेदोपस्थापनीय चारित्र, 3. परिहार विशुद्ध चारित्र, 4. सूक्ष्म सम्पराय चारित्र, 5. यथाख्यात चारित्र।

प्रश्न - चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - सर्व सावध योग से निवृत्ति को चारित्र कहते है।

2. 12 चक्रवर्ती

चक्रवर्ती उन्हे कहते है जो सम्पूर्ण छह खण्ड पृथ्वी को जीतकर राज्य करे और चौदह रत्न तथा नवनिधि के स्वामी हो। उनके नाम इस प्रकार है।

1 भरतजी	2 सगरजी	3 मघवाजी
4 सनत्कुमारजी	5 शातिनाथजी	6 कुन्थुनाथजी
7 अरनाथजी	8 सुभूमजी	9 महापद्मजी
10 हरिषेणजी	11 जयसेनजी	12 ब्रह्मदत्तजी

पाचवे, छठे और सातवे चक्रवर्ती ही सोलहवे, सत्तरहवे और अट्ठारहवे तीर्थकर हुए है।

नव बलदेव, नव वासुदेव और नव प्रतिवासुदेव

बलदेव एव वासुदेव दोनो भाई होते है। वासुदेव, प्रतिवासुदेव को मारकर तीन खण्ड पृथ्वी के स्वामी बनते है। वासुदेव की मृत्यु के बाद बलदेव भी मुनि बन जाते है। उनके नाम इस प्रकार है।

3. नव बलदेव के नाम

1 अचलजी	2 विजयजी	3 भद्रजी
4 सुप्रभजी	5 सुदर्शनजी	6 आनन्दजी
7 नन्दनजी	8 रामचन्द्रजी	9 बलभद्रजी

4. नव वासुदेव के नाम

1 त्रिपृष्टजी	2 द्विपृष्टजी	3 स्वयभूजी
4 पुरुषोत्तमजी	5 पुरुषसिहजी	6 पुरुषपुण्डरीकजी
7 दत्तजी	8 लक्ष्मणजी	9 कृष्णजी

5. नव प्रतिवासुदेव के नाम

1 अश्वग्रीवजी	2 तारकजी	3 मेरकजी
4 मधुकीटजी	5 निष्कुभजी	6 बलिजी
7 प्रहलादजी	8 रावणजी	9 जरासधजी

--**--

जयंतीबाई के प्रश्न

श्री भगवती सूत्र के 12वे शतक के दूसरे **उद्देश्य** मे 'जयतीबाई' के प्रश्न और भगवान के उत्तर का वर्णन इस प्रकार है।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे **कौशाम्बी** नाम की नगरी थी। एक समय भगवान महावीर स्वामी वहा पधारे। यह समाचार सुनकर सभी नागरिक हर्षित हुए। राजा उदायन आदि वन्दनार्थ गये। जयन्ती श्रमणोपासिका, उदायन नरेश की फूफी थी। वह अपनी भावज-राजमाता मृगावती देवी के साथ प्रभु की वदना करने के लिए गयी। भगवान् ने धर्मोपदेश दिया। धर्मकथा सुनकर परिषद् लौट गयीं। राजा और रानी लौट गये। उस समय जयन्ती श्रमणोपासिका ने भगवान् को वन्दना - नमस्कार करके विनयपूर्वक पूछा -

1. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! जीव के भारी होने का क्या कारण है और किस प्रकार जीव हल्का होता है ?

   उत्तर– हे जयन्ती ! अठारह प्रकार के पापो के आचरण से जीव भारी होता है और इन पापो से विरत होने - त्याग करने से जीव हल्का होता है।

2. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! किस कारण से जीव ससार बढाता है और किस आचरण से ससार घटाता है।

   उत्तर– हे जयन्ती ! 18 पापो के आचरण से जीव ससार बढाता है और 18 पापो से निवृत्त होकर जीव संसार घटाता है।

3. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! किस कारण से जीव कर्मो की स्थिति बढाता है और किस आचरण से घटाता है?

   उत्तर– हे जयन्ती ! 18 पापो का आचरण कर के जीव कर्म-स्थिति बढाता है और 18 पापो का त्याग कर के जीव कर्म-स्थिति घटाता है।

4. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! किस कारण जीव संसार-सागर मे परिभ्रमण

करता है और किस विधि से जीव ससार-सागर को तिर कर पार हो जाता है।

उत्तर- हे जयन्ती ! 18 पापो के सेवन से जीव ससार-सागर मे रुलता रहता है और 18 पापो का त्याग कर के जीव, ससार से तिर जाता है।

5 प्रश्न- अहो भगवन् ! जीवो का भवसिद्धिपना स्वभाव से है या परिणाम से ?

उत्तर- हे जयती ! जीवो का भवसिद्धिपना स्वभाव से है, परिणाम से नही।

6 प्रश्न- अहो भगवन् ! क्या सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष प्राप्त करेगे?

उत्तर- हा जयती ! सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष प्राप्त करेगे।

7. प्रश्न- अहो भगवन् ! सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष मे चले जावेगे, तो लोक भवसिद्धिक जीवो से रहित हो जाएगा।

उत्तर- हे जयती ! 'णो इणट्ठे समट्ठे' यह नहीं हो सकता, अर्थात् सभी भवसिद्धिक जीव मोक्ष मे जावेगे, तो भी यह लोक भवसिद्धिक जीवो से रहित नहीं होगा।

अहो भगवन ! इसका क्या कारण है?

हे जयती ! यथा दृष्टान्त जैसे आकाश की श्रेणी अनादि-अनन्त है। उसमे से एक-एक परमाणुखड जितना प्रदेश एक-एक समय मे निकाले। इस प्रकार निकालते-निकालते अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी पूरी हो जाय, तो भी यह आकाश श्रेणी खाली नहीं होती। इसी प्रकार भवसिद्धिक जीव मोक्ष जावेगे, तो भी यह लोक भवसिद्धिक जीवो से खाली नहीं होगा।

8 प्रश्न- अहो भगवन् ! जीव सोते हुए अच्छे या जागते हुए अच्छे।

उत्तर- हे जयती ! कोई जीव सोते हुए अच्छे होते है और कोई जीव जागते हुए अच्छे होते है। अहो भगवन् इसका क्या कारण है?

हे जयती ! जो जीव अधर्मी है, अधर्म का काम करते है, अधर्म

रूपी अरूपी

ससार मे रूपी और अरूपी वस्तुए कितने प्रकार की है, इसका वर्णन श्री भगवती सूत्र श 12 उ 5 मे इस प्रकार है।

1 **चौफरसी रूपी के 30 भेद–** अठारह पाप, आठ कर्म, एक कार्मणशरीर, दो योग (मन वचन) एक सूक्ष्म पुद्‌गलास्तिकाय का स्कध- ये तीस भेद चौफरसी रूपी के है। इनमे पाच वर्ण, दो गध, पाच रस, चार स्पर्श- शीत, उष्ण, रुक्ष (लूखा) और स्निग्ध (चौपडिया) पाये जाते है।*

2 **अठफरसी रूपी के 15 भेद–** छः द्रव्य लेश्या⊛, चार शरीर (औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तेजस), धनोदधि, घनवाय, तनुवाय, काययोग, बादर पुद्‌गलास्तिकाय का स्कन्ध (इसमे द्वीप, समुद्र, नरक, पृथ्वीया, विमान और सिद्धशिलादि सम्मिलित है) ये 15 अठफरसी है। इनमे पॉच वर्ण, दो गध, पाच रस और आठ स्पर्श पाये जाते है।

3 **अरूपी के 61 भेद–** 18 पाप की विरति✪ (त्याग), 12 उपयोग 6 भावलेश्या, 5 द्रव्य (पुद्‌गलास्तिकाय को छोडकर), 4 बुद्धि (उत्पातिकी, वैनयिकी, कार्मिकी, पारिणामिकी) 4 भेद मतिज्ञान के (अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा), 3 दृष्टि 5 शक्ति (उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, और पुरूषकार पराक्रम), 4 सज्ञा- ये 61 बोल अमूर्त तथा जीव परिणाम होने से अरूपी है। इनमे वर्ण, गध, रस और स्पर्श नहीं पाये जाते।

---

* यद्यपि पुद्‌गलो के दो तीन आदि स्पर्श भी पाए जाते हैं तथा वे पुद्‌गल चतुस्पर्शी जाति के माने गए हैं। इसी प्रकार चार (खुरदरा,भारी, शीत, रुक्ष) पॉच आदि स्पर्श वाले पुद्‌गल अष्टस्पर्शी जाति के माने गए हैं। इसलिए यहा पुद्‌गलो के चौस्पर्शी और अष्टस्पर्शी-ये दो भेद किए हैं। रूपी अर्थात् जिसमे वर्ण, गध, रस, स्पर्श होते हैं।

⊛ द्रव्य लेश्या बादर पुद्‌गल परिणाम रूप होने से रूपी तथा भाव लेश्या जीव के आन्तरिक परिणाम रूप होने से अरूपी है।

✪ अठारह पाप की विरति जीव के उपयोग स्वरूप है। जीव का उपयोग अरूपी होने से इन्हे भी अरूपी माना है। अरूपी अर्थात् वर्ण गध रस स्पर्श से रहित।

इहभविक परभविक

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे मे इहभविक, परभविक का वर्णन इस प्रकार हैः-

1. **प्रश्न**- अहो भगवन्! ज्ञान, इहभविक (इस भव मे) है, परभविक (पर भव मे) है, या तदुभयभविक (दोनो भवो मे) है?
   उत्तर- हे गौतम ! ज्ञान इहभविक भी है, परभविक भी हैऔर तदुभयभविक है। अर्थात् भव-भव मे है।
2. **प्रश्न**-अहो भगवन्! दर्शन, इहभविक है, परभविक है या तदुभय भविक है ?
   उत्तर- हे गौतम ! दर्शन इहभविक भी है, परभविक भी है, और तदुभयभविक भी है।
3. **प्रश्न**- अहो भगवन् ! चारित्र इहभविक है, परभविक है या तदुभयभविक है ?
   उत्तर- हे गौतम ! चारित्र, इहभविक है, किन्तु परभविक नहीं और तदुभयभविक भी नहीं है। इसी प्रकार तप और सयम* भी इहभविक है, पर भविक और तदुभयभविक नहीं है।

संसार-संचिट्ठण काल

श्री भगवती सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे मे 'संसार संचिट्ठण काल' का अधिकार इस प्रकार है-

चउ संचिट्ठणा होइ, कालो सुण्णासुण्ण मीसो।
तिरियाणं सुण्णवज्जो, सेसे तिण्णि अप्पाबहूं॥

1. **प्रश्न**- अहो भगवन् ! ससार-सचिट्ठण काल* (ससार सस्थान

---

* सामान्यत चारित्र और सयम एकार्थक है। यहाँ चारित्र और सयम को अलग-2 कहा गया है। अत यहाँ चारित्र का अर्थ शुभ मे प्रवृत्ति प्रधान तथा सयम का अर्थ अशुभ से निवृत्ति प्रधान समझना चाहिए।
* यह जीव अतीतकाल मे किस गति मे रहा था यह बतलाना ससार-सचिट्ठण काल, कहलाता है।

काल) कितने प्रकार का है ?

उत्तर– हे गौतम ! चार प्रकार का है- 1 नैरयिक-ससार-सचिट्ठण काल, 2 तिर्यच-ससार-सचिट्ठण काल, 3 मनुष्य- ससार-सचिट्ठण काल और 4 देव-ससार- सचिट्ठण काल।

2 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! नैरयिक-ससार-सचिट्ठण काल कितने प्रकार का है?

उत्तर– हे गौतम ! तीन प्रकार का है- *1 शून्य काल ❁2 अशून्य काल और ☺3 मिश्र काल। इसी प्रकार मनुष्य और देव मे भी ससार - सचिट्ठण काल तीन-तीन पाते है। तिर्यच मे ससार-सचिट्ठण काल दो पाते है- 1 अशून्य काल और 2 मिश्र काल।

3 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! नैरयिक मे कौन-सा काल थोडा है और कौन-सा काल बहुत है।

उत्तर– हे गौतम ! सबसे थोडा अशून्य काल, उससे मिश्र काल अनन्त गुण, उससे शून्य काल अनन्त गुण। इसी प्रकार मनुष्य और देव का अल्प बहुत्व कहना चाहिए। तिर्यच मे सबसे थोडा अशून्य काल, उससे मिश्र काल अनन्त गुणा है।

4 **प्रश्न–** अहो भगवन् चार प्रकार के ससार- सचिट्ठण काल मे कौन-सा थोडा और कौन-सा बहुत है।

उत्तर– सबसे थोडा मनुष्य-ससार-सचिट्ठण काल है, उससे नारकी-ससार-सचिट्ठण काल असख्यात गुण, उससे देव-ससार-

---

* एक नैरयिक विशेष किसी समय विशेष मे जिन नैरयिको के साथ था, उन सभी नैरयिको के साथ वह नैरयिक जितने समय तक रहता है उसे नैरयिक अशून्य ससार सचिट्ठण काल कहते है।

❁ उन नैरयिको में से एक नैरयिक कम हो गया, उनके साथ रहना यावत् इसी प्रकार कम होते-होते जबतक उनमे से एक भी नैरयिक शेष रहता है, उनके साथ रहना उसे नैरयिक मिश्र ससार सचिट्ठण काल कहते है।

☺ जब उन सभी नैरयिको में एक भी जीव नैरयिक रूप मे नहीं रहता उस समय उस नैरयिक विशेष का अपने साथी नैरयिको से रहित होकर नरक मे रहना उसे नैरयिक नैरयिक शून्य ससार सचिट्ठण काल कहते हैं।

6 अहो भगवन् ! देव गति में उत्पन्न होने वाले असन्नी (बिना मन वाले जीव अकाम निर्जरा करने वाले) तिर्यच पचेन्द्रिय मर कर कहा उत्पन्न होते हैं ?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट वाणव्यतर मे।

7 अहो भगवन् ! देव गति मे उत्पन्न होने वाले तापस (वृक्ष से गिरे हुए पत्तो आदि को खाकर उदर निर्वाह करने वाले बाल तपस्वी) मर कर कहा उत्पन्न होते है ?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट ज्योतिषी मे।

8. अहो भगवन् ! देव गति मे उत्पन्न होने वाले कान्दर्पिक (चारित्र वेश मे रहते हुए भी हास्यशील होने के कारण अनेक प्रकार की विदूषक की सी चेष्टाएँ करता है अथवा कन्दर्प यानी काम सम्बन्धी कथा करने वाला) साधु मरकर कहां उत्पन्न होते है ?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट पहले देवलोक मे।

9 अहो भगवन् ! देव गति मे उत्पन्न होने वाले चरक, परिव्राजक (चरक यानी कुच्छोटक आदि परिव्राजक यानी सांख्यमत के साधु) मर कर कहां उत्पन्न होते हैं ?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट पाचवे देवलोक मे।

10. अहो भगवन् ! देव गति मे उत्पन्न होने वाले किल्विषिक (जो ज्ञान, केवली, धर्माचार्य, सब साधुओ का अवर्णवाद करता है और मायी है) वाले साधु मरकर कहां उत्पन्न होते है ?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट छठे देवलोक मे।

11 अहो भगवन् ! देव गति में उत्पन्न होने वाले सन्नी तिर्यच पेचेन्द्रिय मर कर कहां उत्पन्न होते है?

हे गौतम ! जघन्य भवनपति मे, उत्कृष्ट आठवे देवलोक मे।

12. अहो भगवन् ! देव गति मे उत्पन्न होने वाले आजीविक (नग्न रहने वाले पाखण्डी, विशेष गोशालक के शिष्य और अविवेकी

2 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! श्रवण का क्या फल है ?
उत्तर– हे गौतम ! श्रवण का फल **'ज्ञान'** (जानपना) है।

3 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! ज्ञान का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! ज्ञान का फल **'विज्ञान'** (विवेचनपूर्वक ज्ञान) है।

4 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! विज्ञान का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! विज्ञान का फल **'पच्चक्खाण'** है।

5 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! पचक्खाण का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! पचक्खाण का फल **'संयम'** है।

6 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! सयम का क्या फल है ?
उत्तर– हे गौतम ! संयम का फल **'अनाश्रव'** (आश्रवरहित) है।

7 **प्रश्न–** अहो भगवन् अनाश्रव का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! अनाश्रव का फल **'तप'** है।

8\. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! तप का क्या फल है ?
उत्तर– हे गौतम ! तप का फल **'वोदाण'** (कर्मो का नाश) है।

9\. **प्रश्न–** अहो भगवन् ! वोदाण का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! वोदाण का फल **'अक्रिया'** (निष्क्रियता-क्रियारहित होना) है।

10 **प्रश्न–** अहो भगवन् ! अक्रिया का क्या फल है?
उत्तर– हे गौतम ! अक्रिया का फल **'सिद्धि'** है।

काम–भोग

श्री भगवती सूत्र के सातवे शतक के सातवे उद्देशे मे कामी-भोगी का स्वरूप इस प्रकार है-

1 अहो भगवन् ! उपयोग सहित गमनागमनादि क्रिया करते हुए सवरयुक्त अणगार को इरियावही (ऐर्यापथिकी) क्रिया लगती है या सापरायिकी क्रिया लगती है?

हे गौतम ! अकषायी सवृत्त अनगार सूत्र विधि से चलता है। इसलिए

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक, तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य ये 15 दण्डक कहना चाहिए। चौइन्द्रिय जीव, चक्षुइन्द्रिय की अपेक्षा कामी है और घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा भोगी है। तेइन्द्रिय, बेइन्द्रिय और एकेन्द्रिय (पाच स्थावर) ये सभी कामी नहीं, भोगी है।

अल्प-बहुत्व सबसे थोडे कामी-भोगी, उनसे नो कामी- नो भोगी (सिद्ध) अनन्त गुण और उनसे भोगी अनन्त गुण।

(जिनकी कामना अभिलाषा तो की जाती हो किन्तु जो विशिष्ट शरीर स्पर्श के द्वारा भोगे न जाते हो वे काम है तथा जो शरीर से भोगे जाए वे भोग है।)

प्रत्यनीक

श्री भगवती सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'प्रत्यनीक' का अधिकार इस प्रकार है-

प्रत्यनीक का अर्थ है- द्वेषी, विरोधी, निन्दक, वैरी।

1 अहो भगवन् ! गुरु के कितने प्रत्यनीक है?

हे गौतम ! गुरु के तीन प्रत्यनीक है- 1 आचार्य का प्रत्यनीक, 2 उपाध्याय का प्रत्यनीक और 3 स्थविर का प्रत्यनीक।

2 अहो भगवन् ! गति सम्बन्धी कितने प्रत्यनीक है?

हे गौतम ! गति सम्बन्धी तीन प्रत्यनीक है- 1 इहलोक प्रत्यनीक- पचाग्नि तप करने वाले की तरह, अज्ञानतापूर्वक इन्द्रिय विषयो के प्रतिकूल आचरण करने वाला, 2. परलोक प्रत्यनीक- इन्द्रियो के विषय- भोगो मे तल्लीन रहने वाला, 3 उभयलोक प्रत्यनीक- चोरी आदि द्वारा इन्द्रियो के विषय-भोगो मे तल्लीन रहकर दोनो लोक बिगाडने वाला।

3 अहो भगवन् ! समूह प्रत्यनीक कितने है?

हे गौतम ! समूह प्रत्यनीक तीन है- 1 कुल (एक गुरु के शिष्य समुदाय) का प्रत्यनीक, 2 गण (बहुत गुरुओ के शिष्य समुदाय) का प्रत्यनीक, 3 संघ (साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका) का प्रत्यनीक।

4 अहो भगवन् ! अनुकम्पा प्रत्यनीक कितने है?

हे गौतम ! अनुकम्पा सम्बन्धी तीन प्रत्यनीक है- 1 तपस्वी का प्रत्यनीक, 2 ग्लान (रोगी साधु) का प्रत्यनीक और 3 शैक्ष (नवदीक्षित साधु) का प्रत्यनीक।

5 अहो भगवन् ! श्रुत सम्बन्धी प्रत्यनीक कितने है?

हे गौतम ! श्रुत सम्बन्धी प्रत्यनीक तीन है- 1 सूत्र का प्रत्यनीक, 2 अर्थ का प्रत्यनीक और 3 तदुभय (सूत्र-अर्थ दोनो) का प्रत्यनीक।

6 अहो भगवन् ! भाव प्रत्यनीक कितने है?

हे गौतम ! भाव प्रत्यनीक तीन है- 1 ज्ञान प्रत्यनीक, 2 दर्शन प्रत्यनीक और 3 चारित्र प्रत्यनीक।

व्यवहार

श्री भगवती सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'व्यवहार' का अधिकार इस प्रकार है-

1 अहो भगवन् ! व्यवहार कितने प्रकार के है?

हे गौतम ! व्यवहार⊛ पाच प्रकार के है- 1 आगम व्यवहार, 2 श्रुत व्यवहार 3 आज्ञा व्यवहार, 4. धारणा व्यवहार, 5 जीत व्यवहार।

1. **आगम व्यवहार-** केवलज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, अवधिज्ञान, चौदह पूर्व और दस पूर्व का ज्ञान 'आगम' कहलाता है। आगम ज्ञान से

⊛ मोक्षाभिलापी जीवों की प्रवृत्ति और निवृत्ति को तथा प्रवृत्ति-निवृत्ति के सम्यक् [illegible] को व्यवहार कहते हैं।

चलाई हुई प्रवृत्ति-निवृत्ति को 'आगम व्यवहार' कहते है।

2. **श्रुत-व्यवहार (सूत्र व्यवहार)-** आचारकल्प आदि श्रुतज्ञान कहलाते है। श्रुतज्ञान से चलाई हुई प्रवृत्ति-निवृत्ति को 'श्रुत व्यवहार' कहते है।

3 **आज्ञा व्यवहार-** अतिचारो की आलोचना करने के लिये, किसी गीतार्थ साधु ने अपने अगीतार्थ शिष्य के साथ, दूसरे देश मे रहे हुए गीतार्थ साधु के पास गूढ अर्थ वाले पद भेजे। उस गूढ अर्थ वाले पदो को समझ कर उस गीतार्थ साधु ने वापिस गूढ अर्थ वाले पदो मे अतिचारो की शुद्धि के लिए प्रायश्चित भेजा। इसे 'आज्ञा व्यवहार' कहते है।

4. **धारणा व्यवहार-** द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव का विचार करके गीतार्थ साधु ने जिस अपराध मे जो प्रायश्चित दिया हो, उसकी धारणा से वैसे ही अपराध मे उसी प्रकार का प्रायश्चित देना 'धारणा व्यवहार' कहलाता है। अथवा कोई साधु सभी छेद सूत्र नहीं सीख सकता हो, उसे गुरु महाराज, जो प्रायश्चित पद सिखावे, उनकी धारणा करना 'धारणा व्यवहार' कहलाता है।

5. **जीत व्यवहार-** द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा शारीरिक बल, वीर्य आदि की हानि का विचार करके जो प्रायश्चित दिया जाता है वह 'जीत व्यवहार' कहलाता है अथवा गीतार्थ साधु मिल कर जो शास्त्रो से अविरोधी एव पूर्व पुरुषो द्वारा आचरित मर्यादा बाधते है, वह 'जीत व्यवहार' कहलाता है।

इन पॉच व्यवहारो मे से जिसके पास आगम ज्ञान हो, उसको आगम ज्ञान से व्यवहार चलाना चाहिये, वहॉ शेष 4 व्यवहारो की जरूरत नहीं। जिसके पास आगम ज्ञान न हो, तो उसे श्रुत (सूत्र) से व्यवहार चलाना चाहिये, वहॉ शेष तीन व्यवहारो की आवश्यकता नहीं, श्रुत नहीं हो तो आज्ञा से व्यवहार चलाना चाहिये, वहॉ शेष दो की अपेक्षा नहीं। आज्ञा

अनुत्तर विमानो मे असख्यात्, अनतबार देवपने उत्पन्न नहीं हुए।

3 अहो भगवन् ! यह जीव, सभी जीवो के मातापने, पितापने, भाई, बहन, पुत्र और पुत्रवधुपने उत्पन्न हुआ है?

हे गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुआ है। इसी प्रकार सभी जीव भी इस जीव के माता-पिता आदि परिवारपने उत्पन्न हुए है।

4 अहो भगवन् ! यह जीव, सभी जीवो के शत्रुपने, वैरीपने, घातक, वधक, प्रत्यनीक और मित्रपने उत्पन्न हुआ है।

हॉ गौतम ! अनेक बार अथवा अनत बार उत्पन्न हुआ है। इसी प्रकार सभी जीव भी इस जीव के शत्रुपने आदि उत्पन्न हुए है। इसी प्रकार यह जीव सभी जीवो का राजा, युवराज यावत्, सार्थवाह, दास, चाकर, शिष्य और शत्रुपने, अनेक बार अथवा अनत बार उत्पन्न हुआ है और सभी जीव भी इसी प्रकार इस जीवन के राजापने यावत् शत्रुपने अनेक बार अथवा अनत बार उत्पन्न हुए है। क्योकि लोक शाश्वत् है, अनादि है। जीव नित्य है,अपने कर्मानुसार जन्म-मरण करता है। इससे जीव ससार मे परिभ्रमण करता है।

उपयोग

श्री भगवती सूत्र के 13वे शतक के पहले, दूसरे उद्देशे में उपयोग का विधान इस प्रकार है-

उपयोग 12 है- 1 मतिज्ञानोपयोग, 2 श्रुतज्ञानोपयोग, 3 अवधिज्ञानोपयोग 4 मन-पर्ययज्ञानोपयोग, 5 केवलज्ञानोपयोग, 6 मतिअज्ञानोपयोग, 7 श्रुतअज्ञानोपयोग, 8 विभगज्ञानोपयोग, 9 चक्षुदर्शनोपयोग, 10 अचक्षुदर्शनोपयोग, 11 अवधि दर्शनोपयोग, 12 केवलदर्शनोपयोग।

1 पहली, दूसरी और तीसरी नारकी मे जीव 8 उपयोग लेकर जाते है- 3 ज्ञान, 3 अज्ञान, 2 दर्शन (अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन)

7 उपयोग लेकर निकलते है- 3 ज्ञान, 2 अज्ञान, 2 दर्शन (अचक्षु और अवधिदर्शन) =87।

2 चौथी, पांचवीं और छठी नारकी मे 8 उपयोग लेकर आते हैं पूर्ववत् और 5 उपयोग लेकर निकलते है - 2 ज्ञान, 2 अज्ञान, 1 दर्शन - अचक्षुदर्शन =85 ।

3 सातवीं नारकी मे 5 उपयोग लेकर जाते है- 3 अज्ञान, 2 दर्शन (अचक्षु और अवधिदर्शन)। 3 उपयोग लेकर निकलते है - 2 अज्ञान 1 अचक्षुदर्शन =53।

4 भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी मे 8 उपयोग लेकर जाते हे, पहली नारकीवत् और 5 उपयोग लेकर निकलते हैं (चौथी नारकीवत्) = 85।

5 पहले देवलोक से नवग्रैवेयक तक मे 8 उपयोग लेकर जाते हैं, पहली नारकीवत् और 7 उपयोग लेकर निकलते है (पहली नारकीवत्) = 87।

6 पाच अनुत्तर विमान मे 5 उपयोग लेकर जाते है- 3 ज्ञान, 2 दर्शन (अचक्षु और अवधिदर्शन)=5 । और 5 ही उपयोग लेकर निकलते है। = 55।

7 पॉच स्थावर मे 3 उपयोग लेकर जाते है- 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन। और ये 3 ही उपयोग लेकर निकलते है। = 33

8 तीन विकलेन्द्रिय मे 5 उपयोग लेकर जाते है- 2 ज्ञान, 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन = 5 और 3 उपयोग लेकर निकलते है- 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन। = 53।

9. तिर्यंच पंचेन्द्रिय मे 5 उपयोग लेकर जाते हैं- 2 ज्ञान, 2 अज्ञान, 1 अचक्षुदर्शन और 8 उपयोग लेकर निकलते हें, पहली नारकी मे उत्पत्तिवत्। =58।

10. मनुष्य मे 7 उपयोग लेकर जाते हैं (3 ज्ञान, 2 अज्ञान, 2 दर्शन-

अचक्षु अवधिदर्शन =7) और 8 उपयोग लेकर निकलते है, पहली नारकी मे उत्पत्तिवत्। =78।

समकित के 67 बोल

पहले बोले श्रद्धान 4, दूसरे बोले लिग 3, तीसरे बोले विनय 10, चौथे बोले शुद्धि 3, पॉचवे बोले लक्षण 5, छठे बोले दूषण 5, सातवे बोले भूषण 5, आठवे बोले प्रभावना 8, नौवे बोले आगार 6, दसवे बोले यतना 6, ग्यारहवे बोले स्थान 6, बारहवे बोले भावना 6। ये सभी मिलाकर 67 बोल हुए। अब इनकी व्याख्या दी जाती है।

पहले बोले- श्रद्धान् : चार

1 परमार्थ का परिचय करे, अर्थात् नव तत्त्व का ज्ञान प्राप्त करे।

2 परमार्थ के जानने वालो की सेवा करे।

3 जिसने सम्यक्त्व का वमन कर दिया (छोड दिया) हो, उसकी सगति नहीं करे।

4 कुतीर्थियो की सगति से दूर रहे।

दूसरे बोले- लिंग : तीन

1 जैसे तरुण पुरुष राग रग मे अनुराग रखता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी मे अनुरक्त रहे।

2 जैसे तीन दिन का भूखा मनुष्य मिष्ठान्न का भोजन रुचिसहित करता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी आदर सहित सुने।

3 जैसे अनपढ को पढने की चाह रहती है और पढने का सुयोग मिलते ही हर्षित होता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी सुनकर हर्षित होवे।

तीसरे बोले - विनय के 10 प्रकार :

1 अरिहत भगवान की विनय-भक्ति करे।

2 सिद्ध भगवान की विनय-भक्ति करे।

3 आचार्य महाराज की विनय-भक्ति करे।

4 उपाध्यायजी महाराज की विनय-भक्ति करे।

5 स्थविर महाराज की विनय-भक्ति करे।

6. कुल (साधु समुदाय) की विनय भक्ति करें।

7 गण (गच्छ) की विनय-भक्ति करे।

8 चतुर्विध संघ (साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका) की विनय-भक्ति करे।

9 साधर्मी की विनय-भक्ति करे।

10 क्रियावान् की विनय-भक्ति करे।

चौथे बोले- शुद्धि : तीन

1 मन-शुद्धि - मन से सुदेव, सुगुरू तथा निर्ग्रन्थ धर्म का ध्यान करे। परतु किसी अन्य देव, गुरू, धर्म को मन मे नहीं लाये।

2 वचन-शुद्धि- वचन से सुदेव, सुगुरू तथा निर्ग्रन्थ धर्म का गुणगान करे, किन्तु किसी अन्य देव, गुरू, धर्म की प्रशंसा नहीं करे।

3 काय-शुद्धि-काया से सुदेव, सुगुरू तथा निर्ग्रन्थ धर्म को वन्दन नमस्कार करे, परन्तु किसी अन्य देव गुरू, धर्म को नहीं करें।

पॉचवें बोले - लक्षण : पांच

1 शम (प्रशम)- अनन्तानुबन्धी, क्रोध, मान, माया और लोभ का उदय न होना।

सम-शत्रु- मित्र पर समभाव रखना।

2 संवेग- वैराग्य भाव - मोक्ष की अभिलाषा होना।

3. निर्वेद-आरम्भ-परिग्रह से निवृत्त होना, संसार से उदासीन होना।

4 अनुकम्पा- दूसरे जीव को दुःखी देखकर दया आना।

5. आस्था- जिन- वचन पर दृढ विश्वास रखना।

छठे बोले– सम्यक्त्व के दूषण – पांच

1 शका– जिन भगवान के वचनो मे सदेह रखना दोष है।
2 काक्षा– अन्यमतियो का आडम्बर देखकर उनकी चाहना करना दोष है।
3 वितिगिच्छा– करणी के फल मे सदेह रखना दोष है।
4 पर पाखण्डी प्रशसा– अन्य मत वालो की प्रशसा करना।
5 पर पाखण्डी सस्तव– अन्यतीर्थियो के साथ आवागमन रखना और उनकी सगति करना दोष है।

सातवें बोले – सम्यक्त्व के भूषण : पांच

1 जिन– शासन मे निपुण होवे।
2 जिन–शासन की प्रभावना करे और उसके गुणो को दीपावे– प्रकट करे।
3 जिन–शासन को मानने वाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप धर्मतीर्थ की सेवा–भक्ति करे।
4 अन्य जीवो को धर्म मे स्थिर करे और जिन–मार्ग मे चतुर हो।
5 जिन–प्रवचन एव गुणवानो का आदर– सत्कार एव महिमा करे।

आठवें बोले– प्रभावना : आठ

1 जिस काल मे जितने सूत्र उपलब्ध हो, उतने पढे और अन्य जीवो को प्रतिबोध देकर उनकी उन्नति करे।
2 धर्म–कथा सुनाने मे चतुर होवे।
3 प्रत्यक्ष, हेतु – दृष्टातपूर्वक अन्यमतियो से वाद करके धर्म को दीपावे– प्रभावना करे।
4 निमित्तज्ञान से भूत, भविष्य और वर्तमान काल जाने।
5 कठिन तपस्या करके धर्म की उन्नति करे।
6 अनेक विद्याओ का जानकार होवे।
7 प्रसिद्ध व्रत (ब्रह्मचर्य आदि चार खन्ध) लेवे।

8. शास्त्र के अनुसार कविता रच कर धर्म की उन्नति करे।

नौवें बोले- आगार ●: छः

1. **राज्याभियोग**– राजा के दबाव से अन्यतीर्थि को वन्दना करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोष नहीं लगता।
2 **गणाभियोग**– कुटुम्ब, जाति, पच आदि के दबाव से अन्यतीर्थि को वन्दनादि करनी पडे, तो सम्यक्त्व मे दोष नहीं लगता।
3. **बलाभियोग**– बलवान के डर से अन्यतीर्थि को वन्दनादि करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोष नहीं लगता।
4 **सुराभियोग**– देव के डर से अन्यतीर्थि को वदनादि करनी पडे तो दोष नहीं लगता।
5 **गुरु निग्रह**– माता, पिता, गुरु आदि के आग्रह से अन्यतीर्थि को वदनादि करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोष नहीं लगता।
6 **वृतिकान्तार**– दुर्भिक्ष-काल मे आजीविका चलाना कठिन हो जाय अथवा जगल मे भटक जाने पर न चाहते हुए भी अन्यतीर्थि को वदनादि करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोष नहीं लगता।

दसवें बोले – यतना : छः

1 आलाप- मिथ्यात्वी से बिना कारण नहीं बोले और सम्यग्दृष्टि से बिना बोलाये भी ज्ञान-चर्चा करे।
2 संलाप- मिथ्यात्वी से विशेष भाषण नहीं करे और सम्यग्दृष्टि से बार-बार आवश्यक ज्ञान-चर्चा करे।
3 दान-मिथ्यात्वी को गुरु-बुद्धि से दान नहीं देवे, अनुकम्पा दान देने की तीर्थकर भगवान की मनाही नहीं है।
4 मान-मिथ्यात्वी का अधिक आदर-सम्मान नहीं करे और सम्यक्त्वी

● आगार का मतलब होता है छूट। यदि व्रत ग्रहण करने वाला पहले ही अपने सामर्थ्य को ध्यान में रखकर छूट रखे और आवश्यकता के समय छूट का प्रयोग करें तो व्रत भग नहीं होता और दोष भी नहीं लगता। जैसे- महीने मे 25 दिन रात्रि भोजन का त्यागी यदि शेष 5 दिन रात्रि भोजन करता है तो व्रत में दोष नहीं लगता।

का बहुत आदर-सम्मान करे।

5 वदना -मिथ्यात्वी को वदना नहीं करे।

6 गुणग्राम- मिथ्यात्वी की प्रशसा नहीं करे और सम्यक्त्वी के गुणो की प्रशसा करे।

ग्यारवें बोले – स्थान : छ.

1 धर्म रूपी वृक्ष की सम्यक्त्व रूपी जड है।

2 धर्म रूपी नगर की सम्यक्त्व रूपी फाटक है।

3 धर्म रूपी महल की सम्यक्त्व रूपी नींव है।

4 धर्म रूपी आभूषणो की सम्यक्त्व रूपी पेटी है।

5 धर्मरूपी वस्तुओ की सम्यक्त्व रूपी दुकान है।

6 धर्म रूपी भोजन का सम्यक्त्व रूपी थाल है।

बारहवें बोले – भावना – छः

1 जीव है और जीव का लक्षण चेतना है।

2 जीव द्रव्य नित्य- शाश्वत है।

3 जीव आठ कर्मो का कर्ता है।

4 जीव आठ कर्मो का भोक्ता है।

5 भव्य जीव कर्मो को क्षय कर मोक्ष प्राप्त कर लेते है।

6 सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चारित्र और सम्यग्तप- ये मोक्ष के उपाय है।

पचीस क्रिया

हिंसा प्रधान दुष्ट व्यापार विशेष को क्रिया कहते हैं। क्रिया से कर्मो का बन्ध होता है। कर्म बन्ध की कारण रूप क्रियाएं 25 प्रकार की है। (स्थानाग सूत्र स्थान 1 उ. 1 तथा स्थान 5 उ 2)

1. कायिकी क्रिया- शरीर आदि योगो के व्यापार से होने वाली हलन-चलनादि क्रिया। इसके दो भेद है- 1 अनुपरत कायिकी- विरति

के अभाव मे असयमी जीव के शरीरादि से होने वाली क्रिया। 2 दुष्प्रयुक्त कायिकी- अयतना से शारीरिक आदि प्रवृत्ति से होती क्रिया।

2. आधिकरणिकी- चाकू, छुरी, तलवार, कुदाल आदि से होने वाली क्रिया। इसके भी दो भेद है- 1 सयोजनाधिकरणिकी- टूटे हुए या बिखरे हुए साधनो को ठीक- दुरुस्त तथा एकत्रित करके काम के लायक बनाना। 2 निर्वतनाधिकरणिकी- नये साधन बनवाकर उपयोग करना।

3. प्राद्वेषिकी- ईर्ष्या, द्वेष, मत्सरता आदि अशुभ परिणाम रूप। इसके दो भेद है- 1 जीव प्राद्वेषिकी- मनुष्य, पशु आदि किसी भी जीव पर द्वेष- क्रोध आदि होना। 2 अजीव प्राद्वेषिकी- वस्त्र, पात्र, मकान आदि अरुचिकर अजीव वस्तु पर द्वेष करना।

अथवा तीन भेद- 1 स्व , 2 पर और 3 तदुभय पर अशुभ परिणाम लाना।

4. पारितापनिकी- किसी को मार-पीट अथवा कठोर वचन कह कर क्लेश पहुचाना, दुःखी करना, कष्ट देना।इसके भी दो भेद हैं-

1 स्वहस्त पारितापनिकी- अपने हाथ से या वचन से कष्ट पहुंचाना।

2 परहस्त पारितापनिकी- दूसरो के द्वारा दुःख पहुचाना।

दूसरी प्रकार से इसके तीन भेद है- 1. स्वय क्लेशित- दुःखी होना, 2 दूसरे को दुःखी करना, 3 स्व और पर को दुःख देना।

5. प्राणातिपातिकी- प्राणो का नाश करने रूप क्रिया। इसके भी दो भेद है- 1 स्वहस्त प्राणातिपातिकी और 2 परहस्त प्राणातिपातिकी। दूसरी प्रकार से इसके तीन भेद है- 1 स्वात्मघात, 2 अन्य जीवो की हिसा और 3 अपनी तथा दूसरो की हिसा करना।

6. आरम्भिकी- यह क्रिया दो प्रकार से होती है। जीव आरम्भिकी- छः काया के जीवो का आरम्भ करने से। अजीव आरम्भिकी- कपडा,

कागज, मृत कलेवर आदि अजीव वस्तुओ को नष्ट करने से होने वाली क्रिया।

7 पारिग्रहिकी– इसके भी दो भेद है– 1 जीव पारिग्रहिकी-कुटुम्ब, परिवार, दास, दासी, गाय, भैंस आदि चतुष्पद,शुकादि पक्षी, धान्य, फल आदि स्थावर जीवो को ममत्व भाव से अपनाना। 2 अजीव पारिग्रहिकी-सोना,चादी,मकान, वस्त्र, आभूषण, शयन आदि अजीव वस्तुओ पर ममत्व भाव रखना।

8 मायाप्रत्यया– छल, कपट से तथा कषाय के सद्भाव मे लगने वाली क्रिया। इसके दो भेद है– 1 आत्मभाव वक्रता- हृदय की कुटिलता- अन्तर मे कुछ और तथा बाहर मे कुछ और, इस प्रकार आत्मा मे ठगाई के भाव होना। 2 परभाव वक्रता- खोटे तोल, माप आदि से दूसरो को हानि पहुचाना, विश्वास जमा कर ठग लेना, आदि।

9 अप्रत्याख्यानप्रत्यया– विरति के अभाव मे यह क्रिया होती है।

10 मिथ्यादर्शनप्रत्यया– सम्यक्त्व के अभाव मे अथवा तत्व सम्बन्धी अश्रद्धा या कुश्रद्धा के कारण लगने वाली क्रिया। इसके भी दो भेद है- 1 न्यूनाधिक मिथ्यादर्शनप्रत्यया-श्री जिनेश्वर देव के कथन से कम अथवा अधिक श्रद्धान करना। 2 तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शनप्रत्यया-आत्मा का अस्तित्व ही नहीं मानना, अथवा न्यूनाधिक मानने रूप मिथ्यात्व के सिवाय जीव को अजीव, अजीव को जीव मानना आदि खोटी मान्यता रखना। इसमे अन्य सभी प्रकार के मिथ्यात्व का समावेश हो जाता है।

11. दृष्टिजा– जीव अथवा अजीव पदार्थ को देखने से होने वाले राग-द्वेषमय परिणाम।

12. स्पर्शजा– जीव अथवा अजीव के स्पर्श से होने वाली राग-द्वेष की परिणति।

13. प्रातीत्यिकी– जीव और अजीव रूप बाह्य वस्तु के आश्रय से उत्पन्न राग-द्वेष और उससे होने वाली क्रिया।

14. सामन्तोपनिपातिकी– जीव और अजीव वस्तुओ के किये हुए सग्रह को देखकर लोग प्रशसा करे और उस प्रशंसा को सुनकर हर्षित होना। इस प्रकार बहुत -से लोगो के द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर हर्षित होने से यह क्रिया लगती है। यह भी जीव और अजीव के भेद से दो प्रकार की होती है।

15. स्वहस्तिकी– अपने हाथ मे ग्रहण किए हुए जीव को मारने-पीटने रूप तथा अपने हाथ मे ग्रहण किए हुए जीव से दूसरे जीव को मारने-पीटने रूप। इसके दो भेद है- 1 जीव स्वहस्तिकी और 2 अजीव स्वहस्तिकी।

16. नैसृष्टिकी– किसी वस्तु को फेकने से होने वाली क्रिया। इसके दो भेद है- 1 जीव नैसृष्टिकी- खटमल, यूका (जूँ) आदि को पटक देने, फेकने या फव्वारे से जल छोडने आदि से होने वाली क्रिया और 2 अजीव नैसृष्टिकी- बाण फेकने, लकडी वस्त्र आदि फेकने से होने वाली क्रिया।

17. आज्ञापनिका– दूसरे को आज्ञा देकर कराई जाने वाली क्रिया अथवा दूसरो के द्वारा लगवाई जाने वाली क्रिया। इसके दो भेद है- 1 जीव आज्ञापनिका और 2 अजीव आज्ञापनिका।

18. वैदारिणी–विदारण करने से होने वाली क्रिया। यह भी जीव और अजीव के भेद से दो प्रकार की होती है।

अथवा विचारणिका जीव और अजीव के व्यवहार- लेन-देन मे दो व्यक्तियो को समझा कर सौदा पटाने रूप (दलाल की तरह) या किसी को ठगने के लिए किसी वस्तु की प्रशसा करने से लगने वाली क्रिया।

19. अनाभोगप्रत्यया– अनजानपने से- उपयोग- शून्यता से होने वाली क्रिया। इसके दो भेद है- 1 अनायुक्त आदानता- वस्त्र-पात्रादि

को बिना देखे ग्रहण करने और रखने रूप अप्रतिलेखना से। 2 अनायुक्त प्रमार्जनता- असावधानी से प्रतिलेखना प्रमार्जना करने से लगने वाली क्रिया।

20. अनवकाक्षा प्रत्यया- हिताहित की अपेक्षा से लगने वाली क्रिया। इसके स्व और पर- दो भेद है- 1 अपने हित की अपेक्षा नहीं रख कर अपने शरीर आदि को हानि पहुचाने रूप और 2 परहित की अपेक्षा नहीं रखकर दूसरो को हानि पहुचाने रूप अथवा इस लोक और परलोक की परवाह नहीं करके दोनो लोक बिगाडने रूप क्रिया।

21. प्रेम प्रत्यया- राग से लगने वाली क्रिया। इसके भी दो भेद है- 1 माया से और 2 लोभ से।

22. द्वेष प्रत्यया- इसके भी दो भेद है- 1 क्रोध से और 2 मान से।

23. प्रायोगिकी- इसके तीन भेद है- 1 मन का दुष्प्रयोग करना, 2 वचन का अशुभ प्रयोग करना और 3 काया का बुरा प्रयोग करने रूप क्रिया।

24 सामुदानिकी-बहुत से लोग मिलकर एक साथ, एक ही प्रकार की क्रिया करे, अच्छे-बुरे दृश्य देखे, या आरम्भजन्य कार्यो को साथ मिलकर करे, उसे सामुदानिकी क्रिया कहते है। इसके तीन भेद है- 1 सान्तर सामुदानिकी, 2 निरन्तर सामुदानिकी और 3 तदुभय सामुदानिकी।

25. ईर्यापथिकी- कषायरहित जीवो को योग मात्र से होने वाली क्रिया। इसके तीन भेद है- 1 उपशांत मोह वीतराग, 2 क्षीण मोह वीतराग और 3 सयोगी केवली को लगने वाली क्रिया।

OOO

अष्ट प्रवचन (पाँच समिति तीन गुप्ति) का थोकड़ा

श्री उत्तराध्ययन सूत्र के 24 वे अध्ययन मे समिति गुप्ति का वर्णन इस प्रकार बताया है -

समिति- प्राणातिपात (जीव हिसा) से निवृत्त मुनि की आवश्यक निर्दोष सम्यक् प्रवृत्ति को समिति कहते है, तथा उत्तम परिणामो की चेष्टा को अथवा यतना से प्रवृत्ति करने को समिति कहते है। इसके पॉच भेद है - 1 ईर्या समिति 2 भाषा समिति 3 एषणा समिति 4 आदान-भड-मात्र-निक्षेपणा समिति 5 उच्चार-प्रश्रवण-खेल-सिघाण- जल्ल परिस्थापनिका समिति।

गुप्ति- ससार के कारणो से आत्मा की सम्यक् प्रकार से रक्षा करना ''गुप्ति'' है। तीनो योगो (मन-वचन-काया) की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना भी गुप्ति है। इसके तीन भेद है- 1 मनोगुप्ति 2 वचन गुप्ति और 3 काया गुप्ति।

इन आठों को प्रवचन माता भी कहते हैं। जिस तरह माता अपने पुत्र पर अत्यन्त प्रेम करती है, उसका कल्याण चाहती है, वैसे ही कल्याणकारी होने से इन आठ गुणो को माता की उपमा दी जाती है। अथवा जिन प्रवचन रूप द्वादशागी वाणी का जिसमे समावेश हो जाए (प्रवचन जिसमे मा जाए अर्थात् समा जाए) उसे प्रवचन माता कहते है।

पाँच समिति का स्वरूप

(1) ईर्या समिति – आवश्यकता होने पर विवेक और उपयोग पूर्वक चलने को ईर्या समिति कहते है। ईर्या समिति के चार कारण होते हैं- 1. आलंबन 2 काल 3 मार्ग और 4 यतना।

1. आलंबन – भगवान ने ज्ञान दर्शन और चारित्र के प्रयोजन के*

✱ इनके सात भग इस प्रकार हैं- 1 ज्ञान, 2 दर्शन, 3 चारित्र, 4 ज्ञान और दर्शन 5 ज्ञान और चारित्र, 6 दर्शन और चारित्र, 7 ज्ञान दर्शन और चारित्र।

⊛ युग का परिमाण 96 अगुल होता है। 96 अगुल = 4 हाथ।

लिए गमनागमन करने की आज्ञा दी है। उक्त प्रयोजन के बिना गमनागमन करने की आज्ञा नहीं है।

2 काल – ईर्या का काल दिन का ही है। रात्रि मे दिखाई न देने के कारण अत्यन्त आवश्यक प्रयोजन के बिना गमन की आज्ञा नहीं है।

3 मार्ग – साधु टेढे या उजाड मार्ग से न जाकर सीधे राजमार्ग से चले। क्योकि कुमार्ग मे चलने से आत्मा और सयम की विराधना होने की सभावना रहती है।

4 यतना – यतना के चार भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव।

1 द्रव्य से– उपयोगपूर्वक जीवादि पदार्थो को देखता हुआ सयम तथा आत्मा को विराधना से बचाता हुआ चले।

2. क्षेत्र से– युगमात्र आगे की भूमि को देखकर यतनापूर्वक चले।

3. काल से– जब तक दिन रहे तभी तक यतना से चले फिरे।

4. भाव से– चलते समय अपने उपयोग को ठीक रखना, भाव यतना है। 5 इन्द्रियो के विषय (शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्श) तथा 5 प्रकार के स्वाध्यायो को छोडकर सिर्फ गमन क्रिया मे तन्मय होकर और उसी को प्रधानता देकर उपयोगपूर्वक गमन करे।

(2) भाषा समिति – आवश्यकता होने पर हित, मित, प्रिय और निर्दोष वचन बोलने को भाषा समिति कहते है। भाषा समिति के 4भेद–

1 द्रव्य 2 क्षेत्र, 3 काल और 4 भाव।

1. द्रव्य से– कठोरकारी, कर्कशकारी, छेदकारी, भेदकारी, निश्चयकारी, सावद्यकारी, क्लेशकारी और मिश्र इन आठ भाषाओ को तजकर निर्दोष, सत्य और परिमित भाषा बोले।

2. क्षेत्र से – रास्ते चलता हुआ नहीं बोले।

3. काल से – एक प्रहर रात्रि व्यतीत होने के बाद से लेकर सूर्योदय तक ऊँचे स्वर मे नहीं बोले।

4 भाव से – उपयोग सहित तथा रागद्वेष रहित भाषा बोले।

(3) एषणा समिति- 42 दोष टालकर निर्दोष और परिमित भिक्षादि ग्रहण करने को एषणा समिति कहते है।✪

एषणा समिति के 4 भेद है- 1 द्रव्य 2 क्षेत्र 3 काल 4 भाव।

1. द्रव्य से – उद्गम के 16, उत्पादना के 16 और एषणा के 10, इन 42 दोषो को टालकर आहार पानी, (वस्त्र, पात्र, मकान) आदि की गवेषणा करे।

2. क्षेत्र से – दो कोस (लगभग 7 किलोमीटर) उपरान्त ले जाकर अशनादि नहीं भोगे।

3. काल से – पहले प्रहर मे लाया हुआ अशनादि चौथे प्रहर मे नहीं भोगे।

4. भाव से – रागद्वेष रहित होता हुआ मांडला के पॉच दोषो को टालकर अशनादि भोगे।

(4) आदान-भंड-मात्र निक्षेपणा समिति- वस्त्र, पात्र आदि उपकरणो को देख और पूजकर यतना से उठाने, रखने और उपयोग करने को आदान भड मात्र निक्षेपणा समिति कहते है। उपधि दो प्रकार की होती है- 1 ओघोपधि और 2 औपग्रहिकोपधि।

1. ओघोपधि – जो हमेशा पास रखी जावे। जैसे- वस्त्र, पात्र, रजोहरण आदि। **2. औपग्रहिकोपधि**- जो सयम रक्षार्थ थोडे समय के लिए ग्रहण की जावे। जैसे- पाट, पाटला, शय्या आदि।

उपर्युक्त दो प्रकार के उपकरणो को ग्रहण करते तथारखते हुए उपयोग पूर्वक देखे तथा पूजे। आदान भंड मात्र निक्षेपणा समिति के 4 भेद- 1 द्रव्य, 2 क्षेत्र, 3 काल और 4 भाव।

1. द्रव्य से – भण्डोपकरण यतना से लेवे, यतना से रखे, एव यतना

✪ एषणा समिति 3 प्रकार की है- 1 गवेषणा, 2 ग्रहणैषणा 3 परिभोगैषणा।

1 **गवेषणा**-आहारादि ग्रहण करने से पूर्व शुद्धि अशुद्धि की खोज करना।

2. **ग्रहणैषणा**- आहारादि ग्रहण करते समय शुद्धि अशुद्धि की खोज करना और

3. **परिभोगैषणा**- आहारादि भोगते समय शुद्धि-अशुद्धि की खोज करना।

से वापरे तथा मर्यादा से ऊपर न रखे।

2. क्षेत्र से – इधर उधर बिखरे हुए न रखे, व्यवस्थित रखे।

3. काल से – कालोकाल उपयोगपूर्वक प्रतिलेखना करे।

4. भाव से – धार्मिक उपकरण रागद्वेष रहित होकर काम मे लेवे तथा राग द्वेष उत्पन्न करने वाली उपधि न रखे।

(5) उच्चार– प्रश्रवण– खेल– सिघाण– जल्ल– परिस्थापनिका समिति – मल-मूत्रादि त्याज्य वस्तुओ को 10 विशेषणो से युक्त स्थान मे उपयोग पूर्वक परठने को उच्चार-प्रश्रवण-खेल-सिघाण- जल्ल परिस्थापनिका समिति कहते है। इसके 4 भेद है- 1 द्रव्य 2 क्षेत्र 3 काल 4 भाव।

1. द्रव्य से – उच्चार (मल), प्रश्रवण (मूत्र), खेल (कफ), सिघाण (श्लेष्म) जल्ल (शरीर का मैल, पसीना आदि), आःहार (न खाने योग्य अशनादि) उपधि (उपकरण), शरीर (शव) तथा अन्य इसी प्रकार की परठने योग्य वस्तुओ को जहॉ तहॉ न फेककर 10 विशेषणो से युक्त स्थान(स्थण्डिल) मे परठे।

2. क्षेत्र से – 10 प्रकार के शुद्ध स्थण्डिल मे उच्चारादि परठे।

3. काल से – सूर्यास्त से पूर्व सध्याकाल मे स्थण्डिल भूमि की प्रतिलेखना करे।

4 भाव से – परठने जाते समय 3 बार आवस्सहि (आवस्सिया[2]) कहे। परठने के योग्य भूमि को देखे, पुजे और शकेन्द्र महाराज की आज्ञा लेकर लगभग 4 अगुल ऊँचे से यतनापूर्वक परठे। परठकर 3 बार वोसिरामि कहे। आते समय 3 बार निस्सही कहे। स्थान पर आकर ईर्यावहिया का कायोत्सर्ग करे।

तीन गुप्ति का स्वरूप

(1) मनोगुप्ति – आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, सरभ, समारभ और आरभ सबधित सकल्प और विकल्प न करना, धर्मध्यान शुक्लध्यान का चितन करना, मध्यस्थ भाव रखना व शुभ अशुभ योगो को रोक कर योग-निरोध

अवस्था मे होने वाली अन्तरात्मा की अवस्था को प्राप्त करना मनोगुप्ति है। यह 4 प्रकार की होती है-

1 सत्या 2 मृषा 3 सत्यामृषा और 4 असत्यामृषा।

पदार्थो के यथार्थ स्वरूप का चिन्तन करना सत्य मनोयोग है। इसे विषय करने वाली गुप्ति भी उपचार से सत्य कही जाती है। जैसे - 'जगत् मे जीव तत्व है'- इस प्रकार चिन्तन करना। इसके विपरीत असत्य मनोयोग है। उसे विषय करने वाली गुप्ति मृषा कहलाती है। जैसे- 'जगत मे जीवतत्व नहीं है'- ऐसा चिन्तन करना। दोनो प्रकार के मनोयोग को विषय करने वाली गुप्ति का नाम सत्यामृषा है। जैसे- आम्रादि विविधवृक्षो के वन को यह आम का वन है ऐसा चिन्तन करना। सत्य और असत्य दोनो प्रकार के विषयो से रहित मनोयोग का विषय करने वाली गुप्ति को असत्यामृषा कहते है। जैसे- हे देवदत्त ! घी का घडा लाओ। सरभ आदि को स्पष्ट करने के लिए निम्न लिखित उदाहरण दिए जाते है-

संरंभ- मै इसे परितापना दू या मारू, ऐसा मन मे विचार करना। **समारंभ-** किसी प्राणी को मानसिक संक्लिष्ट ध्यान द्वारा परितापना देना। **आरंभ-** किसी प्राणी को मानसिक संक्लिष्ट ध्यान द्वारा मार देना।

(2) **वचन गुप्ति** - संरंभ, समारंभ और आरभ सम्बन्धी अशुभ वचन का त्याग करना, विकथा न करना, मौन रखना वचन गुप्ति है। यह 4 प्रकार की होती है 1 सत्या 2 मृषा 3 सत्यामृषा और 4 असत्यामृषा। मनोगुप्ति मे मन के व्यापार का सबध है, वचन गुप्ति मे वचन के व्यापार का सम्बन्ध समझना चाहिए।

1. **संरंभ-** मै इसे परितापना दूगा या मारूगा, ऐसा सक्लिष्ट शब्द बोलना।

2. **समारंभ** - दूसरो को पीडा उत्पन्न करने वाला मंत्र गुनना।

3. **आरंभ** - सक्लिष्ट मत्र, जाप आदि के द्वारा मार देना।

(3) **काया गुप्ति-** उठना, बैठना, सोना, ऊचा चढना, खड्डे आदि का उल्लघन आदि क्रियाओ मे यतनापूर्वक प्रवृत्ति करना एवं सरम्भ, समारम्भ, आरभ आदि अशुभ प्रवृत्ति का त्याग करना कायागुप्ति है।

1. सरंभ– किसी प्राणी को परितापना देने या मारने के लिए हाथ, शस्त्र आदि उठाना। **2 समारंभ–** किसी प्राणी को हाथ, शस्त्र आदि चलाकर परितापना देना। **3. आरभ–** किसी प्राणी को हाथ, शस्त्रादि से मार देना।

पुन मन गुप्ति द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के भेद से चार प्रकार की होती है -

द्रव्य से– सरभ, समारभ और आरभ से मन को निवृत्त करे और शुभ व्यापार मे प्रवृत्ति करे।

क्षेत्र से– जहॉ-जहॉ भी विचरे। **काल से** – जीवन पर्यत।

भाव से – उपयोग सहित मन की अशुभ प्रवृत्ति का त्याग और शुभ प्रवृत्ति को धारण करे। इसी तरह वचन गुप्ति और कायागुप्ति के भी 4-4 भेद है। वचन गुप्ति मे मन की जगह वचन और कायगुप्ति मे मन के स्थान पर काया कहना चाहिए।

पूर्वोक्त आठ प्रवचन माताओ का जो मुनि सम्यक् प्रकार से आचरण करता है वह संसार से शीघ्र मुक्त हो जाता है।

परिशिष्ट

आहार के 47 दोष

गवेषणा संबंधी (16 उद्‌गम, 16 उत्पादना) दोष–

गृहस्थ (दाता) द्वारा लगने वाले उद्‌गम के 16 दोष –

गाथा – आहाकम्मुद्देसिय, पूइकम्मे य मीसजाए य।
ठवणा पाहुडियाए, पाओअर कीय पामिच्चे ॥1॥
परियट्टिए अभिहडे, उब्भिन्ने मालोहडेइय ।
अच्छिज्जे अणि सिट्ठे, अज्झोयरए य सोलसमे॥2॥

1. **आधाकर्म–** साधु के निमित्त बनाया हुआ आहारादि देवे।
2. **औद्देशिक–** जिस साधु के लिए आहारादि बना है, वही लेवे तो

'आधाकर्म' तथा अन्य साधु लेवे तो 'औद्देशिक' दोष है।

3. **पूतिकर्म**– शुद्ध आहार मे 'आधाकर्मी' आदि आहार का अशमात्र भी मिलाकर देवे।
4. **मिश्रजात**– अपने और साधु के लिए एक साथ बनाया हुआ आहार देवे।
5. **स्थापना** – साधु को देने की इच्छा से अलग रखे हुए आहार को देवे।
6. **प्राभृतिका** – साधुजी को विशिष्ट आहार बहराने के लिए मेहमान या जीमनवार के समय को आगे पीछे करे।
7. **प्रादुष्करण** – अधेरे मे अग्नि–दीप आदि का उजाला करके खिडकी बगैरह बनाकर आहारादि देवे।
8. **क्रीत** – साधु के लिए खरीद कर आहारादि देवे।
9. **प्रामीत्य** – साधु के लिए उधार लाकर आहारादि देवे।
10. **परिवर्तित** – साधु के लिए अदल–बदल करके लिया हुआ आहार देवे।
11. **अभिहृत** – साधु के लिए सामने लाकर आहारादि देवे।
12. **उद्भिन्न** – साधु को घी आदि बहराने के लिए बरतन का लेप (छदा) सील, पैकिग आदि खोलकर देवे।
13. **मालापहृत** –ऊपर नीचे या तिरछी दिशा मे जहाँ आसानी से हाथ न पहुँचे वहा निःसरणी आदि लगाकर आहारादि देवे।
14. **अच्छेद्य**– निर्बल से, अपने आश्रित नौकर चाकर या पुत्र वगैरह से छीनकर साधुजी को आहारादि देवे।
15. **अनिसृष्ट**– भागीदारी की वस्तु भागीदार की बिना इच्छा से देवे।
16. **अध्यवपूरक**– साधुओ का आगमन सुनकर बनते भोजन मे अधिक ऊर देवे।

विलक्षण मुनि इन दोषो को टालते हुए आहारादि लेते है।

साधु के द्वारा लगने वाले उत्पादना के 16 दोष

गाथा – धाई दूई निमित्ते, आजीव वणीमगे तिगिच्छा य।
कोहे माणे माया लोभे य हवति दस ए ए ॥1 ॥
पुव्विपच्छासथव विज्जा, मतेय चुण्णजोगे य ।
उप्पायणाइ दोसा, सोलसमे मूल कम्मे य ॥2॥

1 **धात्री** – धाय माता की तरह गृहस्थ के बचो को खिलाना-पिलाना आदि कार्य करके आहारादि लेवे।

2 **दूती** – गृहस्थ का सदेश उनके स्वजन को कहकर आहारादि लेवे।

3 **निमित्त** – भूत, भविष्य और वर्तमान को जानने के शुभाशुभ निमित्त बताकर आहारादि लेवे।

4 **आजीव**– स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से गृहस्थ को अपनी जाति, कुल आदि बताकर आहारादि लेवे।

5. **वनीपक** – भिखारी की तरह दीनता प्रगटकर आहारादि लेवे।

6 **चिकित्सा** – रोग का उपाय बताकर आहारादि लेवे।

7 **क्रोध** – क्रोध करके या गृहस्थ को श्रापादि का भय बताकर आहारादि लेवे।

8. **मान** – मै लब्धिवान हूँ, तपस्वी हूँ, बहुश्रुत हूँ इस प्रकार अभिमान पूर्वक आहारादि लेवे।

9. **माया** – छल कपट करके आहारादि लेवे।

10. **लोभ** – लोलुपतावश अच्छी वस्तुओ के लिए इधर उधर घूमे तथा गृहस्थ को किसी वस्तु का लोभ दिखाकर आहारादि लेवे।

11. **पूर्व पश्चात् संस्तव** – आहारादि लेने के पहले या पीछे दाता की प्रशसा करे।

12 **विद्या** – विद्या का प्रयोग करके या सिखाकर आहारादि लेवे।

13 **मंत्र** – मत्र का प्रयोग करके या सिखाकर आहारादि लेवे।

14. चूर्ण – अदृष्ट होने का अजनादि बताकर आहारादि लेवे।

15. योग – पादलेपन, वशीकरण आदि सिद्धि बताकर आहारादि लेवे।

16. मूलकर्म – गर्भाधान, गर्भपात आदि ससार परिभ्रमण कराने वाली सावद्य क्रिया बताकर आहारादि लेवे।

संयमवत सुसाधु इन दोषो को टालते हुए आहारादि लेते है।

ग्रहणैषणा के 10 दोष

गाथा– सकिय मक्खियनिक्खित्त, पिहिय साहरिय दायगुम्मीसे।
अपरिणय लित्त छड्डिय, एसण दोसा दस हवति ॥

1. संकित – साधु और गृहस्थ दोनो को आधाकर्मादि दोषो का सदेह होने पर आहारादि देवे या लेवे।

2. म्रक्षित – देते समय आहार, हाथ,पात्र आदि का सचित्त वस्तु•[1] से छू जाना (सघटा होना) तथा दान देने से पहले या बाद मे हाथ पात्रादि धोना।

3. निक्षिप्त – सचित्त वस्तु पर रखा हुआ आहार देवे या लेवे।

4. पिहित – सचित्त वस्तु से ढका हुआ आहार देवे या लेवे।

5. साहरित– असूजती वस्तु अलग करके उसी बर्तन से आहारादि देवे या लेवे।

6. दायक – बालक, वृद्ध, ग्लान, गर्भवती महिला•[2] आदि दान देने के अयोग्य हो, वे अयतना करते हुए बहरावे और लेवे।

7. उन्मिश्र – अचित्त के साथ सचित्त या मिश्र मिला हुआ आहारादि देवे या लेवे।

8. अपरिणत – जो पूर्णरूप से शस्त्र परिणत न हुआ हो, ऐसा

●[1] जीव सहित मिट्टी, नमक, पानी (कच्चा), अग्नि, कच्ची वनस्पति, बीज सहित फल आदि।

●[2] पिडनिर्युक्ति मे दायक के 40 दोष बताए हैं। देखे जैन स्तोक मजूषा भाग-1।

आहारादि देवे या लेवे।

9 लिप्त – तुरन्त की लीपी हुई गीली भूमि को उल्लघन कर आहारादि देवे या लेवे।

10 छर्दित – जिसके छींटे नीचे पड रहे हो ऐसा आहारादि देवे या लेवे।

उपरोक्त दोष साधु और गृहस्थ दोनो के निमित्त से लगते है। अत दाता आहारादि देते तथा साधु आहारादि लेते समय दोषो को टाले।

परिभौगैषणा (मांडला) के 5 दोष

माडला के दोष सिर्फ साधु को ही लगते है।

गाथा – सजोगापमाण च, इगाल धूम कारणे।
ए ए बायालीस दोषा, वज्जयति महामुणी॥

धर्म सग्रह अ 3, गाथा 23/पिडर्नियुक्ति गाथा 1

1 सयोजना– जिह्वा की लोलुपता के वश होकर स्वाद या गध बढाने के लिए खाद्य वस्तुओ को मिलाना। 2 **अप्रमाण**– जिह्वा स्वाद के लोभ से प्रमाण[`] से अधिक आहार करना। 3 **इगाल**– सरस आहार करते हुए आहार की या दाता की प्रशसा करते हुए खाना। यह गृद्धपना सयम को कोयले की तरह जला देता है। 4 **धूम** – अरस, विरस (प्रतिकूल) आहार करते हुए आहार की या दाता की निदा करना। यह दोष चारित्र रूपी ईधन के धुए की तरह है। 5. **अकारण** – साधु क्षुधा वेदनीयादि छः कारणो मे से किसी भी कारण के न होने पर आहारादि करे।

[`] आगम मे पुरुष के 32, स्त्री के 28, नपुसक के 24 कवल प्रमाण आहार वताया है। प्रत्येक व्यक्ति को उदर के 6 भाग करने चाहिए। उनमे से 3 भाग अन्न से, दो भाग पानी से, एक भाग हवा से भरे।

आहार करने के छः कारण

गाथा –वेयणवेयावच्चे, इरियट्ठाए य सजमट्ठाए।
तह पाणवत्तियाए, छट्ठ पुण धम्मचिन्ताए॥

(उत्तरा अ 26 गा.33)

1. **वेदना** – क्षुधावेदनीय कीशाति के लिए। 2. **वैयावृत्य**– अपने से बडे आचार्यादि की वैयावृत्य करने के लिए। 3. **ईर्यापथ**– मार्गादि की शुद्धि के लिए। 4. **संयमार्थ**– प्रेक्षादि सयम की रक्षा हेतु। 5. **प्राणप्रत्ययर्थ**– अपने प्राणो की रक्षा के लिए। 6. **धर्मचिन्तार्थ** – शास्त्रपठन-पाठन आदि धर्मचिन्ता के लिए।

आहार त्यागने के छः कारण

गाथा - आयंकेउवसग्गे, तितिक्खया बभचेर-गुत्तीसु।
पाणिदया तवहेउ, सरीर-वोच्छेयण ट्ठाए ॥

(उत्तरा अ. 26 गाथा 35)

1. **आतंक** – बीमार होने पर। 2. **उपसर्ग** – राजा, स्वजन, देव, तिर्यच द्वारा उपसर्ग किए जाने पर। 3. **ब्रह्मचर्य गुप्ति**– ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए। 4. **प्राणिदयार्थ** – प्राण, भूत, जीव और सत्वो की रक्षा के लिए। 5. **तपो हेतु** – तप करने के लिए 6. **संलेखना**– अतिम समय मे सलेखना से शरीर छोडने के लिए।

गृहीत आहारादि को 12 कारण से परठे – 1. आधाकर्मी, 2 औद्देशिक, 3 मिश्रजात, 4 पूर्तिकर्म, 5 सूर्योदय के पूर्व ग्रहण किया गया हो तो, 6 सूर्यास्त के बाद लाया हुआ या बचा हुआ हो तो, 7 दो कोस उपरान्त का हो तो, 8 प्रथम प्रहर का आहार पानी चतुर्थ प्रहर मे रह गया हो तो, 9 प्रासुक पानी (धोवनादि) मे कच्चे पानी के छींटे गिर गए हो तो, 10 नवदीक्षित के हाथ का हो तो 11 शय्यातर का हो तो, 12 साधु के निमित्त मोल लिया हुआ हो तो, इन सब दोषो

से युक्त आहार को परठने की भगवान की आज्ञा है।

स्थण्डिल के 10 विशेषण

गाथा - अणावायमसलोए, परस्सऽणुवघाइए।
समे अज्झुसिरे यावि, अचिरकालकयम्मि य।
वित्थिण्णे दूरमोगाढे, णासण्णे बिलवज्जिए।
तसपाणबीयरहिए, उच्चाराईणि वोसिरे॥

(उत्तरा अ 24, गा 17, 18)

1 जहाँ लोगो का आना जाना नहीं होता हो, न दृष्टि पडती हो।

2 जहा परठने से 1 सयम (छह काय) का उपधात 2 आत्मा का (शरीर विराधना) उपधात 3 प्रवचन उपघात (शासन की निन्दा) न हो। 3 जहाँ विषम ऊँची, नीची भूमि नहीं हो। 4 पोली भूमि नहीं हो तथा घास पत्ते आदि से ढकी भूमि न हो। 5 सचित्त भूमि न हो। 6 परठने योग्य भूमि कम से कम 1 हाथ लम्बी चौडी हो। 7 जो भूमि कम से कम 4 अगुल नीचे तक अचित्त हो। 8 जहाँ ग्राम - नगर उद्यानादि निकट न हो। 9 जहाँ चूहे आदि के बिल न हो।10 जहाँ द्वीन्द्रियादि त्रस प्राणी, बीज, लीलन, फूलनादि अन्य स्थावर प्राणी न हो। इन 10 विशेषणो से युक्त स्थान पर परठे।

--*--

तीन जागरणा का थोकड़ा

(भगवती सूत्र शतक 12 वाँ, उद्देशा पहला)

अहो भगवन् ! जागरणा कितने प्रकार की है? हे गौतम ! जागरणा तीन प्रकार की है- **1. धर्म जागरणा, 2. अधर्म जागरणा, 3. सुदक्खु जागरणा।**

(1) धर्म जागरणा के 4 भेद

1 आचार धर्म 2 क्रिया धर्म, 3 दया धर्म, 4 स्वभाव धर्म।

(1) आचार धर्म– के मूल भेद 5, उत्तर भेद- 39

1 ज्ञानाचार, 2. दर्शनाचार, 3 चारित्राचार 4 तपाचार 5 वीर्याचार (ज्ञानाचार के 8, दर्शनाचार के 8, चारित्राचार के 9, तपाचार के 12, वीर्याचार के 3 भेद, ये सब मिलाकर 39 उत्तर भेद हुए)।

ज्ञानाचार के 8 भेद– 1.कालाचार– शास्त्र मे जिस समय जो सूत्र पढने की आज्ञा है उस समय ही उसे पढना। **2. विनयाचार**– ज्ञानदाता गुरू का विनय करना। **3. बहुमानाचार**– ज्ञानी और गुरू के प्रति हृदय मे भक्ति और श्रद्धा के भाव रखना। **4. उपधानाचार**– ज्ञान सीखते हुए यथाशक्ति तप करना। **5. अनिह्नवाचार**– ज्ञान पढाने वाले गुरू का नाम नहीं छिपाना। **6. व्यंजनाचार**– सूत्र का शुद्ध उच्चारण करना। **7. अर्थाचार**– सूत्र का शुद्ध एवं सत्य अर्थ करना। **8. तदुभयाचार**– सूत्र का शुद्ध उच्चारण एवं शुद्ध अर्थ करे।

दर्शनाचार के 8 भेद – 1. निशंकिय– वीतराग सर्वज्ञ के वचनो मे संदेह नहीं करना। **2. निकंखिय** – परदर्शन की वांछा नहीं करना। **3. निव्वितिगिच्छा** – धर्म के फल मे संदेह नहीं करना। **4. अमूढदृष्टि**– पाखण्डियो (मिथ्यामत) का आडम्बर देखकर उसमे मोहित न होना। **5. उववूह**– गुणी पुरुषो को देखकर उनके गुणो की प्रशंसा करना तथा स्वयं भी उन गुणो को प्राप्त करने का प्रयत्न करना। **6. थिरीकरणे**– धर्म से डिगते प्राणी को धर्म मे स्थिर करे। **7. वच्छल**– अपने धर्म से एवं स्वधर्मी बंधुओ से वात्सल्य रखना। **8. प्रभावना**– कृष्ण वासुदेव और श्रेणिक राजा की तरह वीतराग प्ररूपित धर्म की उन्नति करना, प्रचार करना, दिपाना।

चारित्राचार के 8 भेद – 5 समिति, 3 गुप्ति।

तपाचार के 12 भेद– छः बाह्य तप और छः आभ्यातर तप। ये

12 प्रकार के तप, इहलोक और परलोक के भौतिक सुख की वाछा रहित, मान सम्मान की भावना से रहित करे।

वीर्याचार के 3 भेद– 1. धर्म के कार्य मे बलवीर्य को छिपावे नहीं। 2 पूर्वोक्त 36 बोलो मे उद्यम करे। 3 शक्ति अनुसार धर्म कार्य करे।

(2) क्रियाधर्म के 2 भेद– 1. करण सत्तरी 2 चरण सत्तरी।

1 करणसत्तरी के 70 भेद– (जो कार्य, प्रयोजन होने पर किया जाए)। 4 प्रकार की पिण्ड विशुद्धि, 5 समिति, 12 भावना, 12 भिक्षु पडिमा, 5 इन्द्रियो का निरोध, 25 प्रकार की प्रतिलेखना, 3 गुप्ति, 4 अभिग्रह ये सब मिलाकर 70 भेद हुए।

2 चरणसत्तरी (जो हमेशा काम मे आता है) **के 70 भेद–** 5 महाव्रत, 10 यतिधर्म, 17 प्रकार का सयम, 10 प्रकार की वैयावच्च, 9 वाड ब्रह्मचर्य की 3 रत्न (ज्ञान, दर्शन, चारित्र), 12 प्रकार का तप, 4 कषाय का निग्रह ये सब मिलाकर 70 भेद हुए।

(3) दयाधर्म के 8 भेद– 1. स्वदया– अपनी आत्मा को पाप से बचाना। **2. परदया–** दूसरे जीवो की रक्षा करना। **3. द्रव्य दया–** देखादेखी, लज्जा से या कुलाचार से दया पालना। **4. भावदया–** ज्ञान से जीव को जीवात्मा जानकर उस पर अनुकपा लाकर बचाना (जीव की रक्षा करना)। **5 व्यवहारदया–** श्रावक के लिए जिस तरह दया पालना कहा है- उसी तरह दया पालना, घर का कार्य करते हुए यतना रखना। **6 निश्चयदया–** अपनी आत्मा को कर्मबधन से छुडाना। पुद्गल पर वस्तु है उस पर से ममता उतारकर उसका परिचय छोडकर आत्मगुण मे रमण करना। जीव का कर्मरहित शुद्ध स्वरूप प्रगट करना। यह निश्चय दया 14वे गुणस्थान के अत मे पूर्णरूप से प्राप्त होती है। **7 स्वरूपदया–** किसी जीव को मारने के लिए उसको पहले अच्छी तरह खिलाते है, सार सभाल करते है व उसके शरीर को पुष्ट करते है। यह ऊपर से दिखावा मात्र है। क्योकि पीछे उसको मारने के परिणाम है। जैसे कि उ सूत्र

के सातवे अध्ययन मे बकरे का दृष्टात दिया गया है। **8. अनुबन्ध दया-** जीव को ऊपर से तकलीफ देवे किन्तु अंदर के परिणाम उसकी साता पहुँचाने के है। जैसे- माता पुत्र का रोग मिटाने के लिए उसे कडवी औषधि पिलाती है किन्तु अदर मे उसका भला चाहती है। जैसे पिता पुत्र को अच्छी शिक्षा देने के लिए ऊपर से ताडना तर्जना करता है मारता पीटता है किन्तु अन्दर मे उसका भला चाहता है। जैसे डॉ रोगी का चीर-फाड करता है जो देखने मे भयकर है किन्तु अन्दर का परिणाम उसका रोग मिटाकर अच्छा करने का है।

(4) स्वभाव धर्म के दो भेद (1) जीव स्वभाव धर्म (2) अजीव स्वभाव धर्म। जीव स्वभाव धर्म के दो भेद :- जीव स्वभाव से शुद्ध और कर्म के सयोग से अशुद्ध। जीव को विषय-कषाय के सयोग से विभाव परिणति होती है, वह जीव का अशुद्ध स्वभाव धर्म है और उस विभाव परिणति को दूर करके जीव अपने ज्ञानादि गुणो मे रमण करता है, वह जीव का शुद्ध स्वभाव धर्म है।

पुद्‌गल का एक वर्ण, एक गध, एक रस और दो स्पर्श मे रहना पुद्‌गल का शुद्ध स्वभाव धर्म है। धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन चारो के क्रमशः चलनगुण, स्थिरगुण, अवगाहनागुण और वर्तनागुण ये इनके शुद्ध स्वभाव धर्म है। ये अपने-अपने स्वभाव को छोडते नहीं है।

इससे अधिक वर्ण आदि मे जाना पुद्‌गल का विभाव धर्म है। इस प्रकार धर्म जागरणा के ये चार भेद बताये गए हैं।

(2) अधर्म जागरणा- संसार मे धन, कुटुम्ब, परिवार का सयोग मिलाना, उनके लिए आरम्भादिक करना, धन की रक्षा करना, उसमे एकाग्रदृष्टि रखना, यह अधर्म जागरणा है।

(3) सुदक्खु जागरणा- 'सु' का मतलब है भली (अच्छी) दक्खु का मतलब है चतुराईवाली जागरणा। यह जागरणा श्रावक के होती है। क्योकि श्रावक सम्यक् ज्ञान दर्शन सहित है। वह धन कुटुम्बादिक को

तथा विषय कषाय को बुरा समझता है। इनसे देशतः निवृत्त होता है। उदयभाव से उदासीनपने ससार मे रहता है। तीन मनोरथ का चिन्तन करता है। इसे सुदक्खु जागरणा कहते है।

--*--

तैंतीस चौकड़ी का थोकड़ा

(सूत्र श्री ठाणागजी के 4 थे ठाणे मे)

पहली चौकडी के चार बोल- (ससार घटाया)- 1 क्षायिक-सम्यक्त्व प्राप्त करके ससार किसने घटाया? श्रेणिक राजा, कृष्ण महाराज ने। 2. दान देकर ससार किसने घटाया? धन्ना, शालिभद्रजी ने। 3 शील पालकर ससार किसने घटाया? विजयसेठ, विजया सेठानी ने। 4. दयापाल कर ससार किसने घटाया? मेघरथ राजा, मेघकुमार।

दूसरी चौकडी के चार बोल(छोटे तो भी बडे) 1. तीर्थकर महाराज छोटे तो भी बडे। 2. साधुजी छोटे तो भी बडे। 3 राजा का राजकुमार, सेठ का पुत्र छोटे तो भी बडे। 4. सर्प का बच्चा और शेर का बच्चा छोटे तो भी बडे।

तीसरी चौकडी के चार बोल (समर्थ नही)- 1 तीर्थकर भ जीव को अजीव करने मे 2. भवी को अभवी करने मे 3. असन्नी को सन्नीकरने मे 4 आयुष्य को घटाने-बढाने मे समर्थ नहीं।

चौथी चौकडी के चार बोल (शीघ्र मोक्ष प्राप्त करे) 1 अपनी आत्मा के समान दूसरे की आत्मा को समझे तो 2 सभी जीवो पर समभाव रखे तो। 3. महीने मे छ· पौषध करे तो 4. कालोकाल प्रतिक्रमण करे तो जीव शीघ्र मोक्ष प्राप्त करे।

पाँचवी चौकडी के चार बोल (दुर्लभ) 1. आठ कर्म मे मोहनीय कर्म जीतना, 2 पॉच इन्द्रियो मे रसनेन्द्रिय जीतना 3 छ काय मे

वायुकाय की रक्षा करना 4. तीन योग मे मनयोग जीतना दुर्लभ है।

छट्टी चौकडी के चार बोल (शृंगार) 1. श्रोतेन्द्रिय का शृगार-शास्त्र श्रवण करना। 2. चक्षु का शृगार- जीवदया पालना। 3. रसनेन्द्रिय का शृंगार-मधुरवचन बोलना। 4. हाथ का शृगार- दान देना।

सातवीं चौकडी के चार बोल (नरक में जाने के कारण) 1. महाआरभी होवे, 2. महापरिग्रही होवे 3. मद्यमास का सेवन करे 4. पंचेन्द्रिय जीवो की घात करे।

आठवी चौकडी के चार बोल (तिर्यच में जाने के 4 कारण) 1. माया करें 2. दूसरो को ठगे 3. कूड तोल माप करे 4. झूठ बोले।

नवमी चौकडी के चार बोल (मनुष्य में जाने के कारण) 1. भद्र स्वभाव वाला 2. विनयवंत 3. दयावाला 4. ईर्ष्यारहित।

दसवीं चौकडी के चार (देवगति में जाने के कारण) 1. सराग सयम 2. सयमा संयमी 3. अकाम निर्जरा 4. बाल तपस्वी।

ग्यारहवीं चौकडी के 4 बोल (नारकी से आए की पहचान) 1. क्रोधी 2. हठाग्रही 3. मायाचारी 4. महापापी।

बारहवीं चौकडी के 4 बोल (तिर्यचगति से आए की पहचान) 1. आलसी 2. प्रमादी 3. अधिक आहार करने वाला 4. अति निद्रा लेने वाला।

13वीं चौकडी के 4 बोल (देवगति से आए हुए की पहचान) 1. उदार चित्त वाला 2. सुस्वर कंठी 3. मत्सरभाव रहित 4. गुरु महाराज का विनीत।

14 वीं चौकडी के 4 बोल (मनुष्य से आए हुए की पहचान) 1. विनीत 2. निर्लोभी 3. दया धर्म का पक्षकार 4. सभी का प्रियपात्र।

15 वीं चौकडी के 4 बोल (कठिन) 1. बलवान को क्षमा करनी 2. यौवनावस्था मे शील पालना 3 कृपण का दान देना 4 कायर का सयम पालना कठिन है।

16वी चौकडी के 4 बोल (विनाश) 1 पुरुष के योग से शील का **2.** सूर्य के योग से ऑखो का **3.** मान के योग से धन का **4.** शका के योग से सम्यक्त्व का विनाश होता है।

17वी चौकडी के 4 बोल (अजीर्ण) 1 तप का अजीर्ण- क्रोध **2** ज्ञान का अजीर्ण- अभिमान **3.** क्रिया का अजीर्ण- निन्दा **4** पेट का अजीर्ण - अपच।

18 वी चौकडी 4 बोल (नाश) 1. जागृत रहे तो चोर का नाश (भागे) **2** क्षमा करे तो क्लेश का नाश **3.** भगवान के दर्शन से- दरिद्रता का नाश **4** भ की वाणी सुने तो पाप का नाश।

19वी चौकडी के 4 बोल (गलना) 1 मन का गलना शुद्ध मन रखना **2** वचन का गलना भाषा विचार कर बोलना **3** काया का गलना जीव दया पालना **4** पानी का गलना कड्डा (गफ) कपडा रखना।

20वी चौकडी के 4 बोल (कषाय का वास) 1. क्रोध का वास कपाल मे। **2.** मान का गरदन मे **3** माया का हृदय मे एव **4** लोभ का वास सर्वाग मे होता है।

21वी चौकडी के 4 बोल (करे) 1. बिना कहे करे वह देवता **2** कहने से करे वह मनुष्य **3** कहने से भी ना करे वह मूर्ख। **4** मारने से भी नहीं करे वह पशु।

22वी चौकडी के 4 बोल (पुरुष) 1 उगे-उगे-भरत महाराज **2.** उगे और आथमे- ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती। **3.** आथमे और उगे-हरिकेशी मुनि **4** आथमे और आथमे- कालिया कसाई।

23 वी चौकडी के 4 बोल (कपायमान) 1. ससार का यज्ञ होम देखकर **2.** पॉच स्थावर का जन्ममरण देखकर **3.** ससार के जीवो का सुख-दुख देखकर **4. 7** वीं नरक के दु:खो को देखकर तीर्थकर देवो का हृदय कपायमान होता है।

24वी चौकडी के 4 बोल (पापी) 1. पक्षी मे कौवा (जीवित

मनुष्य के आखो का डोला निकालकर खा जाता है) 2 चतुष्पद मे गधा (जड सहित घास खा जाता है) 3. उरपरिसर्प मे सर्प और 4. मनुष्य मे क्रोधी।

25वीं चौकडी के 4 बोल (विष) 1. बिच्छु का विष- अर्धभरत जितना 2. सर्प का विष- पूर्ण भरत जितना 3. मेढक का विष- जम्बूद्वीप जितना 4. मनुष्य का विष- अढाई द्वीप जितना।

26 वी चौकडी के 4 बोल (लेखे लगा) 1. धर्म ध्यान करते दिन बीता तो बीता नहीं समझना 2. शील पालते यौवन गया तो गया नहीं समझना। 3. दान देते धन गया तो गया नहीं समझना 4. तप करते शरीर क्षीण हो गया तो गया नहीं समझना, मगर लेखे लगा ऐसा समझना।

27वी चौकडी के 4 बोल (मेरा) 1. बल मेरी भुजा का 2. चादनी मेरी ऑखो की 3. हेत मेरे गुरू महाराज का 4. सुख मेरा मुक्ति का।

28वीं चौकडी के 4 बोल (1 लाख योजन का) 1. जबूद्वीप 2. पालक विमान (पहले देवलोके) 3. सर्वार्थ सिद्ध विमान 4. अपइठान नरकावास (7 वीं नरक)

29वीं चौकडी के 4 बोल (45 लाख योजन का) 1. उड्डुक विमान (सौधर्म कल्प के प्रथम प्रस्तर का मध्यवाला विमान) 2 सीमंतक नामक नरकावास (पहली नरक के सीमात इन्द्रक नरकावास मे मध्यवर्ती प्रथम नरकावास) 3. मनुष्य क्षेत्र 4. सिद्धशिला।

30वीं चौकडी के 4 बोल (शूर) 1. क्षमा मे शूर- अरिहत महाराज 2. तप मे शूर -अणगार 3. दान मे शूर-कुबेर देवता 4. युद्द मे शूर-वासुदेव।

31वीं चौकडी के 4 बोल (घट बढ) 1. घटे आयुष्य 2. बढे तृष्णा 3. घटे नहीं बढे नहीं - वीतराग के वचन 4. घटे बढे परमाणु पुद्गल।

32वीं चौकडी के 4 बोल (नहीं) 1. क्रोध जैसा विष नहीं 2. क्षमा जैसा अमृत नहीं, 3 सतोष जैसा सुख नहीं 4. क्षुधा जैसी वेदना

नहीं।

33 वी चौकडी के चार बोल (करना) 1. युद्ध करना तो-8 कर्मो से 2. वश करनी तो अपनी आत्मा को 3. हेत करना तो गुरु महाराज से, 4 स्तुति/भक्ति करनी तो भगवान की।

नोट- इस थोकडे मे प्रचलित चौकडी से 16वी अजीर्ण एव 31वीं वमन के बोल हटाए गए है तथा 14 वी चौकडी के बोल आपेक्षित होने के कारण जोडे गए है।

आठ कर्म का थोकड़ा

श्री भगवती सूत्र शतक 7 उद्देशक 6 तथा शतक 8, उद्देशक 9 में कर्मो की प्रकृतिबंध के 85 कारण बताये और श्री पन्नवणा सूत्र पद 23, उद्देशक 1 मे कर्म-भोग के 93 कारण बताये है, वे इस प्रकार हैं-

कर्मो के नाम

1 ज्ञानावरणीय, 2. दर्शनावरणीय, 3. वेदनीय, 4. मोहनीय, 5. आयु, 6. नाम, 7. गोत्र और 8. अतराय।

परिभाषा

1 वस्तु के विशेष धर्म को जानना 'ज्ञान' कहलाता है और जिसके द्वारा ज्ञान ढाका जाय उसे **'ज्ञानावरणीय कर्म'** कहते है। जैसे बादलो से सूर्य ढक जाता है।

2 वस्तु के सामान्य धर्म को जानना 'दर्शन' कहलाता है उस दर्शन को आच्छादित करने वाले कर्म को **'दर्शनावरणीय कर्म'** कहते है। जैसे द्वारपाल के रोक देने पर राजा के दर्शन नहीं हो पाते।

3 जिस कर्म के द्वारा साता (सुख) और असाता (दु ख) का वेदन (अनुभव) हो, उसे **'वेदनीय कर्म'** कहते है, जैसे शहद लिपटी

तलवार के चाटने से सुख और जीभ कटने से दुःख होता है।

4 जिससे आत्मा मोहित (सत् और असत् के ज्ञान से शून्य) हो जाय उसे **'मोहनीय कर्म'** कहते है। जैसे मदिरा पीने से मनुष्य बे- भान हो जाता है।

5 जिस कर्म के उदय से जीव चार गतियो मे रुका रहे, उसे **'आयु कर्म'** कहते है। जैसे बेडी मे बधने से अपराधी रुक जाता है, पराधीन हो जाता है।

6 जिस कर्म से आत्मा गति आदि नाना पर्यायो का अनुभव करे (शरीर आदि बने या जो जीव के अमूर्तत्व गुण को प्रकट न होने दे) उसे **'नाम कर्म'** कहते है। जैसे चित्रकार अनेक प्रकार के चित्र बनाता है।

7 जिस कर्म के उदय से जीव उच्च-नीच कुलो मे उत्पन्न हो, उसे **'गोत्र कर्म'** कहते है। जैसे कुम्भकार छोटे-बडे बरतन बनाता है।

8 जिस कर्म से दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य (शक्ति) मे विघ्न उत्पन्न हो, उसे **'अन्तराय कर्म'** कहते है। जैसे राजा की आज्ञा होने पर भी भडारी दानप्राप्ति मे बाधक होता है।

8 कर्मो की 148 प्रकृतियाँ

ज्ञानवरणीय की 5, दर्शनावरणीय की 9, वेदनीय की 2, मोहनीय की 28, आयु कर्म की 4, नामकर्म की 93 (103) गोत्रकर्म की 2, अन्तराय की 5 प्रकृतिया हैं।

बन्ध के प्रकार

बन्ध-मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग के निमित्त से आत्म-प्रदेशो मे हलचल होती है, तब जिस क्षेत्र मे आत्म-प्रदेश है, उसी क्षेत्र मे रहे हुए अनन्तानत कर्मयोग्य पुदगल जीव के साथ बन्ध को प्राप्त

होते है। जीव और कर्म का यह बन्ध ठीक वैसा ही होता है, जैसा दूध और पानी का, अग्नि और लोहपिण्ड का। बन्ध के चार भेद है- 1 प्रकृति बन्ध, 2 स्थिति बन्ध, 3 अनुभाग बन्ध और 4 प्रदेश बन्ध।

1 प्रकृति बन्ध– जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म-पुद्गलो मे भिन्न-भिन्न स्वभावो का होना।

2 स्थिति बन्ध– जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म-पुद्गलो मे जीव के साथ लगे रहने की काल-मर्यादा।

3. अनुभाग बन्ध– इसे 'अनुभाग बन्ध' तथा 'रस बन्ध' भी कहते है। जीव के द्वारा ग्रहण किये हुए 'कर्म पुद्गलो' मे फल देने की न्यूनाधिक शक्ति।

4 प्रदेश बन्ध– जीव के साथ न्यूनाधिक परमाणु वाले कर्म-स्कन्धो का सम्बन्ध होना।

चारो बन्धो का स्वरूप समझाने के लिए मोदक (लड्डू) का दृष्टान्त दिया जाता है-

जैसे सोठ, पीपर, कालीमिर्च आदि से बनाया हुआ लड्डू वायुनाशक होता है। पित्तनाशक और कफनाशक पदार्थो से बनाया हुआ मोदक पित्त और कफनाशक होता है। इसी प्रकार आत्मा द्वारा ग्रहण किये हुए कर्म-पुद्गलो मे से किन्हीं मे ज्ञान गुण को आच्छादन करने की शक्ति होती है, किन्हीं दर्शन गुण, किन्हीं मे आत्मा के आनन्द गुण और किन्हीं मे अनन्त शक्ति को घात करने की शक्ति होती है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न कर्म-पुद्गलो मे भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रकृतियो का बन्ध होना 'प्रकृति बन्ध' कहलाता है।

कोई मोदक एक सप्ताह, कोई एक पक्ष, कोई एक मास तक प्रभावशाली रहता है,इसके बाद ये विकृत हो जाते है। मोदको की काल-मर्यादा के समान कर्मो की भी काल-मर्यादा होती है। इसी को 'स्थिति बन्ध' कहते है।स्थिति पूर्ण होने पर कर्म आत्मा से पृथक हो जाते हैं।

कोई मोदक रस मे अधिक मधुर होते है, तो कोई कम। कोई रस मे अधिक कटु होते है, तो कोई कम। इस प्रकार मोदको मे रसो की न्यूनाधिकता होती है, उसी प्रकार कुछ कर्म-पुद्गलो मे अशुभ या शुभ रस अधिक और कुछ मे कम होता है। इसी प्रकार कर्मो मे तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम और मन्द, मन्दतर, मन्दतम शुभा-शुभ रसो का बन्ध होना- 'रस बन्ध' है।

कोई मोदक परिमाण मे दो तोले का, कोई पाच तोले का और कोई पावभर का होता है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न कर्म-पुद्गलो मे न्यूनाधिक प्रदेश होना।

जीव सख्यात, असख्यात और अनन्त प्रदेशो से बने हुए कार्मण स्कन्ध को ग्रहण नहीं करता, परन्तु अन्तानन्त प्रदेश वाले स्कन्ध ग्रहण करता है।

प्रकृति बन्ध और प्रदेश बन्ध तो योग के निमित्त से होते है और स्थिति बन्ध व अनुभाग बन्ध कषाय के निमित्त से होते है।

कर्म बन्ध के कारण और फल

1. ज्ञानावरणीय कर्म छह प्रकार से बन्धता है। यथा-

1 णाणपडिणीययाए- ज्ञान और ज्ञानी की प्रत्यनीकता (विरोध) करने से, 2 णाणणिव्हवणयाए- ज्ञान और ज्ञानदाता का अपलाप करने से, 3 णाणतराएणं- ज्ञान प्राप्त करने वाले को अन्तराय डालने (बाधक बनने) से 4. णाणप्पओसेण- ज्ञान व ज्ञानी से द्वेष करने से, ज्ञान व ज्ञानी के दोष निकालने से है, 5 णाणच्चासायणाए- ज्ञान व ज्ञानी की आशातना करने से 6 णाणविसवायणाजोगेणं- ज्ञानी से विसवाद (वितण्डावाद करने से)।

इस कर्म का फल दस प्रकार का है– 1 श्रोतेन्द्रिय का आवरण , 2 श्रोतेन्द्रिय से होने वाले विज्ञान का आवरण, 3 चक्षुइन्द्रिय का आवरण 4 चक्षुइन्द्रिय से होने वाले विज्ञान का आवरण, 5 घ्राणेइन्द्रिय का आवरण 6 घ्राणेइन्द्रिय से होने वाले विज्ञान का आवरण, 7 रसना इन्द्रिय का आवरण 8 रसना इन्द्रिय से होने वाले विज्ञान का आवरण, 9 स्पर्शनेन्द्रिय का आवरण और 10 स्पर्श इन्द्रिय से होने वाले विज्ञान का आवरण।

2 दर्शनावरणीय कर्म–छ प्रकार से बन्धता है– यथा :–

1 दर्शन और दर्शनी की प्रत्यनीकता (विरोध) करने से, 2 दर्शन एव दर्शनी का अपलाप (लोप करने- छिपाने) करने से (3) दर्शन प्राप्त करने वाले को अन्तराय डालने (बाधक बनने) से, 4 दर्शन व दर्शनी से द्वेष करने से, 5 दर्शन व दर्शनी की आशातना करने से और 6 दर्शनी से विसवाद (वितण्डावाद) करने से।

इस कर्म का फल नौ प्रकार का हैं – 1 निद्रा, 2 निद्रानिद्रा 3 प्रचला 4 प्रचला प्रचला 5 स्त्यानगृद्धि 6 चक्षुदर्शनावरण 7 अचक्षुदर्शनावरण 8 अवधिदर्शनावरण वरण 9 केवलदर्शनावरण।

3 वेदनीय कर्म – 22 प्रकार से बधता है एवं 16 प्रकार से भोगा जाता है जिसके 2 भेद है– **1 सातावेदनीय कर्म 2 असातावेदनीय कर्म।**

सातावेदनीय कर्म–दस प्रकार से बंधता है।

1 पाणाणुकपयाए- बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवो पर अनुकम्पा (दया) करने से, 2 भूयाणुकपयाए- वनस्पतिकाय के जीवो की अनुकम्पा करने से, 3 जीवाणुकपयाए- पचेन्द्रिय जीवो की अनुकम्पा

⊛ यहाँ श्रोतेन्द्रिय आदि से तात्पर्य कान आदि द्रव्य इन्द्रिय नहीं किन्तु उनके विषय भूत क्षयोपशम समझना तथा विज्ञान का मतलब उन-उन इन्द्रियो के उपयोग से है।

करने से, 4. सत्ताणुकंपयाए- पृथ्वीकायादि चार स्थावरकाय जीवो की अनुकम्पा करने से। (उपरोक्त प्राणो, भूतो, जीवो और सत्त्वो को) 5 दुःख नहीं देने से, 6 शोक उत्पन्न नहीं करने से। 7. नहीं झुराने, पीडित नहीं करने से, 8 आसू नहीं गिराने से, 9 नहीं पीटने से और 10 परिताप (दुःख) उत्पन्न नहीं करने से।

इस कर्म का फल आठ प्रकार का है- 1 मनोज्ञ शब्द, 2 मनोज्ञ रूप, 3 मनोज्ञ गध, 4 मनोज्ञ रस, 5 मनोज्ञ स्पर्श, 6 इच्छित सुख, 7 अच्छे वचन, 8 शारीरिक सुख को प्राप्त होना।

असातावेदनीय कर्म-बारह प्रकार से बंधता है- 1 प्राण, भूत, जीव और सत्व को दुख देने से, 2 शोक कराने से, 3 झुराने से, 4 आसू गिराने से, 5. मार-पीट करने से, 6 परिताप उत्पन्न करने से तथा 7 प्राण, भूत, जीव, सत्त्व को बहुत दु ख देने से, 8 बहुत शोक कराने से, 9 बहुत झुराने से, 10 बहुत आसु गिराने से 11 बहुत मारपीट करने से तथा 12 बहुत परिताप उत्पन्न करने से।

इसका फल आठ प्रकार का है- 1 अमनोज्ञ शब्द 2 अमनोज्ञ रूप, 3 अमनोज्ञ गध, 4 अमनोज्ञ रस 5 अमनोज्ञ स्पर्श 6 मन का दुख, 7 वचन का दुख 8 काया का दुख।

4. मोहनीय कर्म- छह प्रकार से बंधता है-[©] 1 तीव्र क्रोध करने से, 2. तीव्र मान करने से, 3 तीव्र माया करने से, 4 तीव्र लोभ करने से, 5 तीव्र दर्शन मोहनीय से और 6 तीव्र चारित्र मोहनीय से। **यह कर्म अट्ठाईस प्रकार से भोगा जाता है।**

इसके मुख्य दो भेद हैं- 1 दर्शन मोहनीय और 2 चारित्र मोहनीय। दर्शन मोहनीय के तीन भेद है- 1. मिथ्यात्व मोहनीय, 2. मिश्र मोहनीय, 3 सम्यक्त्व मोहनीय। चारित्र मोहनीय के भी दो भेद है- कषाय मोहनीय

© भगवती सूत्र श. 7 उ 6।

और नोकषाय* मोहनीय। कषाय मोहनीय के सोलह भेद है- अनन्तानुबन्धी- 1 क्रोध, 2 मान, 3 माया और 4 लोभ। अप्रत्याख्यानी, 5 क्रोध, 6 मान, 7 माया और 8 लोभ। प्रत्याख्यानावरण- 9 क्रोध, 10 मान, 11 माया और 12 लोभ। सज्वलन- 13 क्रोध, 14 मान, 15 माया और 16 लोभ।

नोकषाय के नौ भेद हैं- 1 हास्य, 2 रति 3 अरति, 4 भय, 5 शोक, 6 जुगुप्सा, 7 स्त्रीवेद, 8 पुरुषवेद और 9 नपुसक वेद- ये सब मिलाकर अट्ठाईस भेद हुए।

1. अनन्तानुबन्धी क्रोध- जैसे पत्थर पर दरार पडने से वह मिट नहीं सकती अथवा पर्वत के फटने से जो दरार होती है, उसका मिलना कठिन है, उसी प्रकार जो क्रोध शात न हो वह अनन्तानुबधी क्रोध है। **मान** - जैसे पत्थर का खम्भा नमता नही, वैसे ही जो मान दूर न हो, उसे अनन्तानुबधी मान कहते है। **माया**- जैसे बिल्कुल टेढी-मेढी बास की जड का टेढापन मिटना कठिन है। उसी प्रकार जो माया अमिट हो, उसे अनन्तानुबधी माया कहते है। **लोभ**-जैसे किरमिची रग का छूटना दुष्कर है, उसी प्रकार जो लोभ छूट न सके, उसे अनन्तानुबधी लोभ कहते है।

इस चौकडी वाला नरक गति मे उत्पन्न होता है। स्थिति यावज्जीवन की है और सम्यक्त्व का घात करता है।

2. अप्रत्याख्यानी क्रोध - पानी सूखने से तालाब मे जो दरार पड जाती है, वह आगामी वर्ष मे वर्षा होने पर मिटती है, उसी प्रकार जो क्रोध, विशेष परिश्रम से शात हो, उसे अप्रत्याख्यानी क्रोध कहते है। **मान**-हाथीदात के खम्भे की तरह जो बडी मुश्किल से झुकता हो, वह

---

* हास्य आदि कषायो को उत्तेजित करते हैं और उनके सहचारी है। इसलिए उन्हें नो (ईषत्) कहते है।

अप्रत्याख्यानी मान है। **माया**- मेढे के सींग की तरह जो कठिनाई से सीधा हो, उसे अप्रत्याख्यानी माया कहते है। **लोभ**- गाडी के आईल (खजन) की तरह अति कष्ट से छूटे, वह अप्रत्याख्यानी लोभ है।

इस चौकडी से तिर्यच गति होती है। इसकी स्थिति बारह महीने की है। यह श्रावक व्रत का घात करती है।

3. प्रत्याख्यानावरण क्रोध- जैसे रेत मे खिची हुई लकीर बहुत काल तक नहीं रहती, इसी प्रकार जो क्रोध बहुत काल तक न ठहरे, उसे प्रत्याख्यानावरण क्रोध कहते है। **मान**- बेत के खम्भे की तरह जिस मान को झुकाने के लिए बहुत अधिक श्रम न करना पडे, उसे प्रत्याख्यानावरण मान कहते है। **माया**- चलता हुआ बैल पेशाब करता है तो टेढी लकीरे हो जाती है, उनका मिटना अति कष्ट साध्य नहीं होता, उसी प्रकार जिस माया का मिटना कठिन न हो, उसे प्रत्याख्यानावरण माया कहते है। **लोभ**- दीपक के काजल के समान जो लोभ थोडी कठिनाई से छूटे, उसे प्रत्याख्यानावरण लोभ कहते है। इससे मनुष्य गति का बन्ध होता है। स्थिति 4 महीने की है। ये सकल संयम का घात करती है।

4. संज्वलन- क्रोध- पानी मे खींची हुई लकीर के समान शीघ्र ही शात हो जाता है, उसे सज्वलन क्रोध कहते है। **मान**- तिनके के खम्भे के समान शीघ्र ही नम जाय, उसे सज्वलन मान कहते है। **माया**- बास का छिलका जैसे सरलता से सीधा किया जा सकता है, उसी प्रकार माया बिना विशेष श्रम के दूर हो जाय, उसे संज्वलन माया कहते हैं। **लोभ**-हल्दी के रग के समान जो सहज ही छूट जाए,उसे सज्वलन लोभ कहते है। इस चौकडी से देवगति का बन्ध होता है। क्रोध की स्थिति दो माह की, मान की एक माह की, माया की पंद्रह दिन की और लोभ की अन्तर्मुहुर्त की है। यह कषाय यथाख्यात चारित्र का घात करती हे (यह कषाय का सामान्य लक्षण है)।

5 आयुकर्म सोलह प्रकार से बंधता है और चार प्रकार से भोगा जाता है -

नरकायु चार प्रकार से बधता है -

1 महाआरम्भ करने से, 2 महापरिग्रह करने से,

3 मद्य, मास का सेवन करने से 4 पचेन्द्रिय की घात करने से।

तिर्यच आयुष्य चार प्रकार से बधता है-

1 माया करने से 2 गूढ माया करने से

3 असत्य बोलने से 4 न्यूनाधिक नापने-तोलने से

मनुष्य का आयुष्य चार प्रकार से बधता है-

1 प्रकृति की भद्रता से 2 प्रकृति की विनीतता से

3 दयाभाव रखने से और 4 मद-मत्सर भावरहित होने से।

देवता का आयुष्य चार प्रकार से बधता है-

1 सराग सयम पालने से 2 देश सयम पालने से

3 बाल तपस्या करने से और 4 अकाम निर्जरा करने से।

आयुकर्म चार प्रकार से भोगा जाता है-

1 नरकायु, 2 तिर्यचायु 3 मनुष्यायु और 4 देवायु।

6 नाम कर्म आठ प्रकार से बधता है, और 28 प्रकार से भोगा जाता है। यह दो प्रकार का है-

1 शुभ नाम कर्म और 2 अशुभ नामकर्म

शुभ नाम कर्म चार प्रकार से बधता है-

1 काया की सरलता 2 वचन की सरलता

3 भावो की सरलता और 4 विसवाद रहितता से,

यह चौदह प्रकार से भोगा जाता है-

1 इष्ट शब्द, 3 इष्ट रूप, 3 इष्ट गध, 4 इष्ट रस, 5 इष्ट स्पर्श, 6 इष्ट गति, 7 इष्ट स्थिति, 8 इष्ट लावण्य, 9 इष्ट यश·कीर्ति,

10 इष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार- पराक्रम, 11 इष्ट स्वर, 12 कान्त स्वर, 13 प्रिय स्वर और 14 मनोज्ञ स्वर

अशुभ नाम कर्म चार प्रकार से बधता है

1 काया की सरलता 2 वचन की सरलता

3 भावो की सरलता और 4 विसवाद रहितता से,

यह चौदह प्रकार से भोगा जाता है-

1 इष्ट शब्द, 3 इष्ट रूप, 3 इष्ट गध, 4 इष्ट रस, 5 इष्ट स्पर्श, 6 इष्ट गति, 7 इष्ट स्थिति, 8 इष्ट लावण्य, 9 इष्ट यशःकीर्ति, 10 इष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार- पराक्रम, 11 इष्ट स्वर, 12 कान्त स्वर, 13 प्रिय स्वर और 14 मनोज्ञ स्वर

अशुभ नाम कर्म चार प्रकार से बधता है

1 काया की वक्रता (बाकापन) 2 वचन की वक्रता

3 भावो की वक्रता 4 विसवाद योगयुक्तता✿ से।

यह चौदह प्रकार से भोगा जाता है-

1 अनिष्ट शब्द, 2 अनिष्ट रूप, 3 अनिष्ट गध, 4 अनिष्ट रस, 5 अनिष्ट स्पर्श, 6 अनिष्ट गति, 7 अनिष्ट स्थिति, 8 अनिष्ट लावण्य 9 अनिष्ट यशःकीर्ति, 10 अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम, 11 हीन स्वर, 12 दीन स्वर, 13 अनिष्ट स्वर और 14 अमनोज्ञ स्वर से।

7. गोत्रकर्म सोलह प्रकार से बधता है और सोलह प्रकार से भोगा जाता है।इसके दो भेद है-

1. उच्च गोत्र और 2 नीच गौत्र।

उच्च गोत्र आठ प्रकार से बंधता है।

1 जाति का, 2 कुल का, 3. बल का, 4 रूप का, 5 तपस्या

✿ कहना कुछ, करना कुछ और सोचना कुछ, अर्थात् मन, वचन, काया का एक रूप न होना विसवादन है।

का 6, श्रुत का, 7 लाभ का, 8 ऐश्वर्य का मद न करने से।

यह उच्च गोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है, अर्थात् इनका मद न करने से जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ और ऐश्वर्य उच्च (श्रेष्ठ) गोत्र पाता है।

नीच गोत्रकर्म आठ प्रकार से बंधता है और आठ प्रकार से भोगा जाता है– पूर्वोक्त जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ और ऐश्वर्य का घमण्ड करने से बधता है और इनका घमण्ड करने से नीच गोत्र भोगा जाता है।

8 अन्तरायकर्म – पांच प्रकार से बंधता है और पाच प्रकार से भोगा जाता है। यह दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य मे अन्तराय डालने से बधता है और इससे पाचो अतराय की प्राप्ति होती है।

आठकर्म की स्थिति और आबाधाकाल⊛

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय की ज स्थिति अन्तर्मुहूर्त उ 30 कोडाकोडी सागरोपम। आबाधाकाल उ 3000 वर्ष का। सातावेदनीय की ज स्थिति 2 समय की (इरियावहिया क्रिया की अपेक्षा) तथा 12 मुहूर्त (साम्परायिक की अपेक्षा) उ 15 कोडाकोडी सागरोपम की। आबाधाकाल डेढ हजार वर्ष का। असातावेदनीय की ज स्थिति 1 सागर के 7 भाग मे से तीन भाग और पत्योपम का अस भाग कम उ 30 कोडाकोडी सागरोपम की। आबाधाकाल 3000 वर्ष का। मोहनीय की ज स्थिति अन्तर्मुहूर्त उ 70 कोडाकोडी सागर। आबाधाकाल उ 7000 वर्ष का। आयु कर्म की ज स्थिति नारकी तथा देवो की स्थिति ज अतमुहूर्त अधिक 10 हजार वर्ष की, उत्कृष्ट $^1/_3$ करोड पूर्व अधिक 33 सागर की है। मनुष्य तथा ति की स्थिति ज

⊛ कर्मबन्ध होने के प्रथम समय से लेकर जब तक उस कर्म का उदय या उदीरणा नहीं होती, परन्तु आत्मा मे सत्तारूप से स्थिर रहता है तब तक के काल को आबाधाकाल कहते हैं।

अंत , उत्कृष्ट $^1/_3$ करोड अधिक 3 पल्य की है। आबाधा काल नहीं। नाम और गौत्र की ज. स्थिति आठ मुहूर्त की उ 20 कोडाकोडी सागर की और आबाधाकाल उ 2000 वर्ष का है। सभी कर्म का ज आबाधाकाल अन्तर्मुहूर्त का है।

--*--

छः काय का थोकड़ा

सूत्र श्री पन्नवणा के छठे पद मे छः काय का थोकडा चलता है जिसके द्वार आठ है-

1 नाम द्वार । 2 गोत्र द्वार। 3 वर्ण द्वार ।
4 स्वभाव द्वार । 5 सठाण द्वार । 6 कुल कोडी द्वार।
7 जन्म-मरण द्वार। 8 अल्प बहुत्व द्वार।

नाम द्वार

1 इन्दे थावरकाए 2 बम्भे थावरकाए, 3 सिप्पे थावरकाए
4 समती थावरकाए 5 पायावच्चे थावरकाए 6 जंगमकाए।

गोत्र द्वार

1. पृथ्वीकाय 2. अप्काय 3 तेउकाय
4 वायुकाय 5 वनस्पतिकाय 6 त्रसकाय

वर्ण द्वार

1. पृथ्वीकाय का वर्ण पीला 2 अप्काय का लाल
3 तेऊकाय का सफेद 4 वायुकाय का नीला
5 वनस्पतिकाय का काला 6 त्रसकाय का नाना प्रकार का

स्वभाव द्वार

1 पृथ्वीकाय का स्वभाव कठोर 2 अप्काय का स्वभाव ढीला
3 तेउकाय का स्वभाव उष्ण 4 वायु काय का स्वभाव वाजना
5-6 वनस्पतिकाय एव त्रसकाय का स्वभाव अनेक प्रकार का।

संठाण द्वार

1 पृथ्वीकाय का सठाण चन्द्रमा या मसूर की दाल के समान।
2 अप्काय का सठाण पानी के बुलबुले के समान।
3 तेउकाय का सठाण सुई के भारे के समान।
4 वायुकाय का सठाण ध्वजा-पताका के समान।
5-6 वनस्पतिकाय व त्रसकाय का सठाण अनेक प्रकार का।

कुल कोड़ी द्वार

पृथ्वीकाय की 12 लाख,अप्काय की 7 लाख, तेउकाय की 3 लाख, वायुकाय की 7 लाख, वनस्पतिकाय की 28 लाख, बेइन्द्रिय की 7 लाख, तेइन्द्रिय की 8 लाख, चउइन्द्रिय की 9 लाख, जलचर की 12॥ लाख, थलचर की 10 लाख, खेचर की 12 लाख, उरपरिसर्प की 10 लाख, भुजपरिसर्प की 9 लाख, नारकी की 25 लाख, देवता की 26 लाख, मनुष्यो की 12 लाख, कुल कोडी (जीवो के अनेक प्रकारो को) एक करोड साढे सत्याणवे लाख।

जन्म-मरण द्वार

अहो भगवन् ! चार स्थावर के जीव एक मुहुर्त मे कितने जन्म-मरण करते है ?

जघन्य एक उत्कृष्ट 12,824 बार जन्म मरण करते है।

वनस्पति के तीन भेद- 1 सूक्ष्म,2 साधारण 3 प्रत्येक

इन सबके जन्म-मरण जघन्य, 1, उत्कृष्ट सूक्ष्म वनस्पति के 65,536, साधारण वनस्पति के 32,000, प्रत्येक वनस्पति के जीव 16,000 जन्म मरण करे, बेइन्द्रिय के 80, तेइन्द्रिय के 60, चौरिन्द्रिय के 40, असन्नी पंचेन्द्रिय के 24, सन्नी पचेन्द्रिय जघन्य उत्कृष्ट 1।

अल्प-बहुत्व द्वार

सबसे कम त्रसकाय इससे तेउकाय अस गुणा इससे पृथ्वीकाय विशेषाधिक, इससे अप्काय विशेषाधिक इससे वायुकाय विशेषाधिक इससे सिद्ध भ अनन्त गुणा इससे वनस्पति काय अनतगुणा।

छः काय परिशिष्ट

1. **पृथ्वीकाय**- एक चने जितनी मिट्टी मे भगवान ने असख्यात जीव बताए है। वे सभी जीव निकाल कर कबूतर-कबूतर जितना शरीर बनावे, तो एक लाख योजन के इस जम्बूद्वीप मे नहीं समाए।
2. **अप्काय** -एक पानी की बूद मे भगवान ने असख्य जीव बताए है। वो सभी जीव वहां से मरकर भौरे-भौरे जितना शरीर बनाए तो एक लाख योजन के इस जम्बूद्वीप मे नहीं समाए।
   (**नोट**- आधुनिक वैज्ञानिक स्कोर्स बीन ने भी पानी की एक बूद मे माइक्रोस्कोप से 36,450 जीव चलते-फिरते देखे है, जिसका फोटो भी प्रकाशित किया।)
3. **तेऊकाय**-एक अग्नि की चिगारी मे भगवान ने असख्य जीव बताए है। वे सभी जीव मरकर सरसो-सरसो जितना शरीर बनाए तो एक लाख योजन के इस जम्बूद्वीप मे नहीं समाए।
4. **वायुकाय**- चुटकी बजाने से, खुले मुह बोलने से, पखा चलाने से, कपड़ा झटकने से, ताली बजाने से आदि क्रियाओ मे कृत्रिम अचित्तवायु उत्पन्न होती है। इससे प्राकृतिक सचित्त वायुकाय के

जीवो की हिसा होती है। एक चुटकी वायु मे भगवान ने असख्य जीव बताए है। वे सभी जीव निकलकर, खसखस-खसखस (पोस्तदाना) जितना शरीर बनाए तो एक लाख यो के इस जम्बूद्वीप मे नही समाए।

5. **वनस्पतिकाय** – जमीकन्द (आलु, प्याज) आदि वनस्पति का टुकडा, जो मात्रा मे सुई की नोक पर ठहर सके, उसमे असख्यात प्रतर है। एक-एक प्रतर मे असख्य श्रेणी है, एक-एक श्रेणी मे असख्य गोले है। एक-एक गोले मे असख्य शरीर है तथा एक शरीर मे अनत जीव है।

भव्यात्माओ ! प्रभु ने वनस्पति 24 लाख प्रकार की बताई है। उन सभी का हम त्याग नहीं कर सकते फिर भी यदि 100-200 आदि प्रमाण मे खुली रखकर बाकी वनस्पति के त्याग करते है तो भी लाखो प्रकार की वनस्पति के अनत जीवो की दया पालकर हम अपनी तरफ से उन्हे अभयदान दे सकते है। अत आप वनस्पति की मर्यादा (सौगन्ध) करे व अन्य जीवो को भी इस त्याग की प्रेरणा दे।

6 **त्रसकाय**– त्रसकाय मे सभी हलते चलते जीव है। जो सख्यात् असख्यात् होते है।

ऐसा जानकर जो भवि आत्मा उपर्युक्त छ.काय की जीवदया पालेगा, उसका परम कल्याण होगा।

श्रावक की दिनचर्या

जीवन निर्माण और विकास के लिए नियमितता और व्यवस्थितता होना अनिवार्य है। नियमित और व्यवस्थित जीवन बिताने वाले व्यक्ति ही जीवन मे सफलता प्राप्त करते है। श्रावक का जीवन भी व्यवस्थित एव नियमित होना चाहिए। इसलिए ग्रन्थकारो ने श्रावक के दैनिक कर्त्तव्यो

को बताने वाली दिनचर्या का वर्णन किया है। उस दिनचर्या के अनुसार अपनी दिनचर्या रखने वाला श्रावक जीवन ध्येय मे सफलता प्राप्त कर कल्याण और निर्वाण का अधिकारी होता है। श्रावक की दिनचर्या इस प्रकार बताई गई है-

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत् परमेष्ठिक स्तुति पठन्।
कि धर्मा किं कुलश्चास्मि किं व्रतोऽस्मीति च स्मरन्॥

श्रावक को ब्रह्म मुहूर्त मे जागृत हो जाना चाहिए। कम से कम दो घडी रात्रि शेष रहते हुए अवश्य जागृत होना चाहिए। ब्रह्म मुहूर्त का जागरण धार्मिक व शारीरिक दृष्टि से अत्यन्त गुणकारी है। इस समय के वायुमडल मे ऐसे तत्व विद्यमान रहते है जो तन और मन को, हृदय और मस्तिष्क को प्रेरणा, स्फूर्ति, उत्साह एव चेतना प्रदान करते है। जो व्यक्ति ऐसे समय को नींद मे गवा देते है वे अपने जीवन की सुनहरी घडियो को खो देते है। अतः श्रावक को ब्रह्म मुहूर्त मे जागृत हो जाना चाहिए।

श्रावक को परमेष्ठी नमस्कार मन्त्र उच्चारण करते हुए जागना चाहिए। तत्पश्चात श्रावक को आत्मदर्शन और कर्त्तव्य विचार करना चाहिए। मैं कौन हूॅ, मेरा धर्म क्या है, मैने किस कुल मे जन्म लिया है, मैने क्या-क्या व्रत स्वीकार कर रखे है, मेरा कौटुम्बिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा धार्मिक कर्त्तव्य क्या है? आदि बातो का उस समय विचार करना चाहिए। ऐसा करने से उस दिन के कार्यो की पूर्वभूमिका बन जाती है और अपने व्रत, धर्म, कुल आदि की विचारणा से, उनके विरुद्ध आचरण करने से बचने की सहज प्रेरणा (मिलती है) प्राप्त होती है। तत्पश्चात् उस दिन के लिए कोई विशेष प्रत्याख्यान लेना चाहिए। तत्पश्चात् शारीरिक आवश्यक क्रियाओ से निवृत्त होकर धर्मस्थान मे जाना चाहिए। धर्मस्थान मे जाकर विधिवत् साधु सतियो को वदन करना चाहिए। गुरु की पर्युपासना से विशुद्ध होकर श्रावक गुरु के सम्मुख पूर्वगृहित प्रत्याख्यान प्रकाशित करे अथवा गुरु की साक्षी से नवीन प्रत्याख्यान करे तत्पश्चात्

अपना श्रावकत्व सार्थक करने के लिए गुरुजनो से जिनवाणी का अनुरागपूर्वक श्रवण करे। श्रवण किये अर्थ का सम्यक् रीति से चिन्तन, मनन, निदिध्यासन करे। आगम-वाणी से ज्ञात होने वाले कर्त्तव्यो का यथाशक्ति पालन करना चाहिए। सामायिक, सवर आदि शक्य अनुष्ठानो का आचरण करना चाहिए और दु शक्य अनुष्ठानो के आचरण की भावना रखनी चाहिए। जो व्यक्ति अपने से अधिक उच्चकोटि के अनुष्ठानो का आचरण करते है, उनकी प्रशसा करनी चाहिए। ऐसा करने से गुणो का अनुमोदन होता है और गुणियो को प्रोत्साहन मिलता है।

धर्मस्थान मे बैठकर विधिपूर्वक स्वाध्याय करना चाहिए। तत्वो का चिन्तन करना चाहिए। जो गूढ प्रश्न समझ मे न आए तो गुरु के समीप विनयपूर्वक पूछ कर उनसे समाधान पाना चाहिए। ऐसा करने के पश्चात् श्रावक का कर्त्तव्य है कि वह चतुर्विध सघ के लिए हितकारी और करने योग्य कार्य की ओर दृष्टिपात करे। ज्ञानाभ्यासी रोगी, बाल, वृद्ध और अन्य साधुओ को निरवद्य आवश्यक सामग्री सुलभ हो, इसका ध्यान रखे। सहधर्मी बन्धुओ की स्थिति का विचार करे और विपद्ग्रस्तो की उचित रीति से सहायता करने का प्रयत्न करे। कहा है-

स्वाध्यायं विधिवत् कुर्यादुद्धरेच्च विपद् हतान्।
पक्वज्ञानादयस्सेवा गुणा सर्वेऽपि सिद्धिदा ॥

तदनन्तर व्यावहारिक कार्यो के प्रति सजग रहना चाहिए। इन प्रवृत्तियो को करते हुए सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी प्रकार की नीति और धर्म का खण्डन न हो। लौकिक व्यवहार करते हुए श्रावक को निम्न बातो पर ध्यान देना चाहिए-

1 नीतिमय अर्थार्जन, 2 पापमय आजीविका का परिहार, 3. लोकापवाद भीरुता, 4 विभवोचित योग्य क्षेत्र मे दान, 5. राष्ट्र विरोधी प्रवृत्ति का परिहार, 6 सामाजिक सस्थाओ का पोषण, 7 दुखी जीवो पर यथाशक्ति द्रव्य और भाव से अनुकम्पा, 8. परोपकार, 9. जिन-

शासन की उन्नति करने वाली विविध प्रवृत्तियो और 10. बहुगुण एव अल्प दोषमय प्रवृत्ति।

भोजन का समय होने पर नियमित रूप से सात्त्विक भोजन करे। भोजन करने से पूर्व निम्न बातो का अनुष्ठान करना गृहस्थ का कर्तव्य बताया गया है, यथा-

जिण पूजोचिय दाणं परियणा सभालणा उचित किच्चं।
ठाणु व वे सो य तहा पच्चक्खाणस्स संभरणं॥

भोजन से पूर्व जिनेन्द्र भगवान की स्तुति, साधु-साध्वी, सहधर्मी और अन्य योग्य क्षेत्र मे दान देना, अपने भाई-बन्धु आदि परिजनो की सार-सम्भाल, उचित कार्य करना, योग्य स्थान पर बैठना और प्रत्याख्यान का स्मरण करना, इत्यादि क्रियाए अवश्य होनी चाहिए। भोजन से पूर्व यह भावना करनी चाहिए कि यदि कोई साधु-मुनिराज ब्रह्मचारी, विद्यार्थी या अन्य कोई पात्र व्यक्ति पधारे तो उन्हे भोजनादि देकर कृतार्थ होऊं। भोजन कर चुकने पर पुनः किसी प्रकार का प्रत्याख्यान करे।

मध्याह्नकाल मे पुनः जिनदेव का स्मरण और स्तवन करे। तदनन्तर शिष्ट पुरुषो की सगति मे बैठकर तत्त्वचर्चा करे। तत्पश्चात् कौटुम्बिक और व्यावहारिक प्रवृत्ति के प्रति सजग बने। सूर्यास्त के पूर्व भोजनादि से निवृत्त होकर साध्य विधि का पालन करे। धर्मस्थान मे जाकर मुनिवन्दन करे और दिनभर मे लगे हुए दोषो की शुद्धि के लिए प्रतिक्रमण करे। तदनन्तर स्वाध्याय- ध्यान रूप योग का अवलम्बन लेकर अन्तःकरण को शुद्ध बनावे। ससार की अनित्यता का पर्यालोचन करे। मुक्ति की भावना करे। ससार के सब जीव सुखी हो, सबका कल्याण हो और कोई दु खी न हो, साथ ही मैत्री, प्रमोद, कारूण्य और मध्यस्थ भावना का चिन्तन करे। तीन मनोरथो की प्रतिदिन भावना करे।

उक्त रीति से स्वाध्याय, भावना, चितन और मनोरथ करने पर वीतराग

देव का स्मरण और कीर्तन करना चाहिए। अरिहन्त प्ररूपित धर्म, सिद्ध और साधुओ का शरण ग्रहण कर सागारी सथारा कर अठारह पापो का त्याग कर शुद्ध भावना रखते हुए शयन करना चाहिए। मध्य मे निद्रा भग होने पर काम-भोग की असारता, भूतकालीन श्रावको की दृढता तथा अन्य सद्भावनाओ से अन्त करण को भावित करना चाहिए।

इस प्रकार अप्रमत्त रूप से दिनचर्या का पालन करने वाला गृहस्थ धीरे-धीरे चरित्र रूपी महल पर आरूढ होकर मुक्ति के शाश्वत सौख्य का अधिकारी हो जाता है।

-जिण धम्मो से साभार

गठि सहिय मुट्ठि सहिय पच्चक्खाण का भी हमारे पूर्व महापुरुषो ने बहुत महत्त्व बताया है। पच्चक्खाण लेना और पारना याद न रहे तो इसके लिए सरल उपाय यह है कि मुख मे कुछ भी पदार्थ डालने से पूर्व 'नमो अरिहंताण' पद का उच्चारण करे तथा खाने-पीने की क्रिया समाप्त होते ही 'नमो सिद्धाण' इस पद का उच्चारण करने की आदत डाले। जब ऐसा हमेशा का अभ्यास बन जाए तो किन्हीं भी सन्त महापुरुषो से प्रत्याख्यान ग्रहण कर लेना चाहिए। ऐसा 12 महीने करने से लगभग साढे 10 महीने की तपस्या का फल मिलता है।

बारह भावनाएँ

अनित्य भावना - भरत महाराज ने भायी।
अशरण भावना - अनाथी मुनि ने भायी।
ससार भावना - धन्ना शालिभद्रजी ने भायी।
एकत्व भावना - नमिराज ऋषि ने भायी।
अन्यत्व भावना - मृगापुत्रजी ने भायी।
अशुचि भावना - सनतकुमार चक्रवर्ती ने भायी।

आश्रव भावना	-	समुद्रपाल मुनि ने भायी।
सवर भावना	-	केशी, गौतम स्वामीजी ने भायी।
निर्जरा भावना	-	अर्जुनमाली ने भायी।
लोकस्वरूप भावना	-	शिवराजऋषि ने भायी।
धर्म भावना	-	धर्मरुचि अणगार ने भायी।
बोधि बीज भावना	-	ऋषभदेव के 98 पुत्रो ने भायी।

विशेष तत्त्व ज्ञान

लघु दण्डक

जीवाभिगम सूत्र की प्रथम प्रतिपत्ति इसका मुख्य आधार है। इसमे 24 दण्डको का 25 द्वारो से विश्लेषण किया गया है।

25 द्वार– ❋1 शरीर द्वार, 2 अवगाहना, 3 सहनन, 4 संस्थान, 5 कषाय, 6 सज्ञा, 7 लेश्या, 8 इन्द्रिय, 9 समुद्घात, 10 संज्ञी, 11 वेद, 12. पर्याप्ति, 13 दृष्टि, 14 दर्शन, 15 ज्ञान, अज्ञान, 16 योग, 17 उपयोग, 18 आहार, 19 उत्पाद, 20 स्थिति, 21 समोहया असमोहया मरण 22 च्यवन, 23 गति-आगति, 24 प्राण, 25 योग।

गाथा–

नेरइया असुराई, पुढवाई बेइन्दियादओ चेव।
पंचिन्दिय-तिरिय-नरा, वंतर-जोइसिस-वेमाणी॥1॥

संग्रहणी गाथाएं- जीवाभिगम सूत्र प्रथम प्रतिपत्ति

सरीरोगाहण-संघयण-संठाण-कसाय तह य हुति
सन्नाओ लेसिंदिय-समुग्घाए सन्नी वेए य पज्जती॥1॥

❋ किसी भी वस्तु (स्वरूप) को समझने के प्रकार को द्वार कहते हैं।

दिट्ठी-दंसण-नाणे जोगुवओगे तहा किमाहारे।
उववाय ठिई समुग्घाय चवण-गइरागई च्चेव ॥2॥

पाणे जोगे।

1. शरीर द्वार

जो जीर्ण-शीर्ण अर्थात् विनाश होने वाला है, उसे **शरीर** कहते है।

इसके पॉच भेद है- 1 औदारिक, 2 वैक्रिय, 3 आहारक, 4 तैजस और 5 कार्मण।

1 औदारिक शरीर – उदार अर्थात् प्रधान अथवा स्थूल पुद्गलो से बना हुआ शरीर- 'औदारिक' कहलाता है।

तीर्थकर और गणधरो का शरीर प्रधान पुद्गलो से बनता है। साधारण और सर्वसाधारण का शरीर स्थूल साधारण पुद्गलो से बनता है। मनुष्य और तिर्यच को औदारिक शरीर प्राप्त होता है।

2 वैक्रिय शरीर – जिस शरीर से एक, अनेक, छोटा, बडा, दृश्य अदृश्य शरीर धारण करना आदि विविध क्रियाऍ होती है, उसे 'वैक्रिय शरीर' कहते है।

वैक्रिय शरीर दो प्रकार है – 1 औपपातिक और 2 लब्धिप्रत्यय।

देव और नारको का शरीर 'औपपातिक' कहलाता है अर्थात् उनको जन्म से ही वैक्रिय-शरीर मिलता है। 'लब्धिप्रत्यय' शरीर तिर्यच और मनुष्यो को होता है। मनुष्य और तिर्यच तप आदि के द्वारा प्राप्त की हुई शक्ति विशेष से वैक्रिय शरीर प्राप्त कर लेते है।

3. आहारक शरीर – अति विशुद्ध, स्फटिक के समान निर्मल, अहारक पुद्गलो से बना शरीर 'अहारक शरीर' कहलाता है। छठे गुणस्थानवर्ती 14 पूर्वधारी आहारक लब्धि प्राप्त मुनिराज को 14 पूर्व चितारते हुए कोई शका उत्पन्न हो अथवा कोई वादी आकर मुनिराज को प्रश्न पूछे, उसका उत्तर 14 पूर्व मे न हो अथवा उस समय मुनिराज

का उपयोग नहीं लगे अथवा तीर्थकर भगवान् की ऋद्धि दर्शन या प्राणी दया का प्रसग उपस्थित होने पर वे मुनिराज आहारक लब्धि से जघन्य देश न्यून एक हाथ उत्कृष्ट एक हाथ प्रमाण अति विशुद्ध स्फटिक के समान निर्मल शरीर निकालते है। वह शरीर केवली भगवान् के पास शका निवारण के लिए अथवा प्रश्न का उत्तर पूछने के लिए पहुँचता है उस शरीर को 'आहारक शरीर'कहते है।

4. तैजस शरीर – तैजस पुद्‌गलो से बना हुआ शरीर 'तैजस' कहलाता है। उष्णता इस शरीर का चिह्न है। शरीर मे उष्णता को टिकाने मे एवं आभा (कान्ति) को बनाये रखने मे तैजस शरीर प्रमुख निमित्त है। इस शरीर की उष्णता से खाये हुए अन्न का पाचन होता है और कोई-कोई तपस्वी क्रोध से उष्णतेजो- लेश्या के द्वारा ओरो को हानि पहुँचाता है तथा प्रसन्न होकर शीतल तेजोलेश्या के द्वारा लाभ पहुँचाता है, वह इसी तैजस्-शरीर के प्रभाव से होता है अर्थात् आहार के पाचन का हेतु तथा उष्ण तेजोलेश्या और शीतल तेजोलेश्या के निर्गमन का हेतु जो शरीर है, वह 'तैजस-शरीर' कहलाता है।

5. कार्मण शरीर – कर्मो का बना हुआ शरीर 'कार्मण-शरीर' कहलाता है अर्थात् जीव के प्रदेशो के साथ लगे हुए आठ प्रकार के कर्म-पुद्‌गलो को 'कार्मण-शरीर' कहते है। यह कार्मण-शरीर सभी शरीरो का बीज है। इसी शरीर से जीव अपने मरण देश को छोडकर उत्पत्ति स्थान पर जाता है।

समस्त संसारी जीवो के तैजस शरीर और कार्मण शरीर, ये दो शरीर अवश्य (नियमा) होते है।

1. नारकी और देवता मे शरीर पावे 3 वैक्रिय तैजस और कार्मण।
2. चार स्थावर- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वनस्पतिकाय और असन्नी मनुष्य इन पाचो मे शरीर पावे तीन- औदारिक तेजस कार्मण। वायुकाय मे शरीर पावे चार- औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे शरीर पावे तीन- औदारिक, तैजस और कार्मण।
4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे शरीर पावे चार- औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण।
5. गर्भज मनुष्य * मे शरीर पावे पाच- 1 औदारिक, 2 वैक्रिय, 3 आहारक, 4 तैजस और 5 कार्मण।
6. युगलिक मनुष्यो • के भेद- 5 हेमवत, 5 हैरण्यवत, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 देवकुरु, 5 उत्तरकुरु और 56 अन्तर्द्वीप मे शरीर पावे तीन- 1 औदारिक, 2 तैजस और 3 कार्मण।
7. सिद्ध भगवान के शरीर नहीं, अशरीरी है।

2. अवगाहना द्वार

जीव का शरीर जितने आकाश प्रदेशो को अवगाहे, उसको **अवगाहना** कहते है। वह जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट 1000 यो झाझेरी है। (यद्यपि तैजस, कार्मण शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना 14 राजु लोक प्रमाण है, तथापि इस थोकडे मे 1000 यो झाझेरी तक ही प्रयुक्त होने से यहा इतना ही उत्कृष्ट ग्रहण किया है) उत्तर वैक्रिय करे तो ज अगुल का असख्यातवे भाग उत्कृष्ट एक लाख यो झाझेरी है।

1. पहली नारकी से सातवीं नारकी तक भवधारणीय शरीर की अवगाहना, जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पहली नारकी की पौने आठ धनुष 6 अगुल, दूसरी नारकी की साढे पद्रह धनुष 12 अगुल की, तीसरी नारकी की सवा इकतीस धनुष, चौथी नारकी की साढे बासठ धनुष, पाचवी नारकी की सवा सौ धनुष,

* जहॉ जहॉ गर्भज मनुष्य कहा है वहा सख्यात वर्ष वाले मनुष्य समझना।

• जहॉ जहाँ युगलिक मनुष्य कहा है वहा असख्यात वर्ष वाला मनुष्य समझना।

छठी नारकी दो सौ पचास धनुष, सातवीं नारकी की पाच सौ धनुष

उत्तर वैक्रिय करे, तो जघन्य अंगुल के सख्यातवे भाग उत्कृष्ट अपनी-अपनी अवगाहना से दुगुनी। जैसे सातवीं नारकी की भवधारणीय शरीर की अवगाहना 500 धनुष की और उत्तर वैक्रिय करे तो 1000 धनुष की कर सकता है।

भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी तथा पहिले, दूसरे देवलोक के देवो की अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 7 हाथ की।

आगे सभी की ज अगुल के अस भाग उ इस प्रकार है -

तीसरे और चौथे देवलोक के देवो की 6 हाथ की, पॉचवे-छठे देवलोक के देवो की 5 हाथ की, सातवे-आठ्वे देवलोक के देवो की 4 हाथ की, नौवे से बारहवे देवलोक के देवो की 3 हाथ की, नव ग्रैवेयक के देवो की 2 हाथ की, पांच अनुत्तर विमान के देवो की 1 हाथ की।

उत्तर वैक्रिय करे, तो जघन्य अंगुल के संख्यातवे भाग, उत्कृष्ट बारहवे देवलोक तक एक लाख योजन की। नव ग्रैवेयक और अनुत्तर विमान के देवो मे वैक्रिय करने की शक्ति तो होती है किन्तु करते नहीं है।

2. पृथ्वीकाय अप्काय, तेउकाय, वायुकाय और असन्नी मनुष्य इन पाचो की अवगाहना ज अंगुल के असंख्यातवे भाग और उत्कृष्ट भी अगुल के असंख्यातवे भाग। किन्तु ज. से उत्कृष्ट असंख्यात गुण अधिक है। वनस्पतिकाय की अवगाहना ज अगुल के असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 1000 योजन झाझेरी, कमल नाल की अपेक्षा। वायुकाय के उत्तर वैक्रिय शरीर की अवगाहना ज और उ अगुल के असख्यातवे भाग।

3. बेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट 12 योजन।

तेइन्द्रिय की अवगाहना ज अगुल के असंख्यातवे भाग, उ 3 गाऊ।

चौरिन्द्रिय की अवगाहना ज अगुल के असख्यातवे भाग, उ 4 गाऊ।

असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय के पाच भेद-

जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपरिसर्प और भुजपरिसर्प। जलचर की अवगाहना ज अगुल के अस भाग, उ 1000 योजन की।

स्थलचर की जघन्य अगुल के अस भाग, उ पृथक्त्व गाऊ।

खेचर की जघन्य अगुल के अस भाग, उ पृथक्त्व धनुष।

उरपरिसर्प की जघन्य अगुल के अस भाग, उ पृथक्त्व योजन।

भुजपरिसर्प की जघन्य अगुल के अस भाग, उ पृथक्त्व धनुष

4. सन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय के पाच भेद-

जलचर, स्थलचर, खेचर, उसपरिसर्प, भुजपरिसर्प। जलचर की अवगाहना ज अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट 1000 योजन।

स्थलचर की ज अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट 6 गाऊ।

खेचर की ज अगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट पृथक्त्व धनुष।

उरपरिसर्प की ज अगुल के असख्यातवे भाग, उ 1000 योजन।

भुजपरिसर्प की ज अगुल के असख्यातवे भाग, उ पृथक्त्व गाऊ।

सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय वैक्रिय शरीर करे, तो अवगाहना ज अगुल के सख्यातवे भाग उत्कृष्ट पृथक्त्व 100 (ज 200 उत्कृष्ट 900 योजन)

5 गर्भज मनुष्यो की अवगाहना- ज अगुल के असख्यातवे भाग उत्कृष्ट तीन गाऊ।काल के अनुसार अवसर्पिणी काल मे गर्भज मनुष्यो की उत्कृष्ट अवगाहना इस प्रकार है-

पहले आरे के प्रारभ मे तीन गाऊ।

पहला पूर्ण होने और दूसरे के प्रारभ मे दो गाऊ।

दूसरा पूर्ण होते और तीसरे के प्रारंभ मे एक गाऊ।

तीसरा पूर्ण होते और चौथे के प्रारभ मे 500 धनुष।

संहनन है।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे सहनन पावे छहो-

1 वज्र ऋषभ नाराच सहनन, 2 ऋषभ नाराच संहनन, 3 नाराच सहनन, 4 अर्द्ध नाराच सहनन, 5 कीलिका सहनन, 6 सेवार्त्तक सहनन।

5. गर्जभ मनुष्य मे सहनन पावे छहो।

6. युगलिक मनुष्य मे वज्र ऋषभ नाराच संहनन।

7. सिद्ध भगवान मे संहनन नही।

4. संस्थान द्वार

नामकर्म के उदय से बनने वाली शरीर की आकृति को **संस्थान** कहते है। इसके छह भेद है -

1. समचतुरस्त्र (समचोरस)- ऊपर, नीचे तथा बीच मे समभाग से शरीर की सुन्दराकार आकृति को 'समचोरस सस्थान' कहते है।

2. न्यग्रोधपरिमण्डल – वट वृक्ष के समान शरीर की आकृति अर्थात् जिसमे नाभि से ऊपर का भाग प्रशस्त विस्तृत लक्षणयुक्त पूर्ण एव शास्त्रानुसार प्रमाण वाला हो और नाभि से नीचे का भाग हीन हो, उसे 'न्यग्रोधपरिमण्डल सस्थान' कहते है।

3. सादि – ऊपर वाले लक्षण से बिल्कुल विपरीत हो, जैसे सॉप की बॉकी अर्थात् नाभि से नीचे का भाग उत्तम प्रमाण वाला हो और नाभि से ऊपर का भाग हीन हो, उसे 'सादि संस्थान' कहते है।

4. कुब्जक (कुबडा) – जिस शरीर के हाथ, पॉव, मुख और ग्रीवादिक उत्तम हो और हृदय, पेट, पीठ अधम (हीन) हो, उसे 'कुब्जक संस्थान' कहते है।

5. वामन – बौना शरीर हो अर्थात् जिस शरीर मे हाथ, पॉव आदि

अवयव हीन हो और छाती, पेट आदि पूर्ण हो, उसे 'वामन सस्थान' कहते हैं।

6. हुण्डक – जिस शरीर मे सभी अंगोपाग किसी खास आकृति के न हो (खराब हो), उसे 'हुण्डक सस्थान' कहते है।

1. नारकी के भवधारणीय शरीर और उत्तर वैक्रिय शरीर मे एक हुण्डक सस्थान है। देवो के भवधारणीय शरीर मे एक समचोरस सस्थान और उत्तर वैक्रिय शरीर मे विविध प्रकार का सस्थान होता है।
2. पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य के एक हुण्डक सस्थान है।
3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक हुण्डक सस्थान होता है।
4 सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे सस्थान पावे छहो-

   1 समचतुरस्र सस्थान (समचोरस), 2 न्यग्रोधपरिमण्डल सस्थान, 3 सादि सस्थान, 4. कुब्जक सस्थान, 5 वामन सस्थान, 6 हुण्डक सस्थान।
5. गर्भज मनुष्यो मे छहो सस्थान पाये जाते है।
6. युगलिक मनुष्यो मे समचतुरस्र सस्थान पाया जाता है।
7. सिद्ध भगवान् मे संस्थान नहीं।

5. कषाय द्वार

क्रोधादि रूप आत्मा के विभाव परिणामो को **कषाय** कहते है।

इसके चार भेद है- क्रोध, मान, माया, लोभ।

1 सभी जीवो मे कषाय पावे चारो -क्रोध, मान, माया, लोभ। मनुष्य अकषायी भी होते है।

2 सिद्ध भगवान् अकषायी है।

6. संज्ञा द्वार

आहारादि की सवेदना विशेष को संज्ञा कहते हैं। इसके चार भेद है ।

1. 24 ही दण्डको मे चारो सज्ञा पाई जाती है-

   1. आहार-सज्ञा 2 भय-संज्ञा, 3. मैथुन-सज्ञा और परिग्रह सज्ञा। मनुष्य नोसज्ञोपयुक्त भी होते है।

2. सिद्ध भगवान् मे संज्ञा नहीं, नोसंज्ञोपयुक्त है।

7. लेश्या द्वार

योग की प्रवृत्ति से उत्पन्न आत्मा के शुभाशुभ परिणाम को लेश्या कहते है। इसके छह भेद है ।

1. पहली और दूसरी नारकी मे एक कापोत लेश्या है। तीसरी नारकी मे कापोत और नील लेश्या। चौथी नारकी मे एक नील लेश्या। पाचवीं नारकी मे नील और कृष्ण लेश्या। छठी नारकी मे कृष्ण लेश्या। सातवीं नारकी मे महा कृष्ण लेश्या। भवनपति और वाणव्यन्तर देव मे पहली चार लेश्या होती है- 1 कृष्ण लेश्या, 2 नील- लेश्या, 3 कापोत लेश्या 4 तेजो लेश्या। ज्योतिषी तथा पहले- दूसरे देवलोक मे तेजो लेश्या। तीसरे, चौथे और पॉचवे देवलोक मे पद्म लेश्या। छठे देवलोक से नवग्रैवेयक तक शुक्ल लेश्या। पाच अनुत्तर विमान मे परम शुक्ल लेश्या।

2. पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय- इन तीनो मे चार लेश्या पायी जाती हैं- कृष्ण, नील, कापोत और तेजो लेश्या। तेउकाय, वायुकाय और असन्नी मनुष्य मे तीन लेश्या पायी जाती है- कृष्ण लेश्या, नील लेश्या और कापोत लेश्या।

3 तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे तीन लेश्या पायी जाती है- कृष्ण लेश्या, नील लेश्या और कापोत लेश्या।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे छहो लेश्या पाई जाती है-

1 कृष्ण, 2 नील, 3 कापोत, 4 तेजो, 5 पद्म, 6 शुक्ल।

5 गर्भज मनुष्य मे छहो लेश्या तथा अलेशी भी होते है।

6 युगलिक मनुष्य मे चार लेश्या पाई जाती है।

कृष्ण, नील, कापोत और तेजो लेश्या।

7 सिद्ध भगवान मे लेश्या नहीं, अलेशी है।

8. इन्द्रिय द्वार

इन्द्र का अर्थ 'आत्मा'। जिसके माध्यम से छद्मस्थ आत्मा शब्द, रूप, रस, गध, स्पर्श का ज्ञान करती है उसे **इन्द्रिय** कहते है।

इसके पॉच भेद है -

1. नारकी और देवो मे पाचो इन्द्रिय- 1 श्रोत्रेन्द्रिय 2 चक्षुरिन्द्रिय 3 घ्राणेन्द्रिय, 4 रसनेन्द्रिय 5 स्पर्शनेन्द्रिय।

2 पाच स्थावर मे एक स्पर्शनेन्द्रिय पावे और असन्नी मनुष्य मे पाचो ही इन्द्रिया पावे।

3. बेइन्द्रिय मे इन्द्रिय पावे दो- रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय। तेइन्द्रिय मे इन्द्रिय पावे तीन- घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय। चौइन्द्रिय मे चार इन्द्रिय पावे- चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय। शेष सभी जीवो मे पाचो इन्द्रिय पावे। मनुष्य अनिन्द्रिय भी होते है।

4 सिद्ध भगवान मे इन्द्रिय नहीं, अनिन्द्रिय है।

9. समुद्‌घात द्वार

सम-एकी भावेन, उद्-प्रबलता से, घात-बाहर निकलना।'वेदना आदि के साथ तन्मय होकर मूल शरीर को बिना छोडे प्रबलता से आत्म प्रदेशो को बाहर निकाल कर असाता वेदनीय आदि कर्मो का नाश करना **समुद्‌घात** कहलाता है। इसके सात भेद है-

1. वेदनीय समुद्‌घात – असाता वेदनीय कर्म के कारण आत्म-प्रदेशो मे स्पन्दन होकर कुछ आत्म-प्रदेशो का शरीरावगाहना से बाहर आ जाना वेदनीय समुद्‌घात है। इसके द्वारा उदय प्राप्त असाता वेदनीय कर्म का नाश होता है। साता वेदनीय कर्म का समुद्‌घात नहीं होता है।

2. कषाय समुद्‌घात – तीव्र क्रोधादि कषायो के कारण आत्म-प्रदेशो मे स्पन्दन होकर कुछ आत्म-प्रदेशो का शरीरावगाहना से बाहर आ जाना कषाय समुद्‌घात कहलाता है। इसके द्वारा उदय प्राप्त कषाय मोहनीय का नाश होता है। चारो कषायो का समुदघात होता है।

3. मारणांतिक समुद्‌घात – मृत्यु से अन्तर्मुहूर्त्त पूर्व उत्पत्ति के स्थान तक लबा (शरीर प्रमाण चौडा एव जाडाई वाला) आत्मप्रदेशो का दड निकालना, मारणातिक समुद्‌घात कहलाता है।

4. वैक्रिय समुद्‌घात – वैक्रिय रूपो का निर्माण करने हेतु वैक्रिय वर्गणा के पुद्‌गलो को ग्रहण करने के लिये आत्म-प्रदेशो का एक दिशा अथवा विदिशा मे सख्यात योजन तक का दण्ड निकालना (जाडाई व चौडाई मे शरीर प्रमाण-दण्ड होता है) वैक्रिय समुद्‌घात कहलाता है। इसमे वैक्रिय नाम कर्म की क्षपणा होती है।

5. तैजस् समुद्‌घात – शीतल अथवा उष्ण तेजोलेश्या किसी पर डालने हेतु तैजस् पुद्‌गलो को ग्रहण करने के लिये सख्यात योजन तक का एक दिशा अथवा विदिशा मे आत्म-प्रदेशो का दड निकालना (यह

भी जाडाई व चौडाई मे शरीर प्रमाण ही होता है) तैजस् समुद्घात कहलाता है। इसमे तैजस् नामकर्म की क्षपणा होती है।

6. **आहारक समुद्घात**– जीवदया, ऋद्धि दर्शन, ज्ञान ग्रहण या सशय निवारण हेतु चौदह पूर्वधारी मुनि द्वारा आहारक पुतला बनाने हेतु आहारक वर्गणा के पुद्गलो को ग्रहण करने के लिए सख्यात योजन का आत्म-प्रदेशो का दण्ड निकालना (जाडाई व चौडाई मे शरीर प्रमाण दण्ड होता है) आहारक समुद्घात कहलाता है। इसमे आहारक शरीर नामकर्म की क्षपणा होती है।

7 **केवली समुद्घात** – वेदनीय आदि कर्मो को खपाने के लिये चार समयो मे आत्मप्रदेशो को समग्र लोक मे फैला देना एव चार समयो मे पुन॰ सकोचित करके शरीरस्य हो जाना, केवली समुद्घात कहलाता है। इसमे आयु से अधिक स्थिति वाले वेदनीय, नाम और गोत्र कर्मो की क्षपणा होती है। जिन महापुरुषो की आयु 6 माह अथवा उससे कम शेष रहने पर केवलज्ञान की प्राप्ति होती है, उनमे से जिन की आयु कम व वेदनीय आदि कर्मो की स्थिति अधिक होती है, उनकी स्थिति सम करने के लिये केवली समुद्घात करते है। केवली समुद्घात के अन्तर्मुहूर्त्त बाद अवश्य मोक्ष हो जाता है।

1 नारकी मे समुद्घात चार-वेदनीय, कषाय, मारणातिक और वैक्रिय। भवनपति से यावत् बारहवे देवलोक तक अनुक्रम से पाच समुद्घात। नवग्रैवेयक और पाच अनुत्तर विमान मे भी शक्ति से समुद्घात पाच पावे, परन्तु समुद्घात करते है तीन-वेदनीय, कषाय और मारणान्तिक। वैक्रिय और तैजस समुद्घात नहीं करते है।

2. चार स्थावर- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वनस्पतिकाय और असन्नी मनुष्य, इन पाचो मे समुद्घात पावे तीन- वेदनीय, कषाय,

और मारणातिक समुद्घात। वायुकाय मे समुद्घात पावे चार- वेदनीय, कषाय, मारणांतिक और वैक्रिय।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे समुद्घात पावे तीन- वेदनीय, कषाय और मारणांतिक।
4. सन्नी तिर्यच मे समुद्घात पावे पाच-वेदनीय, कषाय, मारणातिक, वैक्रिय और तैजस।
5. गर्भज मनुष्य मे समुद्घात पावे सातो ही-
   1. वेदनीय, 2 कषाय, 3 मारणातिक, 4 वैक्रिय 5 तैजस, 6 आहारक, 7 केवली।
6. युगलिक मनुष्य मे समुद्घात पावे तीन- वेदनीय, कषाय और मारणान्तिक।
7 सिद्ध भगवान मे समुद्घात नहीं।

10. सन्नी द्वार

जिसके मन हो उसे **संज्ञी** और जिसके मन नहीं हो उसे **असंज्ञी** कहते है।

1. पहली नारकी, भवनपति और वाणव्यन्तर मे सन्नी-असन्नी दोनों उत्पन्न होते है। असन्नी कुछ देर असन्नी रहकर फिर सन्नी हो जाते है। दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक, ज्योतिषी से पाच अनुत्तर विमान तक सन्नी ही उत्पन्न होते है।
2. पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य असन्नी है, सन्नी नहीं।
3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय- ये सभी सन्नी नहीं, असन्नी है। शेष सभी जीव सन्नी है, असन्नी नहीं।
4. सिद्ध भगवान् सन्नी-असन्नी नहीं, नोसन्नोवउत्ता है।

11. वेद द्वार

नामकर्म के उदय से होने वाले शरीर के स्त्री, पुरुष, नपुसक रूप चिह्न को द्रव्य वेद, तथा जीव की विषय भोग की अभिलाषा को भाव वेद कहते है। इसके तीन भेद होते है -

1 नारकी मे एक नपुसक वेद पावे। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और पहिले-दूसरे देवलोक मे वेद दो- स्त्री वेद, और पुरुष वेद। तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक एक पुरुष वेद होता है।

2. पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक नपुसक वेद होता है।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक नपुसक वेद।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे तीनो ही वेद पाये जाते है।

5 गर्भज मनुष्य मे तीनो वेद पाये जाते है एव अवेदी भी।

6 युगलिया मनुष्य मे दो वेद- स्त्री वेद और पुरुष वेद।

7. सिद्ध भगवान् मे वेद नहीं अवेदी है।

12. पर्याप्ति द्वार

आहारादि के पुद्गलो को ग्रहण करने तथा उन्हे आहार, शरीरादि रूप मे परिणमाने की आत्म शक्ति विशेष को **पर्याप्ति** कहते है। इसके छह भेद होते है -

1. नारकी मे पर्याप्ति पावे छह और देव मे पर्याप्ति पावे पाच। क्योकि भाषा और मन- ये दोनो पर्याप्तिया शामिल बाधते है।

2 पाच स्थावर मे चार पर्याप्ति पावे-आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति और श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति। असन्नी मनुष्य चौथी पर्याप्ति का अपर्याप्ता रहते हुए ही मर जाता है।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे पर्याप्ति पावे पाच- आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति और भाषा पर्याप्ति।

4. सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

5. गर्भज मनुष्य मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

6. युगलिक मनुष्य मे छहो पर्याप्ति पाई जाती है।

7. सिद्ध भगवान नोपर्याप्त-नो अपर्याप्त है।

13. दृष्टि द्वार

तत्व विचारणा की रुचि को **दृष्टि** कहते है। इसके तीन भेद होते हैं- 1. सम्यक् दृष्टि 2. मिथ्या दृष्टि 3. सम्यग् मिथ्या मिश्र दृष्टि।

सम्यक् दृष्टि – वीतराग देव की वाणी पर अखण्ड श्रद्धा रखने वाला।

मिथ्या दृष्टि – वीतराग वाणी को देशत या सर्वत मिथ्या मानता है।

मिथ्या दृष्टि – वीतराग वाणी के प्रति न रूचि हो न अरुचि हो।

1. नारकी और भवनपति से लगा कर ग्रैवेयक तक दृष्टि पावे तीनो ही- 1 सम्यग् दृष्टि, 2 मिथ्या दृष्टि, 3 सम्यग्-मिथ्या दृष्टि। (मिश्र) 15 परमाधार्मिक 3 किल्विषी मे एक मिथ्यादृष्टि ही होती है। पांच अनुत्तर विमान मे एक सम्यग् दृष्टि ही होती है।

2. पांच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक मिथ्या दृष्टि।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे दो दृष्टि-सम्यग् दृष्टि और मिथ्या दृष्टि।

4. सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे तीनो ही दृष्टि पाई जाती है।

5. गर्भज मनुष्य मे तीनो ही दृष्टि पाई जाती है।

6. युगलिक मनुष्य मे 30 अकर्म भूमि मे दो दृष्टि- । सम्यग् दृष्टि और

2 मिथ्या दृष्टि और 56 अन्तर्द्वीपो मे एक मिथ्या दृष्टि।

7 सिद्ध भगवान् मे एक सम्यग् दृष्टि।

14. दर्शन द्वार

जिसमे महासत्ता (सामान्य) का प्रतिभास (निराकार झलक) हो, उसको **दर्शन** कहते है। इसके चार भेद है -

1. चक्षु दर्शन – नेत्रजन्य मतिज्ञान से पहिले होने वाले सामान्य प्रतिभास या अवलोकन को 'चक्षु दर्शन' कहते हैं।

2. अचक्षु दर्शन – नेत्र के सिवाय दूसरी इन्द्रियो और मन सम्बन्धी मतिज्ञान के पहिले होने वाले सामान्य अवलोकन को 'अचक्षु दर्शन' कहते हैं।

3. अवधि दर्शन – अवधिज्ञान से पहले होने वाले सामान्य अवलोकन को 'अवधि दर्शन' कहते है।

4. केवल दर्शन – केवलज्ञान के उपयोग के बाद होने वाले सामान्य धर्म के अवलोकन (उपयोग) को 'केवल-दर्शन' कहते है।*

1. नारकी और देवो मे दर्शन पावे तीन- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन।
2. पाच स्थावर मे एक अचक्षुदर्शन होता है।
   असन्नी मनुष्य मे चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन- ये दो दर्शन है।
3. बेइन्द्रिय और तेइन्द्रिय मे एक अचक्षुदर्शन हैं। चौइन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे दो दर्शन- चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन।

---

* छद्मस्थों में पहले दर्शन का उपयोग होता है, बाद मे ज्ञान का उपयोग होता है। अछद्मस्थों (केवली) में पहले ज्ञान का उपयोग होता है, फिर दर्शन का उपयोग होता है।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे दर्शन पावे तीन- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन।
5. गर्भज मनुष्य मे दर्शन पावे चार- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन।
6. युगलिक मनुष्य मे दर्शन दो- चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन।
7. सिद्ध भगवान मे एक केवलदर्शन।

15. ज्ञान-अज्ञान द्वार

किसी विवक्षित पदार्थ के विशेष धर्म को विषय करने वाला बोध ज्ञान कहलाता है। इसके दो भेद है- सम्यग् ज्ञान, मिथ्या ज्ञान।

सम्यग् ज्ञान के पॉच भेद है- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अविधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान।

1. **मतिज्ञान** - इन्द्रिय और मन की सहायता से जो ज्ञान हो, उसे 'मतिज्ञान' कहते है।

2. **श्रुतज्ञान** - मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थ से सम्बन्धित किसी दूसरे पदार्थ के ज्ञान को 'श्रुतज्ञान' कहते है। जैसे - ''घट'' शब्द सुनने के अनन्तर उत्पन्न हुआ कबुग्रीवादिरूप घट का ज्ञान।

3. **अवधिज्ञान** - मन व इन्द्रियो की सहायता के बिना द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा लिये हुए जो रूपी पदार्थ को स्पष्ट जाने।

4. **मन. पर्ययज्ञान** - मन व इन्द्रियो की सहायता के विना द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा लिये हुए जो साधु संज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवो के मन मे रही हुई पर्यायो को स्पष्ट जाने।

5. **केवलज्ञान** - जो त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थो को हस्तामलकवत् स्पष्ट जाने।

मिथ्याज्ञान के तीन भेद है - 1 मतिअज्ञान, 2 श्रुतअज्ञान, 3 विभगज्ञान। ये तीन अज्ञान है।

1 नारकी और देवो मे ज्ञान पावे तीन- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान। अज्ञान- नारकी और भवनपति से नवग्रैवेयक तक अज्ञान पावे तीन- मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और विभगज्ञान। पाच अनुत्तर विमान मे अज्ञान नहीं होता। ज्ञान पावे तीन।

2 पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे ज्ञान नहीं होता, मतिअज्ञान और श्रुतअज्ञान- ये दो अज्ञान होते है।

3 तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे दो ज्ञान- मतिज्ञान और श्रुतज्ञान। तथा दो अज्ञान।

4 सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे ज्ञान पावे तीन-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान। अज्ञान पावे तीनो।

5 गर्भज मनुष्य मे ज्ञान पावे पाच- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान,मन·पर्यवज्ञान और केवलज्ञान। अज्ञान पावे तीनो।

6 30 अकर्मभूमि मे दो ज्ञान-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान। दो अज्ञान मति अज्ञान, श्रुतअज्ञान। 56 अन्तर्द्वीप मे दो अज्ञान। ज्ञान नहीं।

7 सिद्ध भगवान मे एक केवलज्ञान, अज्ञान नहीं।

16. योग द्वार

मन, वचन, काया की प्रवृत्ति को **योग** कहते है। इसके 15 भेद है- 4 मन के, 4 वचन के और 7 काया के।

1 नारकी और देवो मे योग पावे ग्यारह- 4 मन के, 4 वचन के और 3 काया के (वैक्रिय योग, वैक्रिय मिश्र योग, कार्मण योग)•

• तेजस शरीर की स्वत कहीं प्रवृत्ति नहीं होती इसलिए तेजस काया योग नहीं होता है।

2. चार स्थावर- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वनस्पतिकाय और असन्नी मनुष्य- इन पाचो मे योग पावे तीन- 1 औदारिक योग, 2 औदारिक मिश्र योग, 3 कार्मण काय योग। वायुकाय मे योग पावे पाच-1 औदारिक योग, 2 औदारिक मिश्र योग, 3 वैक्रिय योग, 4 वैक्रिय मिश्र योग और 5 कार्मण काय योग।

3. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे योग पावे चार- व्यवहार भाषा, औदारिक योग, औदारिक मिश्र योग और कार्मण काय योग।

4. सन्नी तिर्यच मे योग पावे 13- चार मन के, चार वचन के और पांच काया के- औदारिक योग, औदारिक मिश्र योग, वैक्रिय योग, वैक्रिय मिश्र और कार्मण काय योग।

5. गर्भज मनुष्य मे पंद्रह ही योग पावे। 4 मन के, 4 वचन के और 7 काया के एव अयोगी भी होते है।

6. युगलिक मनुष्य मे योग पावे ग्यारह- 4 मन के, 4 वचन के और 3 काया के - 1 औदारिक काय योग, 2 औदारिक मिश्र काय योग, 3 कार्मण काय योग।

7. सिद्ध भगवान मे योग नहीं, अयोगी है।

17. उपयोग द्वार

ज्ञान और दर्शन मे होती हुई आत्म प्रवृत्ति को उपयोग कहते हैं। इसके 12 भेद होते है - 5 ज्ञान के, 3 अज्ञान के, 4 दर्शन के।

1. नारकी और देवो मे नवग्रैवेयक तक उपयोग पावे नौ- तीन ज्ञान, तीन अज्ञान और तीन दर्शन। पांच अनुत्तर विमान मे उपयोग पावे

छह- तीन ज्ञान और तीन दर्शन।

2. पाच स्थावरो मे उपयोग पावे तीन-मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और अचक्षुदर्शन। असन्नी मनुष्य मे उपयोग पावे चार- मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन।

3 बेइन्द्रिय और तेइन्द्रिय मे उपयोग पावे पाच- दो ज्ञान, दो अज्ञान और एक दर्शन- अचक्षुदर्शन चौइन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे छह उपयोग- दो ज्ञान, दो अज्ञान और दो दर्शन।

4 सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे उपयोग पावे नौ- 3 ज्ञान, 3 अज्ञान और 3 दर्शन।

5 गर्भज मनुष्य मे उपयोग पावे 12- पाच ज्ञान, तीन अज्ञान, चार दर्शन।

6 तीस अकर्म भूमि मे उपयोग पावे 6- दो ज्ञान, दो अज्ञान और दो दर्शन। 56 अन्तर्दीपो मे उपयोग पावे चार- दो अज्ञान और दो दर्शन।

7 सिद्ध भगवान् मे दो उपयोग-केवलज्ञान और केवलदर्शन।

18. आहार द्वार

जीव के द्वारा शरीर के निर्माण, धारण अथवा पोषण के लिए ग्रहण किए जाने वाले पुद्गलो को **आहार** कहते है।

जीव 288 प्रकार के पुद्गलो का आहार करता है। आहार तीन प्रकार का होता है- सचित्त, अचित्त, मिश्र। प्रकारान्तर से भी आहार के तीन भेद होते है- ओज (शरीर द्वारा), रोम (त्वचा द्वारा), प्रक्षेपाहार (कवल द्वारा) जो ग्रहण किया जाता है।

बलिन्द्रजी।

चमरेन्द्र के रहने की चमरचचा राजधानी, जम्बूद्वीप के मेरू पर्वत से दक्षिण दिशा मे अधोलोक मे है। बलिन्द्रजी के रहने की बलिचचा राजधानी जम्बूद्वीप के मेरू पर्वत से उत्तर दिशा मे अधोलोक मे है। **चमरेन्द्रजी के भवनवासी देवों की स्थिति** जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट एक सागरोपम और उनकी देवी की स्थिति ज दस हजार वर्ष उ. साढे तीन पल्योपम की। शेष नौ जाति के दक्षिण दिशा के भवनपति देवो की स्थिति ज दस हजार वर्ष उत्कृष्ट डेढ पल्योपम और उनकी देवी की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट पौन पल्योपम।

बलिन्द्रजी के भवनवासी देवों की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक सागरोपम झाझेरी। उनकी देवियो की स्थिति ज दस हजार वर्ष उत्कृष्ट साढे चार पल्योपम। शेष नौ जाति के उत्तर दिशा वाले भवनपति देवो की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम । उनकी देवी की स्थिति ज दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट देशोन एक पल्योपम। वाणव्यन्तर देवो की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम। उनकी देवी की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट अर्द्ध पल्योपम।

ज्योतिषी देवों की स्थिति इनके पांच भेद

1 चन्द्र 2 सूर्य 3 ग्रह 4 नक्षत्र और 5 तारा।

चन्द्र– विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम, उ 1 पल्योपम और 1 लाख वर्ष। उनकी देवियो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ आधा पल्योपम और 50 हजार वर्ष।

सूर्य– विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ 1 पल्योपम और एक हजार वर्ष। उनकी देवियो की स्थिति ज पाव

वनस्पतिकाय मे प्रति समय अनन्त उपजे। असन्नी मनुष्य मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात उ असख्यात उपजे।

3 तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक समय मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात उत्कृष्ट असख्यात उत्पन्न होते है।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय एक समय मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात् उत्कृष्ट असख्यात उपजे।

5. गर्भज मनुष्य मे उपपात ज 1-2-3 उ सख्यात उपजे।

6. युगलिक मनुष्य मे ज 1-2-3 उ सख्यात उत्पन्न होते है।

7 सिद्ध भ एक समय मे ज 1-2-3 उत्कृष्ट 108 सिद्ध होते है।

20. स्थिति द्वार

जीव जितने काल तक जिस भव की पर्याय को धारण करे, उसे स्थिति कहते है।

समुच्चय नारकी के नेरिये एव देवता की स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट 33 सागरोपम की।

1. **पहली नारकी के नेरिये की स्थिति** जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट 1 सागरोपम की।

दूसरी नारकी की ज एक सागरोपम उ 3 सागरोपम की।

तीसरी नारकी की ज 3 सागरोपम उ 7 सागरोपम की।

चौथी नारकी की ज 7 सागरोपम उ 10 सागरोपम की।

पाचवीं नारकी की ज 10 सागरोपम उ 17 सागरोपम की।

छठी नारकी की ज 17 सागरोपम उ 22 सागरोपम की।

सातवीं नारकी की ज 22 सागरोपम उ 33 सागरोपम की।

भवनपति देव की असुरकुमार जाति के दो इन्द्र है- चमरेन्द्रजी और

सागरोपम झाझेरी।

पाचवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 7 सा उ 10 सा।

छठे देवलोक के देवो की स्थिति ज 10 सा उ 14 सा।

सातवें देवलोक के देवो की स्थिति ज 14 सा उ 17 सा।

आठवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 17 सा उ 18 सा।

नौवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 18 सा उ 19 सा।

दसवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 19 सा उ 20 सा।

ग्यारहवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 20 सा उ 21 सा।

बारहवे देवलोक के देवो की स्थिति ज 21 सा उ 22 सा।

पहले ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 22 सा. उ 23 सा।

दूसरे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज. 23 सा उ 24 सा।

तीसरे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 24 सा उ 25 सा।

चौथे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 25 सा उ 26 सा।

पांचवें ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 26 सा उ 27 सा।

छठे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 27 सा उ 28 सा।

सातवे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 28 सा उ 29 सा।

आठवे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 29 सा उ 30 सा।

नौवे ग्रैवयक के देवो की स्थिति ज 30 सा उ 31 सा।

चार अनुत्तर विमान के देवो की स्थिति ज 31 सा उ 33 सा।

सर्वार्थसिद्ध देवो की स्थिति अजघन्य-अनुत्कृष्ट 33 सागरोपम।

2. **पृथ्वीकाय** की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की, उ 22000 वर्ष है।

अप्काय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की, उ 7000 वर्ष की।

पल्योपम, उत्कृष्ट आधा पल्योपम और 500 वर्ष।

ग्रह- विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम, उत्कृष्ट एक पल्योपम। उनकी देवियो की स्थिति ज पाव पल्योपम, उ आधा पल्योपम।

नक्षत्र- विमानवासी देवो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ आधा पल्योपम और उनकी देवियो की स्थिति ज पाव पल्योपम उ पाव पल्योपम झाझेरी।

तारा- विमानवासी देवो की स्थिति ज पल्योपम के आठवे भाग, उ पाव पल्योपम। उनकी देवियो की स्थिति ज पल्योपम के आठवे भाग, उ पल्योपम के आठवे भाग झाझेरी।

वैमानिक देवों की स्थिति

पहिले देवलोक के देवो की स्थिति ज एक पल्योपम, उ दो सागरोपम। उनकी देविया दो प्रकार की है-

1 परिगृहीता और 2 अपरिगृहिता। परिगृहीता देवियो की स्थिति ज एक पल्योपम, उ 7 पल्योपम। अपरिगृहीता देवियो की स्थिति ज एक पल्योपम, उ 50 पल्योपम।

दूसरे देवलोक के देवो की स्थिति ज 1 पल्योपम झाझेरी, उ 2 सागरोपम झाझेरी। उनकी देविया दो प्रकार की है- परिगृहीता और अपरिगृहीता। परिगृहीता देवियो की स्थिति ज एक पल्योपम झाझेरी उ 9 पल्योपम। अपरिगृहीता देवियो की स्थिति ज एक पल्योपम झाझेरी उ 55 पल्योपम।

तीसरे देवलोक के देवो की स्थिति ज 2 सागरोपम उ 7 सागरोपम।

चौथे देवलोक के देवो की स्थिति ज 2 सागरोपम झाझेरी, उ 7

5. **गर्भज मनुष्य की स्थिति** ज अन्तर्मुहूर्त, उ तीन पल्योपम।

काल की अपेक्षा अवसर्पिणी काल मे– गर्भज मनुष्य की स्थिति–

पहले आरे के आरम्भ मे 3 पल्योपम।

पहले उतरते और दूसरा लगते 2 पल्योपम।

दूसरा उतरते और तीसरा लगते 1 पल्योपम।

तीसरा उतरते और चौथा लगते 1 करोड पूर्व।

चौथा उतरते और पाचवा लगते एक सौ वर्ष झाझेरी।

पाचवा उतरते, छठा लगते 20 वर्ष।

छठा आरा उतरते 16 वर्ष।

यह उत्कृष्ट स्थिति बतलाई है। तीसरे आरे तक के मनुष्यो की जघन्य स्थिति उत्कृष्ट से देशउणी होती है। शेष आरो मे ज अन्तर्मुहूर्त की। उत्सर्पिणी काल मे इससे उलटी होती है।

6. **युगलिक मनुष्य की स्थिति–**

5 देवकुरु 5 उतरकुरु की स्थिति तीन पल्योपम।

5 हरिवास 5 रम्यक्वास की स्थिति दो पल्योपम।

5 हेमवत 5 हैरण्यवत की स्थिति एक पल्योपम।

56 अन्तर्द्वीप की स्थिति पल्योपम के असख्यातवे भाग। इनमे जघन्य स्थिति कुछ कम होती है और उत्कृष्ट पूर्ण होती है।

7. **सिद्ध भगवान् की स्थिति** –एक सिद्ध भगवान की अपेक्षा सादि अनत और सभी सिद्ध भगवतो की अपेक्षा अनादि अनत।

21. समोहया असमोहया मरण द्वार

जो ईलिका गति समुद्घात करके मरे अर्थात्, कीडी की कतार की तरह जीव के प्रदेश अलग-अलग निकले, उसे **समोहयामरण** कहते ह

तेउकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की, उ तीन अहोरात्रि।

वायुकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की, उ 3000 वर्ष की।

वनस्पतिकाय की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त की, उ 10,000 वर्ष की।

असन्नी मनुष्य की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त की।

3 वेइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त,उत्कृष्ट12 वर्ष।

तेइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त,उत्कृष्ट 49 अहोरात्रि।

चौइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छह महीने।

असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय के पाच भेद–

जलचर, स्थलचर, खेचर,उरपरिसर्प और भुजपरिसर्प।

जलचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ एक करोड पूर्व।

स्थलचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ 84 हजार वर्ष।

खेचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ 72 हजार वर्ष।

उरपरिसर्प को स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ 53 हजार वर्ष।

भुजपरिसर्प की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ 42 हजार वर्ष।

4. सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय की स्थिति

जलचर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट एक करोड पूर्व।

स्थलचर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पल्योपम।

खेचर की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ पल्योपम के असख्यातवे भाग।

उरपरिसर्प की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ एक करोड पूर्व।

भुजपरिसर्प की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त, उ एक करोड पूर्व।

23. गति–आगति द्वार

जीव मरकर भवान्तर मे जावे उसे "गति" एव भवान्तर से आकर उत्पन्न होने को आगति कहते है।

1. पहली नारकी से लगाकर 6 नारकी तक दो गतियो से आवे और दो गतियो मे जावे- तिर्यचगति और मनुष्यगति। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे और दो दण्डक मे जावे (20-21) वॉ तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य दण्डक। सातवीं नारकी मे दो गतियो से आवे- तिर्यचगति और मनुष्यगति से और एक तिर्यचगति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डको से आवे (20-21) वा दण्डक और एक तिर्यच पचेन्द्रिय (20वा दण्डक) मे जावे। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और पहिले दूसरे देवलोक के देव, दो गतियो से आवे और दो गतियो मे जावे- तिर्यचगति और मनुष्यगति। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे, तिर्यच पचेन्द्रिय से और मनुष्य से और पाच दण्डक मे जावे- पृथ्वीकाय, अप्काय, वनस्पतिकाय, तिर्यच पंचेन्द्रिय और मनुष्य मे। तीसरे देवलोक से लगाकर आठवे देवलोक तक दो गति से आवे एवं दो गति मे जावे (मनुष्य एव तिर्यच) एवं दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे, दो दण्डक (मनुष्य तिर्यच) पंचेन्द्रिय मे जावे। नौवे देवलोक से लगाकर सर्वार्थसिद्ध विमान के देव एक मनुष्य गति से आवे और उसी गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा एक दण्डक (21 वा) से आवे और एक दण्डक (21वा) मे जावे- मनुष्य का दण्डक।

2. पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय मे तीन गति से आवे- तिर्यचगति, मनुष्यगति और देवगति से और दो गति मे जावे- तिर्यचगति और मनुष्यगति मे। दण्डक की अपेक्षा 23 दण्डक से आवे (10 भवनपति, 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यच

एव जो गेद (दडी) की गति से समुद्घात करके मरे अथवा बन्दूक की गोली की तरह जीव के प्रदेश एक साथ निकले उसे **असमोहयामरण** कहते है।

1 24 दण्डक के जीव दोनो प्रकार के मरण से मरते है।

2 सिद्ध भगवान मे मरण नहीं।

22. च्यवन द्वार

जीव वर्तमान भव को छोडकर अन्य भव की पर्याय को धारण करे उसे **च्यवन** कहते है।

1. नारकी और भवनपति देव से लगाकर आठवे देवलोक तक एक समय मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात उत्कृष्ट असख्यात च्यवे। नौवे देवलोक से लगाकर सर्वार्थसिद्ध विमान तक एक समय मे ज 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात च्यवे।

2 चार स्थावर मे प्रति समय असख्यात च्यवे।

वनस्पतिकाय मे प्रति समय अनन्त च्यवे।

असन्नी मनुष्य मे ज 1-2-3 यावत् सख्याता उत्कृष्ट असख्याता च्यवे।

3. विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे एक समय मे जघन्य 1-2-3 यावत् सख्यात उत्कृष्ट असख्यात च्यवे।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय एक समय मे ज 1-2-3 यावत् सख्यात, उत्कृष्ट असख्यात च्यवे।

5 गर्भज मनुष्य ज 1-2-3 उ सख्यात च्यवे।

6 युगलिक मनुष्य ज 1-2-3 उ सख्यात च्यवे।

7 सिद्ध भगवान मे च्यवन (मरण) नहीं।

गति - एक देवगति।

दण्डक की अपेक्षा - तीस अकर्मभूमि की आगति- दो दण्डक से- मनुष्य और तिर्यच से। गति दण्डक 13 मे - 10 भवनपति, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी और 1 वैमानिक मे।

छप्पन अर्न्तद्वीपो मे 2 दण्डक से आवे (तिर्यच पचेन्द्रिय व मनुष्य) और 11 दण्डक मे-10 भवनपति और 1 व्यन्तर मे जावे।

7. सिद्ध भगवान् मे आगति एक मनुष्यगति और एक दण्डक से और गति नहीं।

24 प्राण द्वार

जीवन के आधारभूत पदार्थो को अर्थात् जिनके सद्भाव से जीव किसी शरीर के साथ बधा रहे उसे **प्राण** कहते है। इसके दस भेद हैं -

1. नारकी और देवो मे प्राण पावे दस।
2. पांच स्थावर मे प्राण पावे चार (स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण कायबल प्राण, श्वासोच्छ्वास बलप्राण और आयुष्य बलप्राण) असन्नी मनुष्य मे प्राण पावे कुछ कम (ऊणा) आठ- पांच इन्द्रिय के बलप्राण, श्वासोच्छ्वास बलप्राण और आयुष्य बलप्राण।
3. बेइन्द्रिय मे प्राण पावे छह- रसनेन्द्रिय बलप्राण, स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण, वचन बलप्राण, काय बलप्राण, श्वासोच्छवास बलप्राण और आयुष्य बलप्राण।

तेइन्द्रिय मे प्राण पावे सात- घ्राणेन्द्रिय बलप्राण और छह पूर्वोक्त

चौरिन्द्रिय मे प्राण पावे आठ- चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण और सात पूर्वोक्त। असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे प्राण पावे नव- श्रोत्रेन्द्रियबल प्राण और आठ पूर्वोक्त।

पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी 1 वैमानिक से) और दस दण्डक मे जावे- (5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यच पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य मे)।

तेउकाय और वायुकाय मे दो गति से आवे (तिर्यच और मनुष्य गति से) और एक तिर्यचगति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से आवे (औदारिक का दस दण्डक उपरोक्त) 9 दण्डक मे जावे (5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय और 1 तिर्यच पचेन्द्रिय मे) और असन्नी मनुष्य दो गति से आवे- तिर्यचगति और मनुष्यगति से, और दो गति मे जावे- तिर्यचगति और मनुष्यगति मे। दण्डक की अपेक्षा आठ दण्डक से आवे (एक पृथ्वीकाय, 1 अप्काय, 1 वनस्पतिकाय, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यच पचेन्द्रिय, 1 मनुष्य से), दस दण्डक मे जावे- उपरोक्त औदारिक मे।

3 तीन विकलेन्द्रिय मे दो गति से आवे और दो गति मे जावे- तिर्यचगति और मनुष्यगति। दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से आवे और दस दण्डक में जावे। दस दण्डक औदारिक के है। असन्नी तिर्यच मे दो गति से आवे- तिर्यचगति और मनुष्यगति से और चार गति मे जावे- नरक, तिर्यच, मनुष्य और देवगति मे और दण्डक की अपेक्षा दस दण्डक से आवे- (दस दण्डक औदारिक के) और 22 दण्डक मे जावे (1 नारकी, 10 भवनपति, 1 वाण व्यन्तर, 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यच पचेन्द्रिय और 1 मनुष्य)।

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय चारो गति और 24 दण्डक से आते है और चारो गति चौबीस दण्डक मे जाते है।

5 गर्भज मनुष्य- आगति- चारो गति और 22 दण्डक से आते है (तेउकाय व वायुकाय छोडकर)। गति 1 चारो गति और दण्डक 24 मे जाते है और 2 सिद्ध गति मे भी जाते है।

6. युगलिक मनुष्य - आगति 2 तिर्यच और मनुष्यगति से आते है।

चारित्र 26. आकर्ष 27. समकित 28. अन्तर और 29. अल्पबहुत्व।

1. नाम द्वार

गुणस्थानो के नाम- 1 मिथ्यात्व 2 सास्वादन 3. सम्यग् - मिथ्या (मिश्र) 4 अविरत सम्यग्दृष्टि 5. देशविरत 6 प्रमत्त-सयत 7 अप्रमत्त संयत 8 निवृत्ति-बादर 9 अनिवृत्ति-बादर 10 सूक्ष्म-सम्पराय 11. उपशान्त मोहनीय 12 क्षीण मोहनीय 13 सयोगी केवली और 14 अयोगी केवली, गुणस्थान।

2. लक्षण द्वार

1. मित्यात्व गुणस्थान का लक्षण-जिनेश्वर भगवान् की वाणी न्यूनाधिक या विपरीत श्रद्धे या प्ररूपे जिन-मार्ग पर दुष्ट परिणाम रखे, हिसा मे धर्म माने या प्ररूपे, कुगुरु, कुदेव और कुशास्त्र पर आस्था रखे अथवा तत्व श्रद्धा का अभाव। जीव के ऐसे भाव को पहला 'मिथ्यात्व गुणस्थान' कहते है।

पहले गुणस्थान का फल- कर्म रूपी डंडे से आत्मा रूपी गेद चार गति चौबीस दण्डक और चौरासी लाख जीव-योनियो मे बारम्बार परिभ्रमण कर दुःख भोगती रहती है।

2. दूसरे गुणस्थान का लक्षण- जो औपशमिक सम्यक्त्वी जीव अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से सम्यक्त्व को छोडकर मिथ्यात्व की ओर झुक रहा है, किन्तु अभी तक मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं किया है, उसकी इस अवस्था विशेष को सास्वादन गुणस्थान कहते हैं। जैसे किसी ने खीर का भोजन किया और बाद मे वमन कर दिया तो उसे कुछ गुड्चटा का स्वाद रहता है। अथवा जैसे घटे से गभीर शब्द निकल चुकने के बाद उसका रणकार (प्रतिध्वनि) रह जाती है, उसके समान, अथवा आत्मा रूपी

4. सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे प्राण पावे दसो ही- मनोबल प्राण और नव पूर्वोक्त।

5 गर्भज मनुष्य युगलिक मनुष्य मे प्राण पावे दस।

6 सिद्ध भगवान् मे द्रव्य प्राण नहीं भाव प्राण चार है (ज्ञान, दर्शन, सुख और आत्मशक्ति)।

25 योग द्वार

मन, वचन,काया की शुभाशुभ प्रवृत्ति को योग कहते है।

योग तीन- 1 मनयोग 2 वचन योग, 3 काययोग।इनमे से-

1 पाच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे योग पावे एक - काययोग।

2 तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मे योग पावे दो- वचनयोग और काययोग।

3 शेष सभी जीवो मे योग पावे तीनो। मनुष्य अयोगी भी होते है।

4 सिद्ध भगवान मे योग नहीं, अयोगी है।

◎ लघु दण्डक समाप्त ◎

गुणस्थान स्वरूप

गुणस्थानों * पर उन्नतीस द्वार है। वे इस प्रकार हैं- 1 नाम 2. लक्षण 3. स्थिति 4. क्रिया 5. सत्ता, 6. बंध 7. उदय 8 उदीरणा 9. निर्जरा 10. भाव 11. कारण 12. परीषह 13 आत्मा 14 जीव के भेद 15 गुणस्थान 16. योग 17 उपयोग 18. लेश्या 19. हेतु 20 मार्गणा 21 ध्यान 22 दण्डक 23 जीव–योनि 24. निमित्त 25

* आत्मा के ज्ञान-दर्शन चारित्र आदि गुणो की शुद्धि-अशुद्धि और उत्कर्ष- अपकर्ष अवस्था के वर्गीकरण को गुणस्थान कहते हैं।

होता है। द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव का जानकार होवे, नवकारसी आदि से लेकर वर्षीतप को उपादेय जाने, श्रद्धा करे, प्ररूपणा करे परन्तु पालन नहीं कर सकता क्योकि अविरत सम्यग्दृष्टि * है।

5. देशविरति गुण स्थान का लक्षण – प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय के कारण जो जीव पाप जनक क्रियाओ से सर्वथा तो नहीं किन्तु अप्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय न होने के कारण देश (अश) से पापजनक क्रियाओ से अलग हो सकते है, वे देशविरत कहलाते है। देशविरत को श्रावक भी कहते है। इनका स्वरूप विशेष देशविरत गुणस्थान है। इस गुणस्थान मे आया हुआ जीव, जीवादिक नौ पदार्थो का जानकार होता है। नवकारसी आदि से लेकर वर्षीतप आदि जानता है श्रद्धान करता है, प्ररूपणा करता है और शक्ति के अनुसार प्रत्याख्यान करता है। एक प्रत्याख्यान से लेकर श्रावक के बारह व्रत, ग्यारह प्रतिमाएँ तक पालन करे यावत् सलेखना तक अनशन करे।

6. प्रमत्तसंयत गुणस्थान – जो जीव पापजनक व्यापारो से विधिपूर्वक सर्वथा निवृत्त हो जाते है वे सयत (मुनि) है। लेकिन सयत भी जब तक प्रमाद का सेवन करते है तब तक वे प्रमत्त संयत कहलाते है, और उनके स्वरूप-विशेष को प्रमत्त सयत गुणस्थान कहते है।

सकल सयम को रोकने वाली प्रत्याख्यानावरल कषाय का अभाव होने से इस गुणस्थान मे पूर्ण संयम तो हो चुकता है किन्तु सज्वलन आदि कषायो के उदय से सयम मे मल उत्पन्न करने वाले प्रमाद के रहने से इसे 'प्रमत्त-सयत' कहते है।

7. अप्रत्तसंयत गुणस्थान – जो सयत (मुनि) विकथा,कपाय आदि प्रमादो को नहीं सेवते है, वे अप्रमत्त सयत है और उनका स्वरूप विशेप जो

---

* अप्रत्याख्यानावरण कपाय के उदय से एक देश सयम भी पालन नहीं कर सकता।

आम्र वृक्ष की परिणाम रूपी डाली से मोह रूपी वायु चलने से समकित रूपी फल टूट गया, परन्तु पृथ्वी पर नहीं पहुचा यह बीच ही मे है तब तक के परिणाम को ''सास्वादन गुणस्थान'' कहते है।

3 तीसरे गुणस्थान का लक्षण–सम्यक्त्व और मिथ्यात्व से मिश्रित श्रीखड के समान मीठे और खट्टे स्वाद जैसा नालिकेल द्वीप के मनुष्य का दृष्टात- जिस द्वीप मे खाने के लिए सिर्फ नारियल ही होते है, उसे नालिकेल द्वीप कहते हैं। वहा मनुष्यो ने न अन्न को देखा है और न ही उसके विषय मे कुछ सुना है। अतएव उनको अन्न मे रूचि नही होती और न ही द्वेष ही होता है। इस प्रकार मोहनीय कर्म का उदय रहता है तब जीव को जैन धर्म मे प्रीति नहीं होती और अप्रीति भी नहीं होती अर्थात् श्री वीतराग ने जो जैन धर्म मे कहा है वही सचा है, इस प्रकार एकान्त श्रद्धा रूप प्रेम भी नहीं होता है और वह धर्म झूठा है, अविश्वसनीय है, इस प्रकार अरूचि रूप द्वेष भी नहीं होता।

4. चौथे गुणस्थान का लक्षण– सात प्रकृतियो का क्षयोपशम आदि करने पर जीव की जो अवस्था होती है उसे चौथा ''अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान'' कहते है। वे सात प्रकृतियो ये है- 1 अनन्तानुबन्धी क्रोध 2 मान- 3 माया, 4- लोभ 5 समकित मोहनीय 6 मिश्र मोहनीय 7 मिथ्यात्व मोहनीय कुगुरु, कुदेव, कुधर्म, कुशास्त्र पर आस्था रखना- ''मिथ्यात्व मोहनीय'' है। सभी देव, सभी गुरु, सभी धर्म और सभी शास्त्रो को समान समझने को मिश्र मोहनीय कहते है। जिसका उदय तात्विक रुचि का निमित्त होकर भी औपशमिक या सायिक भाववाली तत्व रूचि का प्रतिबध करता है। सम्यकत्व का घात करने मे असमर्थ मित्यात्व के शुद्ध दलिकों को सम्यकत्व मोहनीय कहते है।

चौथे गुणस्थान मे आया हुआ जीव जीवादिक नौ पदार्थो का जानकार

शरद ऋतु मे होने वाले सरोवर के जल की तरह मोहनीय कर्म के उपशम से उत्पन्न होने वाले निर्मल परिणाम इस गुणस्थान वाले जीव के होते है। आशय यह है कि मोहनीय कर्म की सत्ता तो है परन्तु उदय नहीं होता है।

12. क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान – मोहनीय कर्म का सर्वथा क्षय होने के पश्चात् ही यह गुणस्थान प्राप्त होता है। इस गुणस्थानवर्ती जीव के भाव स्फटिक मणि के निर्मल पात्र मे रखे हुए जल के समान निर्मल होते है। क्योकि मोहनीय कर्म सर्वथा क्षय हो जाते है। सत्ता भी नहीं रहती है। जो मोहनीय कर्म का सर्वथा क्षय कर चुके है, किन्तु शेष छद्म (धातिकर्म का आवरण) अभी विद्यमान है, उनको क्षीण कषाय वीतराग कहते है। और उनके स्वरूप विशेष को क्षीण कषाय वीतराग कहते है।

13. सयोगिकेवली गुणस्थान – जो चार धातिकर्म (ज्ञानावरण, दर्शनवारण, मोहनीय और अंतराय) का क्षय करके केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त कर चुके है। जो पदार्थ के जानने-देखने मे इद्रिय, आलोक आदि की अपेक्षा नहीं रखते है और योग (आत्मवीर्य, शक्ति, उत्साह, पराक्रम) से सहित है, उन्हे सयोगीकेवली कहते है और उनके स्वरूप विशेष को सयोगी केवली गुणस्थान कहते है। सयोगीकेवली को धातिकर्म से रहित होने के कारण जिन, जिनेन्द्र, जिनेश्वर भी कहा जाता है।

14. अयोगी केवली गुणस्थान – जो केवली भगवान योगो से रहित है वे अयोगी केवली कहलाते है, अर्थात् जब सयोगी केवली मन, वचन और काया के योगो का निरोध कर योग रहित शुद्ध आत्मस्वरूप को प्राप्त कर लेते है तब वे अयोगी केवली कहलाते है, और उनके स्वरूप विशेष को अयोगी केवली गुणस्थान कहते है। इस गुण मे 5 लघु अक्षर (अ, इ, उ, ऋ, लृ) के उच्चारण जितनी स्थिति तक रहकर- 1 वेदनीय 2 आयुष्य,

ज्ञानादि गुणो की शुद्धि और अशुद्धि के तरतमभाव से होता है, अप्रमत्तसयत गुणस्थान कहलाता है अर्थात् सज्वलन और नोकषायो का मन्द उदय होता है और जिसके व्यक्त प्रमाद नष्ट हो चुके है और ज्ञान, ध्यान, तप मे लीन सकल सयम सयुक्त सयत (मुनि) को 'अप्रमत्तसयत' कहते है।

8. **निवृत्ति बादर गुणस्थान** – निवृत्ति अर्थात् अध्यवसाय बादर अर्थात् भिन्न-भिन्न जिस गुण स्थान मे आए हुए सम समय के त्रिकालवर्ती सभी जीवो के अध्यवसाय भिन्न-भिन्न होते है। इस गुणस्थान को अपूर्वकरण गुणस्थान भी कहते है।

9. **अनिवृत्ति बादर गुणस्थान** – अ – नहीं, निवृत्ति-अध्यवसाय, बादर- भिन्न-भिन्न अर्थात् जिस गुणस्थान मे समसमयवर्ती त्रैकालिक जीवो के चाहे चढते परिणाम हो, चाहे उतरते परिणाम हो उस-उस समय के परिणामो मे भिन्नता नहीं होती उस अवस्था को अनिवृत्ति बादर गुणस्थान कहते है।

10. **सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान** – इस गुणस्थान मे सम्पराय अर्थात् (लौभ) कषाय के सूक्ष्म खण्डो का ही उदय होने से इसका सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान ऐसा सार्थक नाम प्रसिद्ध है। जिस प्रकार धुले हुए गुलाबी रग के कपडे मे लालिमा (सुर्खी) सूक्ष्म-झीनी-सी रह जाती है, उसी प्रकार इस गुणस्थानवर्ती जीव सज्वलन लोभ के सूक्ष्म खण्डो का वेदन करता है। इसलिए इसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान कहते है।

11 **उपशॉन कषाय वीतराग छदम्स्थ गुणस्थान** – जिसके कषाय उपशात हुए है, राग का भी सर्वथा उदय नहीं है और जिनको छदम् (आवरणभूतघातिकर्म) लगे हुए है, वे जीव उपशात कषाय वीतराग छदम्स्थ है और उनके स्वरूप विशेष को उपशात कषाय वीतराग छदम्स्थ गुणस्थान कहते है।

सातवे, आठवे, नौवे, दसवे और ग्यारहवे गुणस्थान की स्थिति ज एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त की है।

चौदहवे गुणस्थान की स्थिति मध्य रीति से पाच लघु अक्षर के उच्चारण करने मे जितना काल लगे, उतनी है।

* आत्मा के साथ कर्मों का लगे रहने का काल।

** पच सग्रह भाग एक पृष्ठ 152 से चौथे गुणस्थान की स्थिति साधिक 33 सागरोपम बताई है, आगमो मे इसका विरोध न होने से इसे ही प्रमाण स्वरूप माना गया है। सम्यग्दृष्टि का काल भले 66 सागरोपम का है पर उसमे गुणस्थान बदलते रहते हैं।

4. क्रिया द्वार*

(आगमो मे एक साथ 25 क्रियाओ के रूप मे उल्लेख उपलब्ध नहीं है। ठाणाग सूत्र के पांचवे ठाणे मे पाच-पाच क्रियाओ के रूप मे अलग-अलग वर्णन मिलता है अतः क्रिया द्वार मे 25 क्रिया का उल्लेख न कर आरम्भियादि 5 क्रियाओ के अनुसार उल्लेख किया जा रहा है। प्रज्ञापना सूत्र के 22 वे क्रिया पद के अनुसार कौनसी क्रिया कौन से गुणस्थान में है इसका उल्लेख किया जा रहा है।)

पांच क्रियाओ के नाम - 1 आरम्भिया 2 परिग्गहिया 3 मायावत्तिया, 4 मिच्छादसणवत्तिया, 5. अपच्चक्खाणवत्तिया।

पहले दूसरे* तीसरे गुणस्थान मे पाचो क्रियाएं पाई जाती हैं। चौथे मे मिथ्यात्व को छोडकर चार क्रियाए पाई जाती हैं। पांचवे मे अविरति को छोडकर तीन क्रियाए है। छठे मे आरम्भिया और मायावत्तिया- ये दो क्रियाए है। छठे मे आरम्भिया और मायावत्तिया- ये दो क्रियाए हैं। सातवें, आठवें, नौवे और दसवे गु मे एक मायावत्तिया क्रिया पाई जाती है। ग्यारहवें, बारहवे, तेरहवे और चौदहवे गुणस्थान मे इस पाच मे से एक भी क्रिया नहीं

3 नाम और 4 गौत्र- इन चार अघातीय कर्म का क्षय करके अफुसमाण (दूसरे समय का स्पर्श न करना) गति से, एक समय की अविग्रह (बिना मोडवाली) गति से औदारिक तैजस् और कार्मण शरीर को छोडकर सिद्ध गति को प्राप्त होते है। सिद्ध गति मे जन्म नहीं, मरण नहीं, जरा नही, रोग नहीं, शोक नहीं, दुःख नहीं, दारिद्रय नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, गुरु नहीं, चेला नहीं, भूल नहीं, प्यास नहीं, ज्योति मे ज्योति विराजमान है। अनत सुखो मे लीन, अनत ज्ञान, अनत दर्शन, अनत क्षायिक चारित्र, निराबाध, अक्षय स्थिति, अमूर्ति, अगुरु-लघु, अनतवीर्य सहित विराजमान होते है।

3. स्थिति द्वार*

पहले गुणस्थान के तीन भंग है- 1 अनादि- पर्यवसित (अभवि जीव की उपेक्षा) जिसकी आदि नहीं और अन्त भी नहीं, 2 अनादि सपर्यवसित (भवि जीव की उपेक्षा) जिसकी आदि नहीं, किन्तु अन्त है, 3 सादि सर्पवसित जिसकी आदि भी है और अन्त भी है। प्रतिपाती सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा तीसरे भग की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल की है।

दूसरे गुणस्थान की स्थिति ज एक समय उ छह आवलिका की है।

तीसरे और बारहवे गुणस्थान की स्तिति ज उ अन्तर्मुहूर्त की है।

चौथे गुणस्थान की स्तिति ज अन्तर्मुहूर्ति और उ तैतीस** सागर झाझेरी की है।

पाचवे और तेरहवे गुणस्थान की स्थिति ज अन्तर्मुहूर्त और उ देशोन क्रोड पूर्व की है।

छठे गुणस्थान की जघन्य स्थिति एक समय की उ देशोन क्रोड पूर्व की है।

8. उदीरणा द्वार*

पहले से लेकर छठे गुणस्थान तक तीसरे गुण. को छोडकर सात-आठ कर्मो की उदीरणा होती है (सात की उदीरना हो तो आयु कर्म की नहीं होती तीसरे मे आठ कर्मो की उदीरणा) सातवे, आठवे और नौवे गुणस्थान मे छह कर्मो की उदीरणा (आयु और वेदनीय छोडकर) दसवे गुणस्थान मे छह या पांच कर्मो की उदीरणा (छह की हो तो पूर्वोक्त दो छोडना और पांच की हो तो मोहनीय भी छोड देना)। ग्यारहे गु मे पाच कर्मो की उदीरणा, बारहवे गु मे पूर्वोक्त पांच कर्मो की या नाम ओर गोत्र-इन दो कर्मो की उदीरणा होती है। तेरहवे गु मे पूर्वोक्त दो की उदीरणा होती है या किसी की नहीं होती। चौदहवे गुणस्थान मे उदीरणा नहीं होती।

* कर्मो की स्थिति पूर्ण होने से पहले ही तपस्या, लोच आदि के द्वारा उन कर्म को उदय में लाना उदीरणा है।

9. निर्जरा द्वार*

पहले गुणस्थान से दसवे गु तक आठो कर्मो की निर्जरा होती है। ग्यारहवे तथा बारहवे गु. मे मोहनीय कर्म के सिवाय सात कर्मो की निर्जरा होती है और तेरहवे तथा चौदहवे गु. मे चार अघातिया कर्मो की निर्जरा होती है।

* आशिक रूप से कर्मों का आत्मा से अलग होना।

10. भाव द्वार

भाव पांच होते है - 1 औदयिक* भाव 2. औपशमिक* भाव 3 क्षायिक* भाव 4. क्षायोपशमिक* भाव और 5. पारिणामिक* भाव।

है।

* मिथ्यात्वभिमुख होने से एव अनतानुबधी कषाय का उदय होने से मिथ्यात्व की क्रिया लगना सभव है।

5. सत्ता द्वार*

पहले गुणस्थान से ग्यारहवे गु तक आठो ही कर्मो की सत्ता है। बारहवे गुणस्थान मे सात* कर्मो की सत्ता है और तेरहवे तथा चौदहवे गु मे चार आघातिया कर्मो की सत्ता रहती है।

* आत्मा के साथ कर्मों का लगा रहना सत्ता है।

* क्योकि बारहवे गु मे मोहनीय कर्म का अभाव हो जाता है।

6. बन्ध द्वार*

तीसरे गुणस्थान को छोडकर पहले से सातवे गु तक सात तथा आठ कर्मो का बंध होता है (जब सात कर्मो का बन्ध होता है तथा आयु-कर्म नहीं बधता)। तीसरे, आठवे और नौवे गुणस्थान मे आयु-कर्म के सिवाय सात कर्मो का बध होता है। दसवे गुणस्थान मे मोहनीय और आयु के सिवाय छ्ह कर्मो का बन्ध होता है। ग्यारहवे, बारहवे और तेरहवे गुणस्थान मे एक सातावेदनीय का ही बन्ध होता है। चौदहवे गुणस्थान मे बन्ध नहीं होता है।

* आत्मा के साथ कर्मों का क्षीर-नीर के समान एकमेव हो जाना।

7. उदय द्वार*

पहले गुणस्थान से दसवे गुणस्थान तक आठो कर्मो का उदय होता है। ग्यारहवे तथा बारहवे गुणस्थान मे मोहनीय कर्म के सिवाय सात कर्मो का उदय होता है। तेरहवे तथा चौदहवे गु मे चार अघातिया कर्मो का उदय होता है।

* स्थिति पूर्ण करके कर्म का फल देना उदय कहलाता है।

12. परीषह द्वार

बाईस परीषहो के नाम- 1 क्षुधा 2. तृषा 3 शीत 4. उष्ण 5 दशमसक 6 अचेल 7 अरति 8. स्त्री 9 चर्या 10 निषद्या (मकान, निवास स्थान), 11 शय्या 12 आक्रोश 13. वध 14 याचना 15 अलाभ 16 रोग 17 तृणस्पर्श 18 जल (मैल) 19 सत्कार- पुरस्कार 20 प्रज्ञा 21 अज्ञान 22. दर्शन परीषह।

चार कर्मो के उदय से बाईस परीषह होते है- ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से बीसवा और इक्कीसवां- ये दो परीषह होते है। वेदनीय कर्म के उदय से ग्यारह (पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवा, नौवा, ग्यारहवा, तेरहवा, सोलहवा, सतरहवां और अठारहवा), मोहनीय कर्म के उदय से आठ परीषह, दर्शनमोहनीय के उदय से एक बाईसवा 'दर्शन परीषह' होता है और चारित्र- मोहनीय के उदय से सात (छठा, सातवां, आठवा, दसवा, बारहवा, चौदहवा और उन्नीसवा) परीषह होते है। अन्तराय कर्म के उदय से एक पन्द्रहवा परीषह होता है।

पहले गुणस्थान से नौवे गु तक बाईसो परीषह होते हैं*, जिनमे से एक समय मे एक जीव, अधिक से अधिक बीस परीषह वेदता है, दो नहीं वेदता, क्योकि शीत-परीषह हो, तो उष्ण नहीं होता और उष्ण हो, तो सीत नहीं होता, तथा चर्या परीषह हो तो निषधा नहीं होता और निपधा हो तो चर्या नहीं होता। दसवे ग्यारहवे और बारहवे गु में मोहनीय कर्म के आठ परीषह छोडकर शेष चौदह परीषह होते हैं। उनमे पूर्वोक्त चार में से दो ही होते है। इसलिए एक साथ अधिक से अधिक बारह परीषह होते हैं। तेरहवीं और चौदहवे गु मे वेदनीय कर्म से होने वाले ग्यारह परीषह उत्पन्न होते हैं, जिनमे से एक साथ अधिक से अधिक नौ परीषह वेदते हैं, पूर्वोक्त रीति से दो नहीं होते।

* भगवती सूत्र, शतक 8, उ 8 में सात कर्मों का बन्ध करने वाले जीवों के 22 परीषह [illegible] गए हैं।

पहले दूसरे और तीसरे गु मे औदयिक, क्षायोपशमिक और परिणामिक ये तीन भाव होते है। चौथे से ग्यारहवे गु तक उपशम श्रेणी वाले मे पाचो भाव होते है। चौथे से बारहवे गु तक क्षपक - श्रेणी वाले मे औपशमिक छोडकर शेष चारो भाव पाये जाते है। तेरहवे और चौदहवे गु मे औदायिक, क्षायिक और पारिणामिक भाव- ये तीन भाव होते है, तथा सिद्धो मे क्षायिक और पारिणामिक- ये दो भाव होते है।

1 गति कषाय आदि कर्मो के उदय से होने वाले भाव को औदायिक कहते है। जैसे क्रोध आदि।

2 कर्मो के उपशम से होने वाले भाव, जैसे- उपशम समकित उपशम चारित्र।

3 कर्मो के क्षय से होने वाला भाव जैसे- केवलज्ञान, केवल दर्शन आदि।

4 कर्मो के क्षयोपशम से होने वाला भाव जैसे- मति ज्ञान आदि।

5 स्वभाव से ही रहने वाला भाव जैसे- जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व।

11. कारण द्वार

बन्ध के कारण पांच होते हैं- 1 मिथ्यात्व 2 अविरति 3 प्रमाद 4 कषाय और 5 योग।

पहले गुणस्थान मे पांचो ही कारण होते है। दूसरे तीसरे और चौथे गु मे मित्यात्व के सिवाय चार कारण होते है।* पाचवे और छठे गु मे मिथ्यात्व तथा अविरति के सिवाय तीन कारण होते है। सातवे से दसवे गु तक कषाय और योग- ये दो कारण होते है और ग्यारहवे, बारहवे तथा तेरहवे गु मे मात्र शुभ योग ही कारण होता है। चौदहवे गु मे कोई कारण नहीं है, वहा कर्म का बन्ध ही नहीं होता।

* *मिथ्यात्व के कारण से वधने वाली अनतानुवधी आदि कर्म प्रकृतिया दूसरे, तीसरे गुणस्थान में नहीं वधती है। अत दूसरे, तीसरे गुण, मे मिथ्यात्व को कारण मानना उपयुक्त नहीं है क्रिया द्वार में अनतानुवधी के उदय के कारण तथा तीसरे गुण मे अज्ञान अवस्था के कारण मिथ्यादर्शन प्रत्यया क्रिया मानी गई है, किन्तु यहा बध के कारणो का अधिकार है अत मिथ्यात्व को कारण के रूप में ग्रहण नहीं किया गया।*

अधर्मव्यवसायी। पाचवे गु मे आठ बोल पाये जाते है- 1 सयतासयत 2 प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी 3 व्रताव्रती 4 सवृतासवृत 5. बालपण्डित 6 सुप्त-जाग्रत 7. धर्माधर्मी 8 धर्मा-धर्मव्यवसायी। छठे गुणस्थान से चौदवे गु तक आठ बोल पाये जाते है- 1 संयती 2 प्रत्याख्यानी 3 विरत 4 सवृत 5 पण्डित 6 जाग्रत 7. धर्मी 8 धर्मव्यवसायी।

दूसरी तरह से गुणस्थान द्वार-

गत्यन्तर जाते मार्ग मे गुणस्थान तीन-पहला, दूसरा और चौथा।

अमर गु. तीन- 3, 12, 13

अप्रतिपाति गु तीन- 12, 13, 14

तीर्थकर नामकर्म के बन्धक गु पाच - 4, 5, 6, 7, 8

तीर्थकर के लिए अस्पृश्य गु पांच - 1,2,3,5,11

शाश्वत गु छ - 1, 4, 5, 6, 7, 13

अनाहारक गु पांच - 1, 2, 4, 13*, 14

मोक्ष प्राप्त करने वाला उस भव मे कम से आठ गु अवश्य प्राप्त करता है- 4, 7, 8, 9, 10, 12, 13, 14 और ससार अवस्थान काल मे कम से कम प्रथम गु सहित नौ गु प्राप्त करता है।

* 1, 2, 4 विग्रह गति एव 13 केवली समु की अपेक्षा।

16. योग द्वार

पहले दूसरे और चौथे गुणस्थान मे 13 योग- 1 आहारक और 2 आहारक मिश्र)- इन दो को छोड़कर पाये जाते है। तीसरे गु मे 10 योग (1 औदारिक मिश्र 2 वैक्रिय मिश्र 3 आहारक 4. आहारक मिश्र और 5. कार्मण, इन पांचो को छोड़कर) पाये जाते हैं। पांचवे गु मे 12 योग (1 आहारक 2 आहारक मिश्र और 3. कार्मण को छोड़कर) पाये जाते

13. आत्मा द्वार

आठ आत्माओ के नाम- 1 द्रव्य आत्मा 2 कषाय आत्मा 3 योग आत्मा 4 उपयोग आत्मा 5 ज्ञान आत्मा 6 दर्शन आत्मा 7 चारित्र आत्मा और 8 वीर्य आत्मा।

पहले और तीसरे गु मे ज्ञान और चारित्र आत्मा के सिवाय छह आत्माएं पाई जाती हैं। दूसरे, चौथे और पाचवे गु मे चारित्र आत्मा के सिवकाय सात आत्माए होती है। छठे गु से लेकर दसवे गु तक आठो आत्माए होती है। ग्यारहवे से तेरहवे गु तक कषाय आत्मा के सिवाय सात आत्माए होती है। चौदहवे गु मे कषाय आत्मा और योग आत्मा के सिवाय छह आत्माए होती है। सिद्ध भगवान् मे द्रव्य आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा एव दर्शन आत्मा- ये 4 आत्माए होती है।

14. जीव भेद द्वार

पहले गु मे जीव के चौदह भेद पाए जाते है। दूसरे गु मे जीव के छ भेद पाए जाते है दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय इनका अपर्याप्त, सज्ञी पचेन्द्रिय का पर्याप्त और अपर्याप्त। तीसरे गु मे जीव का एक ही भेद पाया जाता है - सज्ञी का पर्याप्त। चौथे गु मे सज्ञी का पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो भेद पाए जाते है। पाचवे से लेकर चौदहवे गुणस्थान तब जीव का एक ही भेद सज्ञी पचेन्द्रिय का पर्याप्त पाया जाता है।

15. गुणस्थान द्वार

प्रत्येक गुणस्थान अपने-अपने गुण से सयुक्त होता है। पहले गु से चौथे गु तक आठ बोल पाये जाते है। 1 असयत 2 अप्रत्याख्यानी 3 अविरत 4 असवृत 5 अपण्डित 6 अजाग्रत 7 अधर्मी, 8

19. हेतु द्वार

हेतु सत्तावन होते है- 5 मिथ्यात्व, 25 कषाय, 15 योग और 12 अव्रत (6 काय 5 इन्द्रिय, 1 मन)।

पहले गुणस्थान मे आहारक और आहारक मिश्र को छोडकर शेष पचपन हेतु पाये जाते है। दूसरे गुणस्थान मे पाच मित्यात्व को छोडकर पचास हेतु पाये जाते है। तीसरे गु मे पूर्वोक्त पचास मे से चार अनन्तानुवन्धी औदारिक मिश्र वैक्रिय मिश्र और कार्मण- इन सातो के सिवाय 43 हेतु पाये जाते है। चौथे गु मे पूर्वोक्त 43 के सिवाय औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र और कार्मण ये तीन विशेष होकर 46 हेतु पाये जाते है। पाचवे गु मे छियालीस मे से अप्रत्याख्यान की चौकडी, त्रस की अविरति और कार्मण- ये छह घटाकर चालीस हेतु पाये जाते है। छठे गु मे सत्ताईस हेतु पाये जाते है- 14 योग और 13 कषाय। सातवे आठवे गु मे औदारिक मिश्र,वैक्रिय वैक्रिय मिश्र और आहारक, आहारक मिश्र- इन पॉच को छोडकर बाईस हेतु पाये जाते है। नौवे गु मे हास्य आदि छह के सिवाय सोलह हेतु पाये जाते हैं। दसवे गु मे नौ योग और सज्वलन का लोभ, ये दस हेतु पाये जाते हैं। ग्यारहवे तथा बारहवे गु मे चार मन के, चार वचन के और एक औदारिक - ये नौ हेतु पाये जाते है। तेरहवे गु मे सात हेतु पाये जाते है- 1 सत्य मन योग, 2 व्यवहार मन योग, 3 सत्य भापा, 4 व्यवहार भाषा 5 औदारिक 6. औदारिक मिश्र ओर 7 कार्मण। चौदहवे गु. मे कोई भी हेतु नहीं होता।

20. मार्गणा द्वार*

*यहा मार्गणा का तात्पर्य आने व जाने के मार्ग से है। जैसे- पहले गुणस्थान में आगति मार्गणा मे आगति मार्गणा पाच यानी पहले गुणस्थान में जीव पाच गुणस्थानो (2, 3, 4, 5, 6) से आ सकता है और गति मार्गणा 5 यानी पहले गुणस्थान का जीव पाच गुणस्थानों (3, 4, 5, 6, 7)

हैं। छठे गु मे कार्मण के सिवाय चौदह योग पाये जाते है। सातवे गु ✻ से बारहवे गु तक चार मनोयोग, चार वचन योग और एक औदारिक- इस प्रकार नौ योग पाये जाते है। तेरहवे गु मे सात योग होते है- 1 सत्य मनोयोग 2 व्यवहार मनोयोग 3 सत्य वचन योग 4 व्यवहार वचन तथा 5 औदारिक- 6. औदारिक मिश्र तथा 7 कार्मण चौदहवे गुणस्थान मे योग नहीं होता।

✻ कर्म ग्रन्थ भाग 2 मे सातवें गुण मे अहारक द्विक, वैक्रिय द्विक का उदय नहीं बताया है। तथा प्रज्ञापना सूत्र के 21 वें पद में भी अप्रमत्तावस्था में अहारक शरीर नहीं बताया है अत 7 वे गुण में आहारक व वैक्रिय कायायोग नहीं मान कर 9 योग मानना ही उचित लगता है।

17. उपयोग द्वार

पहले और तीसरे गुणस्थान मे छह उपयोग हो सकते है- तीन अज्ञान- मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभग ज्ञान और तीन दर्शन- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन। दूसरे चौथे और पाचवे गु मे छह उपयोग होते हैं- 3 ज्ञान, 3 दर्शन। छठे से बारहवे गु तक (10वे गु को छोडकर) सात उपयोग होते हैं- पूर्वोक्त छह और एक मनःपर्याय ज्ञान। तेरहवे और चौदहवे गु मे केवलज्ञान और केवलदर्शन - ये दो ही उपयोग होते है। 10वे गुणस्थान मे उपयोग पावे चार-मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान, मन पर्यव ज्ञान।

18. लेश्या द्वार

पहले गुणस्थान से छठे गु तक छ लेश्याए पाई जाती है। सातवे गु मे तेजो, पद्म और शुक्ल- ये तीन लेश्याए होती है। आठवे से बारहवे तक एक शुक्ल लेश्या ही होती है। तेरहवे गु मे एक परम शुक्ल लेश्या होती है। चौदहवे गु मे लेश्या नहीं होती।

आठवे गुणस्थान मे आगति मार्गणा दो (सातवां, नवा गुणस्थान) गति मार्गणा तीन (चढे तो नवां, गिरे तो सातवां, काल करे तो चौथा गुणस्थान)।

नवे गुणस्थान मे आगति मार्गणा दो (आठवां, दसवा गुणस्थान) गति मार्गणा तीन (चढे तो दसवां, गिरे तो आठवा, काल करे तो चौथा गुणस्थान)।

दसवे गुणस्थान की आगति मार्गणा दो (नवा, ग्यारहवा गुणस्थान) गति मार्गणा चार (चढे तो ग्यारहववा-बारहवा गिरे तो नवां, काल करे तो चौथा गुणस्थान)।

ग्यारहवे गुणस्थान की आगति मार्गणा एक- दसवा गुणस्थान गति मार्गणा दो- गिरे तो दसवा, काल करे तो चौथा गुणस्थान।

बारहवे गुणस्थान की आगति मार्गणा एक- दसवां गुणस्थान गति मार्गणा एक- तेरहवां गुणस्थान।

तेरहवे गुणस्थान की आगति मार्गणा एक- बारहवां। गति मार्गणा एक- चौदहवां गुणस्थान।

चौदहवे गुणस्थान की आगति मार्गणा एक- तेरहवां गुणस्थान। गति मार्गणा एक- मोक्ष।

21. ध्यान द्वार*

पहले, दूसरे और तीसरे गुणस्थान मे आर्तध्यान तथा रौद्रध्यान पाये जाते है। चौथे और पांचवे मे आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान और धर्मध्यान पाये जाते हैं। छठे मे आर्त्तध्यान और धर्मध्यान होता है। सातवें में केवल धर्मध्यान ही है। आठवे से तेरहवे तक शुक्लध्यान पाया जाता है और चौदहवे गुणस्थान मे परमशुक्ल ध्यान होता है।

में जा सकता है।

पहले गुणस्थान मे आगति मार्गणा पाच (दूसरे, तीसरे, चौथे, पाचवे और छठे गुणस्थान से आ सकते है) गति मार्गणा पाच (तीसरे, चौथे, पाचवे, छठे* सातवे गुणस्थान मे जा सकते है)।

* जीव चढते परिणामों मे छठे गु मे भी जा सकता है। –ठाणाग सूत्र

दूसरे गुणस्थान की आगति मार्गणा तीन (चौथा, पाचवा, छठा गुणस्थान) गति मार्गणा एक (पहला गुणस्थान)।

तीसरे गुणस्थान की आगति मार्गणा चार (पहला, चौथा, पाचवॉ, छठा गुणस्थान) गति मार्गणा पॉच (गिरे तो पहला*, चढे तो चौथा, पाचवॉ, छठा सातवा* गुणस्थान।

* परिणामो की मलीनता मे ऊपर के गुण से नीचे के गुण मे आना।

* परिणामों की विशुद्धि से आगे के गुण में बढना।

चौथे गुणस्थान की आगति मार्गणा नौ (पहले से ग्यारहवे गुणस्थान तक दूसरे व चौथे को छोड़कर) गति मार्गणा छ· (चढे तो पाचवॉ, छठा, सातवॉ, गिरे तो तीसरा, दूसरा, पहला गुणस्थान)।

पाचवे गुणस्थान की आगति मार्गणा चार (पहला, तीसरा, चौथा, छठा) गति मार्गणा छः (चढे तो छठा सातवा, गिरे तो चौथा, तीसरा, दूसरा, पहला गुणस्थान)।

छठे गुणस्थान आगति मार्गणा पाच, पहला, तीसरा, चौथा, पॉचवा, सातवा। गति मार्गणा 6 (चढे तो सातवॉ, गिरे तो पॉचवा, चौथा, तीसरा, दूसरा, पहला गुणस्थान)।

सातवे गुणस्थान की आगति मार्गणा छह (पहला, तीसरा, चौथा, पॉचवा, छठा, आठवा गुणस्थान) गति मार्गणा तीन (चढे तो आठवा गिरे तो छठा, काल करे तो चौथा गुणस्थान)।

चारित्र, छठे और सातवे गु मे तीन चारित्र होते है- 1 सामायिक 2 छेदोपस्थानीय और 3 परिहार विशुद्धि। आठवे, नौवे गु मे दो चारित्र होते है- 1 सामायिक 2 छेदोपस्थानीय। दसवे गु मे 1 सूक्ष्मसम्पराय चारित्र होता है। ग्यारहवे से चौदहवे गु तक यथाख्यात चारित्र होता है।

26. आकर्ष द्वार*

* जीव एक भव की अपेक्षा और अनेक भवो की अपेक्षा प्रत्येक गुणस्थान को जघन्य और उत्कृष्ट कितनी बार फरस सकता है, उस फरसने की सख्या विशेष को आकर्ष कहते हैं।

पहले गुणस्थान का तीसरा भग (सादि सपर्यवसित), तीसरा, चौथा और पाचवां गुणस्थान एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार उत्कृष्ट पृथकत्व हजार बार प्राप्त हो सकता है। अनेक भवो की अपेक्षा जघन्य दो बार उत्कृष्ट असंख्यात बार प्राप्त हो सकता है। दूसरा गुणस्थान एक भवन की अपेक्षा जघन्य एक बार उत्कृष्ट दो बार और अनेक भवो की अपेक्षा जघन्य दो बार उत्कृष्ट पाच बार प्राप्त हो सकता है। छठा और सातवा गुणस्थान मिलाकर एक भव की अपेक्षा जघन्य एक वार उत्कृष्ट पृथकत्व 100 बार, अनेक भवो की अपेक्षा जघन्य दो वार उत्कृष्ट पृथकत्व 1000 बार। आठवां, नवां, दसवां, गुणस्थान एक भव मे जघन्य 1 बार उत्कृष्ट 4 चार, अनेक भवो की अपेक्षा जघन्य दो बार उत्कृष्ट नौ बार। ग्यारहवां गुणस्थान एक भव मे जघन्य 1 वार उत्कृष्ट 2 बार।

27. समकित द्वार

क्षायिक सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान से चौदहवें गु तक होता है। उपशम सम्यक्त्व चौथे गु से ग्यारहवे गु तक होता है। क्षायोपशमिक (वेदक) सम्यक्त्व चौथे से सातवे गु तक होता है। सास्वादन सम्यक्त्व दूसरे गु में होता है। मिथ्यात्व और मिश्र गु मे सम्यक्त्व नहीं है।

❊ मन की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं।

22. दण्डक द्वार

पहले गुणस्थान मे चौबीस दण्डक, दूसरे मे चौबीस मे से पाच स्थावर के छोडकर उन्नीस, तीसरे और चौथे मे (उन्नीस मे से तीन विकलेन्द्रिय के छोडकर) सोलह, पाचवे मे सज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य- ये दो छठे से चौदहवे गु तक मनुष्य का एक दण्डक पाया जाता है।

23. जीवयोनि द्वार

पहले गुणस्थान मे चौरासी लाख जीवयोनि। दूसरे गु मे (एकेन्द्रिय की 52 लाख छोडकर) बत्तीस लाख। तीसरे चौथे गु मे (तीन विकलेन्द्रिय की छह लाख घटाकर छब्बीस लाख, पाचवे गु मे (चौदह लाख मनुष्यो की और चार लाख तिर्यचो की- इस प्रकार) अठारह लाख, छठे गु से चौदहवे गु तक मनुष्य की चौदह लाख जीवयोनियां पायी जाती है।

24. निमित्त द्वार

पहले से चौथे तक चार गुणस्थान, दर्शनमोहनीय के निमित्त से होते हैं। पाचवे से बारहवे तक आठ गु चारित्र मोहनीय के निमित्त से होते है तथा तेरहवा तथा चौदहवा गु योग के निमित्त से होता है।*

❊ पहले व तीसरे गुणस्थान मे दर्शन मोहनीय का उदय निमित्त दूसरे दर्शन मोहनीय का अनुदय एव चारित्र मोहनीय अनतानुबधी) के उदय से। चौथे दर्शन मोहनीय का क्षय उपशम या क्षायोपशम निमित्त पाचवें छठे सातवे में चारित्र मोहनीय का क्षयोपशम निमित्त आठवे, नवे, दसवे मे चारित्र मोहनीय उपशम निमित्त बारहवे में चारित्र मोहनीय का क्षय निमित्त तेरहवे मे योग के सद्भाव का निमित्त चौदहवें में योग के अभाव का निमित्त होता है।

25. चारित्र द्वार

पहले से चौथे गुणस्थान तक चारित्र नहीं होता, पाचवे गु मे देश

तथा क्षीण मोही जीव (12वे और 14 वे) गुण वाले जीव सं गुण अर्थात् जघन्य से 1-2-3 उत्कृष्ट 108 पाये जाते है। (क्षपक श्रेणि के सम्पूर्ण काल की अपेक्षा पन्द्रह कर्म भूमि मे अन्य-अन्य जीव प्रवेश करे तो शत पृथक्त्व से अधिक नहीं होते)। इनसे तेरहवे गुण वाले जीव स गुण और ये पृथक्त्व करोड पाये जाते है। इनसे सातवे गुण स गुणा। उनसे छठे गुण-वाले सं. गुणा ये ज और उत्कृष्ट पृथक्त्व हजार करोड पाये जाते है। उनसे 5 वे गुण वाले असं गुणा* इनसे दूसरे गुण वाले असं गुणा* इनसे तीसरे गुण वाले असं गुणा* तीसरे गुण से चौथे गुण वाले अस गुणा* इनसे पहले गुण वाले अनत गुणा*

*क्योकि असख्यात गर्भज तिर्यंच भी इस पाँचवे गुणस्थान में हैं।

*दूसरे गुणस्थान वाले पॉचवें गुणस्थान से असख्यात इस कारण हे कि पाँचवाँ गुणस्थान केवल मनुष्य और तिर्यचो को होता है, किन्तु दूसरा गुणस्थान विकलेन्द्रियो का भी होता है, परन्तु पॉचवॉ नहीं हो सकता।

*यद्यपि दूसरा और तीसरा गुणस्थान चारों गतियो में पाया जाता है, परन्तु दूसरे की अपेक्षा तीसरे की स्थिति सख्यात गुणी हे तथा दूसरा गुणस्थान तो मात्र उपशम समकित से गिरते हुए ही आ सकता है किन्तु मिश्र गुणस्थान मिथ्यात्व से चढते हुए अथवा क्षयोपशम से गिरते हुए चौथे पॉचवें छठे किसी भी गुणस्थान से आ सकता हे। इस कारण तीसरे गुणस्थान वाले जीव दूसरे से असख्यात गुणे हैं। दूसरे पॉचवे गुण मे से प्रत्येक में वर्तमान जीव उ से क्षेत्रपल्यो के अस भाग में विद्यमान प्रदेश राशि प्रमाण है।

*तीसरे गुणस्थान की अपेक्षा चौथे की स्थिति बहुत अधिक है और यह भी चारों गतियों में पाया जाता है। अत चौथे गुणस्थान वाले जीव, उनकी अपेक्षा अधिक है।

*यहा एक बोल और भी कह सकते हैं- चौथे गुणस्थान से सिद्ध भगवन अनन्त गुण है। फिर सिद्धों से पहले गुणस्थान वाले अनन्त गुण होते हैं।

*साधारण वनस्पतिकाय के जीव, सभी मिथ्यादृष्टि है, अतएव पहले गुणस्थान वाले, चौथे गुणस्थान वालों से अनन्त गुण है। ये अनत लोकाकाश प्रदेश प्रमाण है।

*ब्यावर + सैलाना वाली प्रति मे पृ 345 पर सातवें गुण में जीवों की सख्या पृथक्त्व करोड़ बताई है परन्तु पच सग्रह भाग दो की गाथा 22 में निश्चित सख्या का उल्लेख नहीं है। वहाँ लिखा है - पमत्त हयरे उयोक्यरा अर्थात् अप्रमत्त मुनि प्रमत्त सयत से अल्प होते हैं।

इति गुणस्थान स्वरूप

---

28. अन्तर द्वार

पहले गुणस्थान के तीन भग है- 1 अनादि- अपर्यवसित (सदा से मित्यादृष्टि है और सदा रहेगे) 2 अनादि-सपर्यवसित (जिनके मिथ्यात्व की आदि नहीं, किन्तु अन्त है), 3 सादि-सपर्यवसित (जिनके मिथ्यात्व की आदि भी है और अन्त भी है)।

इन तीन भगो मे से तीसरे भग का अन्तर ज अन्तर्मुहूर्त और उ 2 छासठ सागर (अर्थात 132 सागर) झाझेरी है। दूसरे गुणस्थान का अन्तर जघन्य पल्योपम के असंख्यातवे भाग का उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद् परावर्तन का। तीसरे से लेकर ग्यारहवे गु तक का अन्तर ज अन्तर्मुहूर्त और उ देशोन (कुछ कम) अर्द्ध पुद्गल परावर्तन है। बारहवे, तेरहवे और चौदहवे गु का अन्तर नहीं है।

29. क्षेत्र प्रमाण द्वार

सास्वादन आदि सभी गुणस्थान वाले जीव लोक के असख्यातवे भाग मे रहे हुए है, मिथ्यादृष्टि सम्पूर्ण लोक मे है और समुद्घात अवस्था मे सयोगी भी सम्पूर्ण लोक व्यापी होते है।

30. गुणस्थान स्पर्शना द्वार

3-4थे गुण वाले आठ-आठ राजू को, दूसरे गुण- वाले बारह राजू को, 5वे गुण वाले छह राजू को, 12 वे गुण- वाले राजू के अस भाग को तथा शेष गुणस्थान वाले सात राजू प्रमाण लोक को स्पर्श करते है।

31. अल्पबहुत्व द्वार (जीव प्रमाण)

सबसे कम उपशमक (8-11वे गुण वर्ती) तथा उपशात मोही (11वे गुणवर्ती) जीव एक समय मे 1-54 तक पाये जाते है श्रेणि के सपूर्ण काल की अपेक्षा सख्यात पाये जाते है इनसे क्षपक (8-10 वे गुणस्थानवर्ती)

	ध्यान	दण्डक	जीव योनी	निमित्त	चारित्र	आकर्ष एक भव की अपेक्षा		आकर्ष अनेक भव की अपेक्षा		समकित	अन्तर		अल्प बहुत्व
						ज	उ	ज	उ		ज	उ	
पहले	2	24	84 लाख	दर्शन मो	×	सादि सपर्यवसित			(तीसरे भग की अपेक्षा)	×	अन्तर्मुहूर्त-	132 सा	12 अनत गुण
दूसरे	2	19	32 लाख	,,	×	1 बार	2 बार	2 बार	5 बार	सास्वादन	पल्य का अस भाग	देशोन अर्द्ध पु	8 अस गुण
तीसरे	2	16	26 लाख	,,	×	1 बार	पृथक्त्व हजार	2 बार असख्यात ,,	×	अन्तर्मुहूर्त	,,		9 अस गुण
चौथे	3	16	26 लाख	,,	×	1 बार	,,	2 बार	,,	क्षायिक/ उपशम	,,	,,	10 अस गुण
पाँचवें	3	2	18 लाख	चारित्र मो	देश चारित्र	1 ,,	,,	1,,	,,	,,/,,	,,	,,	7 सख्यात गुण
छठे	2	1	14 लाख	,,	3	1 ,,	पञ्चपृथक्त्व सौ	2,, पृथक्त्व हजार	,,/,,	,,	,,		6 सख्यात गुण
सातवे	1	1	14 लाख	,,	3	1,,	-"-	2,,	-"-	,,/,,	,,	,,	5 संख्यात गुण
आठवें	1	1	14 लाख	,,	2	1,,	4बार	2,,	9बार	,,/,,	,,	,,	3 सख्यात गुण
नौवें	1	1	14 लाख	,,	2	1,,	4,,	2,,	9,,	,,/,,	,,	,,	3 सख्यात गुण
दसवें	1	1	14 लाख	,,	1	1,,	4,,	2,,	9,,	,,/,,	,,	,,	3 सख्यात गुण
ग्यारहवें	1	1	14 लाख	,,	1	1,,	2,,	×	4"	,,/,,	,,	,,	1 सबसे थोडे
बारहवे	1	1	14 लाख	,,	1	1,,	1,,	×	×	क्षायिक	×		2 सख्यात गुण
तेरहवें	1	1	14 लाख	योग	1	1,,	1,,	×	×	,,	×		4 सख्यात गुण
चौदहवे	1	1	14 लाख	योग	1	1,,	1,,	×	×	,,	×		2 सख्यात गुण
सिद्ध भ	×	×	×	8 कर्मो के क्षय का	×	×	×	×	×	,,	×		11 अनत्त गुण

* अल्प बहुत्व में जो नम्बर दिया गया वह उस क्रम से जानने की अपेक्षा से। तथा 12, 14 गुण परस्पर तुल्य स. गुण, 8, 9, 10 गुण, स गुण परस्पर तुल्य समझना।

गुणस्थान स्वरूप

गुण	स्थिति द्वार		क्रिया	सत्ता	बन्ध	उदय	उदीरणा	निर्जरा	भाव	कारण	परिषह	आत्मा	जीव का भेद	गुण	योग	उपयोग	लेश्या	हेतु	मार्गणा	
																			आगति मार्गणा	गति
पहले	तीसरे भग की अपेक्षा ज अन्त	उ देशोन अर्ध पुद्गल परावर्तन	5	8	7/8	8	7/8	8	3	5	22	6	14	सभी अपने-अपने गुण से संयुक्त हैं।	13	6 (अ द)	6	55	5 (2,3,4,5,6)	5 (3,4,5,6,7)
दूसरे	एक समय	छह आवलिका	5	8	7/8	8	7/8	8	3	4	22	7	6		13	6 (ज्ञा द)	6	50	3 (4,5,6)	1 (1)
तीसरे	अन्त	अन्त	5	8	7	8	8	8	3	4	22	6	1		10	6 (अ द)	6	43	4 (1,4,5, 6)	5 (1,4,5,6,7)
चोथे	अन्त	33 सागर झाझेरी	4	8	7/8	8	7/8	8	उपशम/क्षपक	4	22	7	2		13	6 (ज्ञा द)	6	46	9 (1,3,5,--11)	6 (5,6,7,3,21)
पाचवे	अन्त	देशोन क्रोड पूर्व	3	8	7/8	8	7/8	8	5/4	3	22	7	1		12	6 (ज्ञा द)	6	40	4 (1,3,4,6)	6 (6,7,4,3,2,1)
छठे	एक समय	--,,--	2	8	7/8	8	7/8	8	5/4	3	22	8	1		14	7	6	27	5 (1,3,4,5,7)	6 (7,5,4,3,2,1)
सातवे	--,,--	अन्त	1	8	/8	8	6	8	5/4	2	22	8	1		9	7	3	22	6 (1,3,4,5,6,8)	3 (8,6,4)
आठवे	--,,--	--,,--	1	8	7	8	6	8	5/4	2	22	8	1		9	7	1	22	2 (7,9)	3 (9,7,4)
नावे	--,,--	--,,--	1	8	7	8	6	8	5/4	2	22	8	1		9	7	1	16	2 (8, 10)	3 (10,8,4)
दसवे	--,,--	--,,--	1	8	6	8	6/5	8	5/4	2	14	8	1		9	4	1	10	2 (9,11)	4 (11,12,9,4)
ग्यारहवे	--,,--	--,,--	×	8	1	7	5	7	5/4	1	14	7	1		9	7	1	9	1 (10)	2 (10, 4)
बारहवे	अन्त	--,,--	×	7	1	7	5/2	7	4	,,	14	7	1		9	7	1	9	1 (10)	1 (13)
तेरहवे	--,,--	देशोन क्रोड पूर्व	×	4	1	4	2/×	4	3	,,	11	7	1		7	2	1	7	1 (12)	1 (14)
चोदहवे	अन्त	अन्त	×	4	×	4	×	4	3	×	11	6	1		×	2	×	×	1 (13)	1 (मोक्ष)
सिद्ध भ	सादि अनत अनादि अनत --,,--	एक की अपेक्षा अनेक की अपेक्षा	×	×	×	×	×	×	2	×	×	4	×		×	2	×	×	1 (14)	×

नोट उदीरणा के क्रम का आधार कर्मग्रन्थ भाग 4 गाथा 61-621।

9. सन्नी खेचर तिर्यंच (चिडिया, कबूतर, कौवा आदि) 1, 2,3 नरक तक ही जाते है।

10 सन्नी स्थलचर (शेर, गाय, कुत्ता) आदि जो अपने बच्चो को स्तनपान कराते है वे, 1,2, 3,4 नरक तक ही जाते।

11 सन्नी उरपरिसर्प (सभी सर्प की जाति) 1, 2, 3, 4, 5 नरक तक ही जाते।

12 जलचर स्त्री 6ठी नरक तक तथा जलचर पुरुष, नपु सातवीं नरक तक जाते।

13 सन्नी ति पचे, 8वे देवलोक तक जा सकता है,तथा 8वे देवलोक तक के देवता सन्नी ति पचे मे आ सकते है। आगे नहीं।

14 तेऊ,वायु एव 7 वीं नरक के जीवो की नियमा तिर्यंच गति।

15 वासुदेव, चक्रवर्ती, श्री देवी की नियमा नरक गति।

16 9 वे देवलोक से सर्वाथसिद्ध देवो की नियमा मनुष्य गति।

17 साधु, श्रावक एव युगलिक की नियमा देवगति।

18 तीर्थकर भगवान् पहले मुनि बन के निर्वाण प्राप्त करते हैं।

19 केवली भगवान पहले मुनि बनते भी है, नहीं भी लेकिन सामायिक चारित्र के परिणाम, सूक्ष्म सपराय तथा यथाख्यात चारित्र अवश्य प्राप्त करते है।

20 चक्रवर्ती की गति यह सदेश देती है कि पद लिप्सा अधोगति का कारण है।

21 1 ली नारकी से आया जीव चक्रवर्ती बन सकता है।

22 1, 2 री ,, ,, ,, ,, बलदेव बासुदेव।

23 1, 2, 3 री ,, ,, ,, ,, तीर्थकर।

24 1, 2, 3, 4 थी ,, ,, ,, ,, केवली।

25 1, 2, 3, 4, 5वीं ,, ,, ,, ,, साधु।

26 1, 2, 3, 4, 5, 6ठी ,, ,, ,, ,, श्रावक।

गति आगति

(प्रज्ञापना सूत्र के छट्ठे पद के आधार से)

जीवो की आगति और गति का वर्णन किया जाता है।

आगति- जीव जिसगति से आकर उत्पन्न होता है।

गति- जीव मरने के बाद जिस गति मे जाकर उत्पन्न होता है।

अपेक्षा भेद से जीव के एक, दो, तीन, चार आदि अनेक भेद होते है। किसी अपेक्षा से 563 भेद भी है। ये इस प्रकार है- नारकियो के 14, तिर्यच के 48, मनुष्यो के 303 और देवो के 198।(विशेष खुल्लासा जीव धडा मे देखे)।

गति आगति के विशेष बिन्दु -

1 नारकी, देवता, युगलिक अपर्याप्त अवस्था मे नहीं मरते।

2 नारकी जीव मरकर नरक, देव, युगलिक, एके,बे ते , चऊ तथा असन्नी पं मे उत्पन्न नहीं होते।

3 देवता मरकर देव, नरक, युगलिक, बे ते चऊ तथा तेऊ, वाऊ मे नहीं जाते।

4 एके बे, ते, चऊ, जीव नारकी देवता मे उत्पन्न नहीं होते। नारकी, देवता में जाने वाले पचेन्द्रिय ही होते है।

5 नरक, देव, युगलिक मे मात्र दो गति के जीव आते है। मनुष्य एव तिर्यच पचेन्द्रिय।

6 असन्नी मनुष्य अपर्याप्त अवस्था मे ही काल करता है। इसलिए नारकी देवता मे नहीं जाता।

7 असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय पहली नारकी तक तथा देवता मे 25 भवनपति 26 वाणव्यन्तर तक ही जाते है।

8 सन्नी भुजपरिसर्प (चूहा, छिपकली, नेवला आदि) 1, 2, नरक तक ही जाते है।

कर्मभूमिज मनुष्य, 30 अकर्मभूमिज और 5 सज्ञी तिर्यच के पर्याप्त। गति 46 की -भवनपति के सामान।

10. दूसरे देवलोक में आगति 40 की – 30 अकर्मभूमिज मे से 5 हैमवत और 5 हैरण्यवत के 10भेद छोडकर20 तथा 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यच। गति 46 की - भवनपति के समान।

11. पहले किल्विषी में आगति 30 की– 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यच, 5 देवकुरु और 5 उत्तरकुरु। गति 46 की भवनपति के समान।

12. तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक छः नौ लोकांतिक और दूसरे व तीसरे किल्विषी, इन सतरह प्रकार के देवों में आगति20 की – 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यच पचे के पर्याप्त। गति 40 की-15 कर्मभूमि के मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यच के पर्याप्त और अपर्याप्त।

13. नौवें से बारहवें देवलोक, नौग्रैवेयक और पांच अनुत्तर विमान,इन अड्डारह जाति के देवों में आगति 15 की– 15 कर्मभूमि के पर्याप्त मनुष्य की। गति 30 की– 15 कर्मभूमि के पर्याप्त और अपर्याप्त मनुष्य।

14. पृथ्वी, जल और वनस्पति में आगति 243 की– 101 सम्मूच्छिम (अपर्याप्त) मनुष्य, 30 (पंद्रह कर्मभूमि के पर्याप्त- अपर्याप्त) मनुष्य, 48 तिर्यच, 64 देव (25 भवनपति, 26 वाणव्यन्तर, 10 ज्योतिषी, पहला व दूसरा देवलोक के और पहला किल्विषी के पर्याप्त) गति 179 की - 101 सम्मूर्च्छिम (अपर्याप्त) मनुष्य, 15 कर्मभूमि के पर्याप्त और 15 अपर्याप्त तथा 48 तिर्यच।

15. तेजस्काय और वायुकाय में आगति– 179 की – ऊपर लिखे अनुसार।गति 48 तिर्यचो की।

16. तीन विकलेन्द्रिय में आगति– 179 की और गति 179 की पूर्ववत्।

---

27 1, 2,3, 4, 5, 6, 7 वीं ,, ,, ,, ,, सम्यग् दृष्टि बन सकता है।

1 पहली नारकी मे आगति 25 की है। यथा - 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यच और 5 असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय, इन सब के पर्याप्त। इन 25 स्थानो से आकर जीव, पहली नरक मे उत्पन्न होते है। गति 40 की- 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यच। इन 20 के पर्याप्त और 20 अपर्याप्त।

2 दूसरी नारकी मे आगति 20 की– 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 5 सज्ञी तिर्यच के पर्याप्त। गति 40 की पहली नारकी के समान।

3. तीसरी नारकी मे आगति 19 की – दूसरी नारकी के 20 भेदो मे से भुजपरिसर्प को छोडकर। गति 40 की पहली नारकी के समान।

4. चौथी नारकी मे आगति 18 की तीसरी नारकी के 19 भेदो मे से 'खेचर' को छोडकर । गति 40 की- पहली नारकी के समान।

5 पांचवी नारकी मे आगति 17 की – चौथी नारकी के 18 भेदो मे से स्थलचर को छोडकर। गति 40 की।

6 छठी नारकी में आगति 16 की – पाचवीं नारकी के 17 भेदो मे से उरसपरिसर्प को छोडकर। गति 40 की।

7 सातवी नारकी मे आगति 16 की - 15 कर्मभूमिज मनुष्य और 1 मत्स्य जलचर के पर्याप्त।गति 10 की - 5 सज्ञी तिर्यच के पर्याप्त और 5 अपर्याप्त।

8. भवनपति वाणव्यन्तरदेव में आगति 111 की –101 सज्ञी मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यच और 5 असंज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय के पर्याप्त। गति 46 की - 15 कर्मभूमिज, 5 सज्ञीतिर्यच, 1 बादर पृथ्वीकाय, 1 बादर अप्काय और 1 बादर प्रत्येक वनस्पतिकाय। इन 23 के पर्याप्त और अपर्याप्त कुल 46।

9 ज्योतिषी और पहले देवलोक में आगति 50 की - 15

कर्मभूमि और 5 संज्ञी तिर्यच इन 20 के पर्याप्त। उनकी गति भिन्न-भिन्न है।

पांच देवकुरु और पांच उत्तरकुरु– इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति-128 की 64 प्रकार के देव (25 भवनपति, 26 वाणव्यन्तर, 10 ज्योतिषी, 2 देवलोक व पहला किल्विषी) के पर्याप्त और 64 अपर्याप्त।

पांच हरिवास और पाच रम्यक्वास,इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति 126 की। 128 मे से पहले किल्विषी के पर्याप्त और अपर्याप्त छोडकर।

पांच हैमवत और पाच हैरण्यवत, इन दस क्षेत्रो के मनुष्यो की गति 124 की।126 में से दूसरे देवलोक के पर्याप्त और अपर्याप्त छोडकर।

22. छप्पन अन्तरद्वीपों में आगति 25 की - 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 संज्ञी तिर्यच और 5 असंज्ञी तिर्यच के पर्याप्त। गति 102 की- 25 भवनपति और 26 वाणव्यन्तर। इन 51 के पर्याप्त और 51 अपर्याप्त।

23. तीर्थंकर की आगति 38 की- 35 वैमानिको के (12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रेवेयक व 5 अनुत्तर विमान) और प्रथम 3 नारकी के पर्याप्त।गति- मोक्ष की।

24. चक्रवर्ती की आगति 82 की -99 जाति के देवो मे से 15 परमाधामी और 3 किल्विषी, इन 18 को छोडकर शेष बचे हुए 81 देव और पहली नारकी के पर्याप्त। गति 14 की- 7 नरक के पर्याप्त और अपर्याप्त (यदि दीक्षा लेवे तो साधु की गति के समान)।

25. वासुदेव की आगति 32 की- 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक 9 ग्रैवैयक और पहली व दूसरी नारकी के पर्याप्त, इस प्रकार 32। गति 14 की- सात नरक के पर्याप्त और अपर्याप्त।

26. बलदेव की आगति 83 की- चक्रवर्ती वत् 82 और दूसरी नारकी से। गति-पदवी अमर (देवलोक या मोक्ष) क्योकि बलदेव नियमा साधुपना स्वीकार करते है अत: साधु की गति के समान।

17. असंज्ञी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे आगति- 179 भेदो की पूर्ववत्। गति 395 की- 56 अन्तरद्वीप के मनुष्य, 25 भवनपति के और 26 व्यन्तर के (यो कुल 51 जाति के देव) और पहली नारकी, इन 108 के पर्याप्त, अपर्याप्त 216 और 179 पूर्व कहे हुए। इस प्रकार 395।

18 पांच संज्ञी तिर्यच में आगति 267 की –81 प्रकार के देव (ऊपर के चार देवलोक, नौग्रैवेयक, पाच अनुत्तर विमान- इन 18 को छोडकर) 7 नारकी के पर्याप्त और पहले कहे हुए 179 भेद, ये सब मिलाकर 267 भेद हुए। इन पाचो की गति भिन्न-भिन्न इस प्रकार है-

जलचर की गति–527 की – 563 भेदो मे से नौवे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक के 18 जाति के देव के पर्याप्त और अपर्याप्त- ये 36 कम करने से शेष बचे हुए 527।

उरपरिसर्प की गति- 523 की 527 भेदो मे से छठी और सातवीं नारकी का पर्याप्त और अपर्याप्त- ये 4 छोडकर।

स्थलचर की गति- 521 की – 523 मे से पाचवीं नारकी का पर्याप्त और अपर्याप्त- ये 2 छोडकर।

खेचर की गति- 519 भेद की – 521 मे से चौथी नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त - ये 2 छोडकर।

भुजपरिसर्प की गति- 517 भेद की – 519 मे से तीसरी नारकी के पर्याप्त और अपर्याप्त - ये 2 छोडकर।

19. असज्ञी मनुष्य में आगति- 171 भेद की। पहले कहे हुए 179 भेदो मे से तेउकाय और वायुकाय के 8 भेद कम करके शेष बचे हुए। गति 179 भेद की पूर्ववत्।

20 पंद्रह कर्मभूमि के संज्ञी मनुष्य में आगति 276 भेद की। 171 पूर्ववत् (असज्ञी मनुष्य की आगति के समान) 99 जाति के देव और 6 पहली से छठी नारकी के पर्याप्त। गति 563 की।

21. तीस अकर्मभूमि के संज्ञी मनुष्य की आगति 20 की–15

14 के पर्याप्त- अपर्याप्त के 28 भेदो को निकालकर शेष रहे हुए।

33. स्त्रीवेद की आगति 371 की- मिथ्यादृष्टि के अनुसार। गति 561 की (सातवीं नरक के पर्याप्त, अपर्याप्त छोडकर)।

34. पुरुष वेद की आगति 371 की- स्त्रीवेद की आगति के अनुसार।गति 563 की।

35 नपुंसक वेद की आगति 285 की-179 पहले कहे हुए, 99 प्रकार के देव पर्याप्त, 7 नारकी के पर्याप्त- ये 285 तथा गति 563 की।

36. गर्भज जीव की आगति 285 की नपुसक वेदवत्। गति 563।

37. नोगर्भज जीवों की आगति 329 की 179 की लडी, 64 जाति के देवता (दूसरे देवलोक तक) 86 युगलिक। गति- 395 की। असंज्ञी ति पंचेन्द्रियवत्।

--*--

'गमा'✪ का थोकड़ा

(भगवती सूत्र शतक 24 वां उद्देशा 1 से 24 तक)

इसके आठ द्वार है :-

1 ले बोले घर 44 - वैक्रिय के 34 और औदारिक के 10

(22 दंडक के 22 घर + 7 नारकी के + 15 वैमानिक के)

वैक्रिय के 34 :	7 नैरयिक	10 भवनपति	1 वाणव्यन्तर
	1 ज्योतिषी	12 वैमानिक	1 ग्रैवेयक
	1 चार अनुत्तर विमान		1 सर्वार्थसिद्ध
	कुल - 34 घर		

औदारिक के 10 : 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, 1 तिर्यच पचे ,

✪ गमा-गम् धातु से बना है, इसके 3 अर्थ है 1 गमन करना 2 जाना 3 जानना, अर्थात् जीवो के विषय में कुछ विस्तार से जानना।

27. केवली की आगति 108 की- 99 जाति के देव मे से 15 परमाधामी और 3 किल्विषी निकालकर, शेष 81, 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यच, 1बादर पृथ्वी, 1 बादर पानी, 1 प्रत्येक बादर वनस्पति और पहले की चार नरक। इस प्रकार 108 के पर्याप्त। गति मोक्ष की।

28. साधु की आगति 275 की- 171 पूर्वोक्त (असज्ञी मनुष्य की आगति नं 19 वत्) 99 प्रकार के देव और प्रथम 5 नारकी के पर्याप्त, इस प्रकार 275। गति 70 भेद की। 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रैवेयक और 5 अनुत्तर विमान के देव। इन 35 के पर्याप्त और अपर्याप्त 70 और मोक्ष भी।

29 श्रावक की आगति 276 की- पूर्वोक्त 275 और छठी नरक। गति 42 की- 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, इन 21 जाति के देवो के पर्याप्त और अपर्याप्त।

30. सम्यग्दृष्टि की आगति 363 की- 99 प्रकार के देव 101 सज्ञी मनुष्य के पर्याप्त, 101 सम्मूर्छिम मनुष्य, 15 कर्मभूमिज मनुष्य के अपर्याप्त, 7 नारकी के पर्याप्त और तेजस्काय, वायुकाय के 8 भेदो को छोडकर शेष रहे हुए 40 भेद तिर्यच के, सभी मिलाकर 363। गति 282 भेद की- 81 जाति के देवता, 15 कर्मभूमिज मनुष्य, 30 अकर्मभूमिज मनुष्य, 5 सज्ञी तिर्यच और 6 नारकी, इन 137 के पर्याप्त और अपर्याप्त, इस प्रकार 274 तथा 3 विकलेन्द्रिय और 5 असज्ञी तिर्यच पचेन्द्रिय के अपर्याप्त।

31 मिथ्यादृष्टि की आगति 371 की- 363 पूर्वोक्त तथा 8 तेउ वायु के। गति 553 की - 563 मे से 5 अनुत्तर विमान के पर्याप्त और अपर्याप्त ये 10 छोडकर।

32 माडलिक राजा की आगति 276 की- श्रावक के भेदो के अनुसार।गति 535 की- 563 मे से 9 ग्रैवेयक 5अनुत्तर विमान इन

तीसरे से 8 वे देवलोक तक - इन छः घरो मे दो-दो जीव आते है। सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य 6×2=12 ।

9 वे से 12 वे देवलोक 4, नोग्रैवेयक का 1, चार अनुत्तर विमान का 1, सर्वार्थसिद्ध का 1, इन 7 घरो मे 1-1 जीव आता है। सन्नी मनुष्य 7 × 1 = 7

औदारिक में आगत 220 जीवों की निम्न प्रकार-

पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे 26-26 जीव आवे। 26×3 =78 ।

14 वैक्रिय के- भवनपति 10, वाणव्यन्तर 1, ज्योतिषी 1,पहला देवलोक 1, दूसरा देवलोक 1

12 औदारिक के- 5 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यच पचेन्द्रिय के 2, (सन्नी, असन्नी) मनुष्य के 2 (सन्नी और असन्नी)।

तेऊ, वाउ, तीन विकलेन्द्रिय- इन 5 घरो मे औदारिक के 12-12 जीव आते है, उपर्युक्त। 5×12=60

तिर्यच पंचेन्द्रिय के घर मे 39 जीव आते हैं। वैक्रिय के 27 और औदारिक के 12। 39×1=39

27 वैक्रिय के- नैरयिक 7, देवता 20 (दस भवनपति, वाणव्यन्तर ज्योतिषी, 1 से 8 वे देवलोक तक)।

12 औदारिक के - उपर्युक्त।

मनुष्य के घर मे 43 जीव आते है। वैक्रिय के 33, औदारिक के दस। वैक्रिय के 34 जीव मे से 7 वीं नारकी छोड कर। तथा औदारिक के 14 जीव मे से- तेऊ, वाऊ, युगलिक तिर्यच, युगलिक मनुष्य छोडकर। इस प्रकार 78 + 60 + 39 + 43 = 220

4. चौथे बोले गम्मा 9 · ये 9 गमक स्थिति की अपेक्षा है।

1 औघिक से औघिक
2 औघिक से जघन्य
3 औघिक से उत्कृष्ट
6 जघन्य से उत्कृष्ट
7 उत्कृष्ट से औघिक
8. उत्कृष्ट से जघन्य

1 मनुष्य - कुल 10 घर

2रे. बोले जीव 48 वैक्रिय के 34 औदारिक के 14

वैक्रिय के 34 : 7 नैरयिक 10 भवनपति 1 वाणव्यन्तर
1 ज्योतिषी 12 वैमानिक 1ग्रैवेयक
1 चार अनुत्तर विमान, 1 स्वार्थसिद्ध
कुल 34 घर।

औदारिक के 14 : 5 स्थावर 3 विकलेन्द्रिय
1 असन्नी तिर्यचपचेन्द्रिय
1 सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय 1 युगलिया तिर्यच
1 असन्नी मनुष्य 1 सन्नी मनुष्य*
1 युगलिया मनुष्य⊛ **कुल - 14 घर**

3 रे बोले आगत के स्थान✪ 312 वैक्रिय मे 101 औदारिक मे 220 - **वैक्रिय में आगत 101 जीवो की निम्न प्रकार-**

पहली नारकी मे 3 जीव आवे-तिर्यच पचेन्द्रिय के 2 असन्नी और सन्नी,मनुष्य का 1 सन्नी । 1 × 3 = 3

दूसरी नरक से सातवीं नरक तक 6 घरो मे 2-2 जीव आते है। सन्नी तिर्यच और सन्नी मनुष्य। 6 × 2 = 12।

दस भवनपति, एक वाणव्यतर- इन ग्यारह घरो मे 5-5 जीव आते है। 3 तिर्यच पचेन्द्रिय के (सन्नी, असन्नी, युगलिया), 2 मनुष्य (सन्नी, युगलिया) 11 × 5 = 55 ।

ज्योतिषी, पहला, दूसरा देवलोक- इन 3 घरो मे 4-4 जीव आते हैं। सन्नी तिर्यच, युगलिया तिर्यच, सन्नी मनुष्य, युगलिया मनुष्य 3×4=12।

---

* सन्नी मनुष्य - सख्यात वर्षायुष्क
⊛ युगलिक मनुष्य - असख्यात वर्षायुष्क
✪ घर + जीव = आगत स्थान

4 आने आश्री 3 गम्मा से (7, 8, 9) ज 2,उ 4 भव करे।

4. **भव का स्थान चौथा-** सन्नी मनुष्य मर कर वैक्रिय के 15 घरो मे जावे। दस भवनपति, 1 वाणव्यन्तर, 1 ज्योतिषी 1 पहला देवलोक, 1 दूसरा देवलोक 1 पहली नारकी।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज पृथक्त्व मास उ करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- अपने-अपने स्थान के अनुसार।

3 कितना भव करे- जाने, आने आश्री ज 2, उ 8 भव करे।

5. **भव का स्थान पांचवां -** सन्नी मनुष्य मर कर वैक्रिय के 11 घरो मे जावे- देवताओ के 6 (3 से 8 वे देवलोक तक), नैरयिक के 5 (2 री से 6 ठी नरक तक)।

1 कितनी स्थिति वाला जावे-ज पृथक्त्व वर्ष उ करोड पूर्व।

2. कितनी स्थिति पावे- अपने-अपने स्थान के अनुसार।

3 कितना भव करे- जाने, आने आश्री ज 2, उ 8 भव करे।

6. **भव का स्थान छठा-** सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के पाच घरो में जावे (9वे से 12 वे देवलोक तक 4, नौ ग्रैवेयक का 1)।

1. कितनी स्थिति वाला जावे- ज पृथक्त्व वर्ष उ. करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- अपने-अपने स्थान के अनुसार।

3 कितना भव करे- जाने आश्री ज 3, उ 7 भव करें।
आने आश्री ज. 2, उ 6 भव करे।

7. **भव का स्थान सातवां-** सन्नी मनुष्य मर के 4 अनुत्तर विमान के 1 घर में जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज पृथक्त्व वर्ष उ करोड़ पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- ज 31 सागरोपम, उत्कृष्ट 33 सागरोपम।

3 कितने भव करे - जाने आश्री ज 3, उ 5 भव करें।

4 जघन्य से औधिक 9 उत्कृष्ट से उत्कृष्ट

5 जघन्य से जघन्य

5. पांचवें बोले भव के स्थान 16 :

1. भव का स्थान पहला – असन्नी तिर्यंच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 12 घरो मे जावे।

दस भवनपति -1 वाणव्यन्तर, 1 पहली नारकी।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज अ मु (अन्तर्मुहूर्त) उत्कृष्ट करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- ज. दस हजार वर्ष उ पल्योपम का असख्यातवा भाग।

3 कितना भव करे- ज उ. दो भव करे।

2 भव का स्थान दूसरा– सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 26घरो मे जावे- पहली से छठी नारकी तक 6, देवता के 20 (8वे देवलोक तक)।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज अ मु उत्कृष्ट करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे - अपने-अपने स्थान अनुसार।

3 कितना भव करे- जाने, आने, आश्री ज 2, उ 8 भव करे।

3. भव का स्थान तीसरा– सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मरकर सातवीं नरक मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज अ मु उत्कृष्ट करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- ज 22 सागरोपम, उत्कृष्ट 33 सागरोपम।

3 कितना भव करे - 1 जाने आश्री 6 गम्मा से (1,2,4, 5, 7, 8 वा) ज 3, उ 7 भव करे।

2 जाने आश्री 3 गम्मा से (3, 6, 9) ज 3, उ 5 भव करे।

3 आने आश्री 1 से 6 गम्मा तक ज 2, उ 6 भव करे।

वर्ष।

5. पहले देवलोक मे ज 1 पल्योपम, उ. 3 पल्योपम।

6 दूसरे देवलोक मे ज 1 पल्योपम झाझेरी, उ 3 पल्योपम झा।

3. कितना भव करे - ज उ 2 भव करे।

11. भव का स्थान ग्यारहवां- 14 प्रकार के वैक्रिय के जीव मरकर- पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे जावे।

9 ही गम्मे से। ज उ 2 भव करे।

12. भव का स्थान बारहवां- 4 स्थावर मरकर- 5 स्थावर मे जावे 4 × 5 = 20। वनस्पति मरकर- 4 स्थावर मे जावे। 1 × 4=4। ये 24 जीव 4गम्मे से (1,2,4,5) ज 2 उ असख्यात भव। 5 गम्मे से ज 2 उ 8। वनस्पति मरकर- वनस्पति मे जावे तो 4 गम्मे से ज 2 उ. अनत भव[1] 5 गम्मे से ज 2 उ 8 भव करे।

13. भव का स्थान तेरहवां-

5 स्थावर मरकर- 3 विकलेन्द्रिय मे जावे 5 × 3 =15

3 विकलेन्द्रिय मरकर- 5 स्थावर मे जावे 3×5=15

3 विकलेन्द्रिय मरकर - 3 विकलेन्द्रिय मे जावे 3×3=9

ये 39 जीव 4 गम्मे से ज 2 उ. संख्यात भव करे शेष 5 गम्मे से ज 2 उ 8 भव करे।

14. भव का स्थान चौदहवां - ⊛सन्नी ति पं , असन्नी ति प - औदारिक के 8 घर मे (5 स्थावर 3 वि) 9 गम्मे से जावे ज 2 उ 8 भव करे। 8 जीव (5,3)- ति पं. के घर मे 9 गम्मे से जावे ज 2 उ 8 भव करे। सन्नी ति पं असन्नी ति प. सन्नी म - ति प

नोट-1. भव का स्थान 11 से 16 वें तक सभी जीव जहां भी जावे वहा "स्थिति" अपन-अपने स्थान प्रभाव समझना चाहिए।

⊛ 12 जीव मरकर तिर्यच प के 1 घर में =12, 2 जीव (म अ ति.) 8 घर में =16

आने आश्री ज 2, उ 4 भव करे।

8 **भव का स्थान आठवां** - सन्नी मनुष्य मरकर सर्वार्थ सिद्ध मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज पृथक्त्व वर्ष उ करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- अजघन्य अनुत्कृष्ट 33सागरोपम।

3 कितना भव करे- जाने आश्री 3 भव, आने आश्री 2 भव।

9 **भव का स्थान नवा-** सन्नी मनुष्य मरकर सातवीं नरक मे जावे।

1 कितनी स्थिति वाला जावे- ज पृथक्त्व वर्ष उ करोड पूर्व।

2 कितनी स्थिति पावे- ज 22 सागरोपम, उ 33 सागरोपम।

3 कितना भव करे - जाने, आने आश्री ज उ 2 भव करे।

10. **भव का स्थान दसवां-** दो प्रकार के युगलिया मर कर वैक्रिय के 14 घरो मे जावे (10 भवनपति, वाणव्यतर 1, ज्योतिषी 1, 1 ला 2 रा देवलोक)।

1 कितनी स्थिति वाला जावे -

1 भवनपति वाणव्यतर मे जाने वाले की स्थिति - ज करोड पूर्व झाझेरी उ 3 पल्योपम।

2 ज्योतिषी मे जाने वाली की स्थिति ज पल्योपम का आठवा भाग, उ 3 पल्योपम।

3 1ला देवलोक मे जाने वाले की स्थिति ज 1 पल्योपम, उ 3 पल्योपम।

4 2 रे देवलोक मे जाने वाले की स्थिति, ज 1 पल्योपम झाझेरी, उ 3 पल्योपम।

2. कितनी स्थिति पावे -

1 असुर कुमार मे ज 10 हजार वर्ष उ 3 पल्योपम।

2 शेष नो निकाय मे ज 10 हजार वर्ष उ देशोण दो पल्योपम।

3 वाणव्यतर मे ज 10 हजार वर्ष उ 1 पल्योपम।

4 ज्योतिषी मे ज पल्य का आठवा भाग, उ 1 पल्योपम 1 लाख

के देवता मरकर मनुष्य के घर मे आवे तो 7,8, 9- इन गम्मो से आते है। शेष 6 गम्मा टूटते है। दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिष और 1, 2, देवलोक इन 3 घरो मे जाते है तब चौथा और छठा गम्मा टूटता है।

2 × 3 =6 × 2 = 12 (कुल 84 =60+6+6+12)

कुल गम्मा	–	टूटता गम्मा	= खरा गम्मा
2889	–	84	= 2805

जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के 774 गम्मा।

भव का स्थान - 1, 8, 9, 10, 11, 14, 15, 16

जघन्य 2, उत्कृष्ट 8 भव के 1646 गम्मा।

भव का स्थान- 2, 4, 5, 12, 13, 14, 15।

जघन्य 2,उ. असंख्यात भव के 96 गम्मा (भव का स्थान 12वा)।

जघन्य 2, उ अनंता भव के 4 गम्मा (भव का स्थान 12वा)

जघन्य 2, उ सख्याता भव के 156 गम्मा (भव का स्थान 13वां)।

ज 3 उ 7 भव के तथा ज 2 उ 6 भव के 51-51 गम्मे (भव का स्थान 6 वां मे 45 गमे तथा भव का स्थान 3 मे 6 गमे)

ज 3 उ 5 भव के तथा ज. 2 उ 4 भव के 12-12 गम्मे (भव का स्थान 7 वा मे 9 गमे तथा भव का स्थान 3 रा में 3 गमे)

ज उ 3 भव के 3 गमे (भवन का स्थान 8 वा)

जघन्य उत्कृष्ट 2 भव के गम्मा 774 निम्न प्रकार –

12-असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मर कर वैक्रिय के 12 घर मे जावे।

28-दो प्रकार के युगलिया मर कर वैक्रिय के 14घर में जावे।

42-14 प्रकार के देवता मर के पृथ्वी, पानी, वनस्पति में जावे।

(14×3=42) 12 + 28 + 42 = 82

के घर मे 2 गम्मे (3, 9) से जावे तो ज उ 2 भव करे तथा 7 गम्मे से जावे तो ज 2 उ 8 भव करे। असन्नी म - ति प के घर मे 3 गम्मे से जावे 2 उ 8 भव करे।

15. **भव का स्थान पंद्रहवां-** ⊕सन्नी म , असन्नी म - 6 घर मे (3 स्थावर 3 वि) 9 गम्मे से जावे ज 2 उ 8 भव करे। 6 जीव (3, 3)- मनुष्य के घर मे 9 गम्मे से जावे ज 2 उ 8 भव करे। सन्नी ति प , असन्नी ति पं , सन्नी म - मनुष्य के घर मे 2 गम्मे (3, 9) से जावे तो ज 2 भव करे तथा 7 गम्मे से जावे तो ज 2 उ 8 भव करे। असन्नी म - मनुष्य के घर मे 3 गम्मे से जावे ज 2 उ 8 भव करे।

16. **भव का स्थान सोलहवां-** सन्नी, असन्नी मनुष्य - तेऊ, वाऊ के घर मे, सन्नी मनुष्य 9 गम्मे से, असन्नी म 3 गम्मे से जावे तो ज उ 2 भव करे।

6. छठे बोले गम्मा 2805 (गमक- विकल्प)

आगत के स्थान 321 बताये। ये सब जीव 9-9 गम्मे से यदि आते हो तो 321 × 9 = 2889 होते है। परन्तु इनमे 84 गम्मे टूटते है वे इस प्रकार - समुर्च्छिम मनुष्य मरकर औदारिक के दस घरो में जावे। 4, 5, 6 इन तीन गम्मो से जाता है। क्योकि समूर्च्छिम मनुष्य की अन्तर्मुहूर्त की स्थिति है। इसलिए शेष 6 गम्मे टूटते है। एक घर मे जाते हुए 6 गम्मा टूटते है तो 10 घर मे जाते हुए 60 गम्मे टूटते है।

सन्नी मनुष्य मर के सर्वार्थसिद्ध मे 3,6, 9 वा- इन तीन गम्मो से ही जाता है शेष 6 गम्मे टूटते है। क्योकि सर्वार्थसिद्ध मे केवल अजघन्य अनउत्कृष्ट 33 सागरोपम की स्थिति है। सर्वार्थ सिद्ध

⊕ 10 जीव मरकर- मनुष्य के 1 घर में =10, 2 जीव (स ,अ मनु) - 6 घर (3 स्था 3 वि) =12

वनस्पतिकाय	बेइन्द्रिय	तेइन्द्रिय	चउइन्द्रिय=536
70	70	70	70

(96) तिर्यच पंचेन्द्रिय का 1 घर

72-5 स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय– ये 8 जीव 9 गम्मा से जाते हैं।

8×9=72

24- सन्नी तिर्यच 7 गम्मा से, असन्नी तिर्यच 7 गम्मा से, सन्नी मनुष्य 7 गम्मासे, असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से=24।

(78) मनुष्य का एक घर

54- तीन स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय 6 जीव 9 गम्मा से।

6×9=54

24- असन्नी तिर्यच पचेन्दिय 7 गम्मा से, सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय 7 गम्मा से। सन्नी मनुष्य 7 गम्मा से, असन्नी म 3 गम्मा से।

936 + 536 + 96 + 78 = 1646 गम्मा।

7. सातवें बोले नाणत्ता *[1] (अन्तर, फरक) 1998

(नाणत्ता पडे 9 बोलों मे 1 अवगाहना 2 लेश्या 3 दृष्टि 4 ज्ञान-अज्ञान 5 योग, 6 समुद्घात 7 आयुष्य 8 अध्यवसाय 9 अनुवन्ध)

औदारिक से वैक्रिय में जाने के नाणत्ता 715 निम्न प्रकार-

60 असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मरके वैक्रिय के 12 घर मे जावे। नाणत्ता पडे 5-5, 12×5=60। जघन्य गम्मा 3 में (4, 5, 6) नाणत्ता पडे 3-(1) आयुष्य अन्तरर्मुहूर्त का (2) अध्यवसाय नारकी मे जाने वाले के अप्रशस्त, देवता में जाने वाले के प्रशस्त। (3) अनुवन्ध-

---

*[1] नोट-रिद्धि के 20 बोलों में 1 ला, 2 रा द्वार जीव जहा उत्पन्न होता है उसकी अपेक्षा से, 20 वा द्वार दोनों भव सम्बन्धि, शेष 17 द्वारो मे जाने वाले जीवों के उस भव सम्बन्धि कथन किया जाता है। उसमें से 48 जीव, 321 आगत स्थान में से किसी भी स्थान में जावे या 9 गम्मे मे से किसी भी गम्मे से जावे तो 8 द्वारों में नाणत्ता नहीं पडता किन्तु 9 बोलो मे नाणत्ता पडता है। (समुच्चय मे जो पाना चाहिए उसे स्पर्श किये विना कथन करे अर्थात् औघिक लब्धि के वोलों से ज लब्धि में जो अन्तर है उसे ज नाणता कहते हैं तथा औधिक लब्धि से उ लब्धि में जो अन्तर होता है उसे उ नाणता कहते हैं।

82 × 9 = 738 - 12 गम्मा टूटते है। दो प्रकार के युगलिया मरकर ज्योतिषी पहला, दूसरा देवलोक मे जावे तो 4 था और छठा गम्मा टूटता है, कारण जो युगलिया की स्थिति है उससे ज्यादा स्थिति देवता मे मिलती नहीं। 2×3=6×2=12

738 – 12 = 726

24 तेऊ, वाउ के दो घर मे सन्नी मनुष्य 9 गम्मा से, असन्नी मनुष्य 3 गम्मा से। 12+12 = 24।

9 सन्नी मनुष्य मरकर 7 वीं नरक मे जावे 9 गम्मा से।

3 सर्वार्थसिद्ध के देवता मनुष्य मे जावे, 7, 8, 9 वे 3 गम्मा से।

12 तिर्यच पचेन्द्रिय और मनुष्य- इन दो घरो मे 3 प्रकार के जीव (असन्नी तिर्यच, सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य) 2 गम्मे से जाते है। तीसरे और 9 वे गम्मे से युगलिया मे जाना नियमा है। अतः दो ही भव करते है। 3×2=6×2=12

726+24+9+3+12=774 गम्मा।

जघन्य दो उत्कृष्ट 8 भव के गम्मा 1646 इस प्रकार- (936) सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 26 घरो मे जावे। 2×26=52 वापिस ये ही वैक्रिय के 26 प्रकार के जीव मरकर तिर्यच और मनुष्य के घर मे जावे 26 ×2=52+52=104×9=936।

(536) पृथ्वीकाय का एक घर–

40- पाच स्थावर 3 विकलेन्द्रिय – ये 8 जीव, 5 गम्मा से जाते है। 8 × 5 = 40

30- अ तिर्यच पचेन्द्रिय 9 गम्मा से,सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय 9 गम्मा से, सन्नी मनुष्य 9 गम्मा से, अ मनुष्य 3 गम्मा से

इस प्रकार-

पृथ्वीकाय	अप्काय	तेऊकाय	वायुकाय
70	70	58	58

1. अवगाहना - पृथक्त्व अंगुल।
2. ज्ञान-अज्ञान-तीन ज्ञान, 3 अज्ञान की भजना।
3. समुद्घात - पांच।
4. आयुष्य - पृथक्त्व मास।
5 अनुबंध - आयुष्यवत्।

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

1. अवगाहना - पांच सौ धनुष की
2. आयुष्य - करोड पूर्व का
3 अनुबंध - आयुष्यवत्

114 सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 19 घरो मे जावे नाणत्ता पडे 6-6। 19 × 6 = 114

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

1. अवगाहना - पृथक्त्व हाथ की
2. आयुष्य - पृथक्त्व वर्ष
3. अनुबध - आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा में नाणत्ता पडे 3

1. अवगाहना- 500 धनुष की
2 आयुष्य - करोड पूर्व
3. अनुबध - आयुष्यवत्

70 तिर्यच का युगलिया मरकर वैक्रिय के 14 घर मे जावे। नाणत्ता पडे 5-5।14 × 5 = 70

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3

1 अवगाहना-भवनपति वाणव्यंतर देवो मे जाने वालो की ज प्रत्येक धनुष उ हजार धनुष झाझेरी। ज्योतिषी मे जाने वाले की अवगाहना ज प्रत्येक धनुप उ 1800 धनुष झाझेरी। 1ले देवलोक मे जाने वाले की अवगाहना ज प्रत्येक

आयुष्यवत् उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2।1 आयुष्य करोड पूर्व का 2 अनुबध -आयुष्यवत्।

267- सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय मरकर वैक्रिय के 27 घरो मे जावे (7 नारकी 20 देवता 8 वे देवलोक तक) नाणत्ता पडे 10-10।

27×10=270–3=267

जघन्य गम्मा 3 में नाणत्ता पडे 8

1 अवगाहना- ज अगुल के असख्यावे भाग उ पृथक्त्व धनुष की।

2. लेश्या- नारकी मे जाने वाले मे 3, भवनपति वाणव्यन्तर ज्यो 1,2, रा देवलोक में जाने वाले मे 4। 3, 4, 5 वे देवलोक मे जाने वाले मे लेश्या 5। 6, 7, 8 वे, देवलोक मे लेश्या का नाणत्ता नहीं, कारण अन्तर्मुहूर्त मे जाने वाले तिर्यच के शुक्ल लेश्या अनिवार्य है। अत. छः ही लेश्या का स्पर्श कर सकता है।

3 दृष्टि- नारकी से ज्योतिषी तक जाने वाले मे 1मिथ्यादृष्टि। पहले देवलोक से 8वे देवलोक मे जाने वाले मे दृष्टि 2 - सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि।

4 ज्ञान-अज्ञान-नारकी से ज्योतिषी तक 2 अज्ञान, पहले देवलोक से 8वे देवलोक तक जाने वाले मे दो ज्ञान, दो अज्ञान।

5 समुद्घात-3।

6 आयुष्य-अन्तर्मुहूर्त का।

7 अध्यवसाय-नारकी मे जाने वाले मे अप्रशस्त, देवता मे जाने वाले मे प्रशस्त।

8 अनुवन्ध-आयुष्यवत्। उत्कृष्ट गम्मा मे नाणत्ता पडे 2।

1 आयुष्य करोड पूर्व का 2 अनुबध⊙

120 सन्नी मनुष्य मरकर वैक्रिय के 15 घरो मे जावे। नाणत्ता पडे 8।15 × 8 = 120। जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 5।

⊙ विवक्षित पर्याय (गति, जाति, स्थिति, अवगाहना, अनुभाग प्रदेश) से अविच्छिन्न रहना (निरतर वने रहना) अनुवन्ध कहलाता हे।

वैक्रिय से औदारिक में जाने का नाणत्ता 404 निम्न प्रकार

14 प्रकार के देवता मरकर पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे जावे।

14 × 3 = 42

27 प्रकार के वैक्रिय के जीव मरकर तिर्यच के घर मे जावे।

32 प्रकार के वैक्रिय के जीव मरकर मनुष्य के घर मे जावे।

अर्थात् (वैक्रिय के कुल 34 जीवो मे से 7वीं नरक और सर्वार्थसिद्ध को छोडकर)

जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2- आयुष्य और अनुबंध।

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2- आयुष्य और अनुबध।

101 × 4 = 404

औदारिक से औदारिक में जाने का नाणत्ता 879।

6. पृथ्वीकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे - नाणत्ता पडे 6। जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 4।

1. लेश्या-तीन 2 आयुष्य-अन्तर्मुहूर्त का 3. अध्यवसाय-अप्रशस्त 4. अनुबध-आयुष्यवत्।

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य-22 हजार वर्ष का 2 अनुबंध-आयुष्यवत्

6 अप्काय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे-नाणत्ता पडे 6। जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 4 - पृथ्वीकाय के समान। उत्कृष्ट के गम्मा में नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य-7 हजार वर्ष 2 अनुबध - आयुष्यवत्

5. तेऊकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे-नाणत्ता पडे 5। जघन्य के गम्मा में नाणत्ता पडे 3 (उपरोक्त 4 मे लेश्या को छोडकर) उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2।

1. आयुष्य - 3 अहोरात्रि 2 अनुवध- आयुष्यवत्

6. वायुकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 6 जघन्य के गम्मा

धनुष्य उ 2 गाउ। दूसरे देवलोक मे जाने वाले की अवगाहना ज प्रत्येक धनुष उ 2 गाऊ झाझेरी।

2 आयुष्य-भवनपति वाणव्यंतर में जाने वाले का आयुष्य करोड पूर्व झाझेरी। ज्योतिषी मे जाने वाले का पल्य का आठवां भाग, 1 ले देवलोक मे जाने वाले की 1 पल्योपम, 2रे देवलोक में जाने वाले की 1 पल्योपम झाझेरी।

3 अनुबन्ध-आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य-3 पल्योपम का।

2 अनुबन्ध-आयुष्यवत्।

84 मनुष्य के युगलिया मरकर वैक्रिय के 14 घरो मे जावे। नाणत्ता पड़े 6-6।14 × 6 = 84 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 3।

1 अवगाहना - भवनपति वाणव्यतरो मे जाने वालो की अवगाहना 500 धनुष झाझेरी ज्योतिषी मे जाने वालो की अवगाहना 900 धनुष झाझेरी। देवलोक मे जाने वालो की अवगाहना 1 गाऊ की 2रे देवलोक मे जाने वालो की 1 गाऊ झाझेरी।

2 आयुष्य-भवनपति वाणव्यतर मे जाने वालो की आयुष्य करोड पूर्व झाझेरी, ज्योतिषी मे जाने वालो का आयुष्य पल्य का आठवा भाग, 1ले देवलोक मे जाने वाले का आयुष्य 1 पल्योपम, दूसरे देवलोक मे जाने वाले का 1 पल्योपम झाझेरी।

3 अनुबन्ध-आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 3

1 अवगाहना - 3 गाऊ की

2 आयुष्य - 3 पल्योपम का

3 अनुबन्ध - आयुष्यवत्

60 + 267 + 120 + 114 + 70 + 84 = 715

3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त बेइन्द्रिय के समान) उत्कृष्ट के गम्मा मे 3 मे नाणत्ता पडे 2 1. आयुष्य -6 महीने का 2. अनुबध- आयुष्यवत्।

9 असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 9 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त बेइन्द्रिय के समान) उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2, 1 आयुष्य - करोड पूर्व का 2 अनुबंध- आयुष्यवत् ।

11 सन्नी ति प मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 11 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 9

1 अवगाहना- अंगुल के असंख्यातवे भाग 2 लेश्या- तीन 3 दृष्टि- 1 मिथ्यादृष्टि 4. ज्ञान-अज्ञान 2 ज्ञान- 5 योग- 1काया का 6 समुद्घात का- तीन 7. आयुष्य- अन्तमुहूर्त का 8 अध्यवसाय- अप्रशस्त 9 अनुबंध- आयुष्यवत्।

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

1. आयुष्य - करोड पूर्व का 2 अनुबध- आयुष्यवत्।

12 सन्नी मनुष्य मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 12 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 9 (अ ति. के समान समझना) उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 3।

1. अवगाहना - 500 धनुष्य की 2. आयुष्य - करोड पूर्व का 3 अनुबंध - आयुष्यवत्। इस प्रकार -

पृथ्वीकाय मे	अप्काय मे	तेऊकाय में	वायुकाय मे
89	89	89	89

असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय मे	मनुष्य में = 879
89	78

715 औदारिक से वैक्रिय मे जाने का नाणत्ता।

3 मे नाणत्ता पडे 4

1. समुद्घात- तीन 2 आयुष्य- अतर्मुहूर्त का

3 अध्यवसाय - अप्रशस्त 4 अनुबंध- आयुष्यवत्

उत्कृष्ट के गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य - 3000 वर्ष का 2 अनुबध- आयुष्यवत्

7 वनस्पतिकाय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 7 जघन्य के गम्मा मे नाणत्ता पडे 5

1 अवगाहना - अगुल के असंख्यातवे भाग

2 लेश्या -3 3 आयुष्य- अन्तर्मुहूर्त

4 अध्यवसाय - अप्रशस्त 5 अनुबध- आयुष्यवत्

उत्कृष्ट गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य -10,000 वर्ष का 2 अनुबंध- आयुष्यवत्

9 बेइन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पडे 9। जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7

1 अवगाहना- अगुल का असख्यातवा भाग, 2 दृष्टि-1, मिथ्यादृष्टि 3 ज्ञान-अज्ञान-2, अज्ञान। 4 योग-1, काया का। 5 आयुष्य अन्तर्मुहूर्त का। 6 अध्यवसाय- अप्रशस्त। 7 अनुबध-आयुष्यवत्।

उत्कृष्ट गम्मा मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य- 12 वर्ष का 2 अनुबंध- आयुष्यवत्

9 तेइन्द्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे-नाणत्ता पडे 9 जघन्य के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 7 (उपरोक्त अनुसार)

उत्कृष्ट के गम्मा 3 मे नाणत्ता पडे 2

1 आयुष्य - 49 अहोरात्रि 2 अनुबध- आयुष्यवत्

9 चउरिंद्रिय मरकर पृथ्वीकाय मे जावे- नाणत्ता पड़े 9 जघन्य के गम्मा

13	39	351	-	306	2/संख्यात, 2/8
14	28	246	6	249	2/8, 2/2
15	22	156	42	150	2/8, 2/2
16	4	24	12	24	2/2
कुल –	321	2805	84	1998	

102 बोल का बासठिया

श्री पन्नवणा सूत्र के तीसरे पद मे 22 द्वारो के 102 बोलो में 62 बोल (14 +14+15+12+6+अल्पबहुत्व) इस प्रकार है :-

द्वार- 1. जीव, 2. गति, 3 इन्द्रिय 4. काय 5 योग, 6 वेद, 7 कषाय 8. लेश्या 9. दृष्टि 10. सम्यक्त्व 11 ज्ञान, 12 दर्शन, 13. संयम 14. उपयोग 15 आहार 16 भाषक 17 परित्त 18 पर्याप्त, 19. सूक्ष्म 20 संज्ञी 21 भव्य 22. चरम।

1. जीव द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 समुच्चय जीव मे	14	14	15	12	6
2 नरक मे	3	4	11	9	3
3. तिर्यच मे	14	5	13	9	6
4. मनुष्य मे	3	14	15	12	6
5 देव मे	3	4	11	9	6
6. सिद्ध मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे मनुष्य, उनसे नारकी असंख्यात गुण, उनसे देव असख्यात गुण, उनसे सिद्ध अनत गुण, उनसे तिर्यच अनन्त गुण, और उनसे समुचय जीव विशेषाधिक।

404 वैक्रिय से औदारिक मे जाने का नाणत्ता।

879 औदारिक से औदारिक मे जाने का नाणत्ता

1998 = कुल मिलाकर हुए।

8. आठवां बोले रिद्धि के द्वार 20

1 उपपात 2 परिणाम 3 सहनन 4 अवगाहना 5 सठाण 6 लेश्या 7 दृष्टि 8 ज्ञान-अज्ञान 9 योग 10 उपयोग, 11 सज्ञा, 12 कषाय, 13 इद्रिय 14 समुद्घात 15 वेदना 16 वेद 17 आयुष्य 18 अध्यवसाय 19 अनुबन्ध 20 कायसवेद।

आगति स्थान के गमे, नाणत्ते की जोड़

भव स्थान	आगत स्थान	गम्मा	टूटे गम्मा	नाणत्ता	भव
1	12	108	-	60	2/2
2	52	468	-	361	2/8
3	2	18	-	14	3/7, 3/5
4	30	270	-	180	2/8
5	22	198	-	110	2/8
6	10	90	-	50	3/7, 2/6
7	2	18	-	10	3/5, 2/4
8	2	6	12	6	3, 2
9	1	9	-	6	2/2
10	28	240	12	154	2/2
11	42	378	-	168	2/2
12	25	225	-	150	2/अस, 2/अनंत, 2/8

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे पचेन्द्रिय, उनसे चौरिन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे तेइन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे बेइन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे अनिन्द्रिय अनन्त गुण, उनसे एकेन्द्रिय अनन्त गुण और उनसे सइन्द्रिय विशेषाधिक।

4. काय द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सकाय मे	14	14	15	12	6
2. पृथ्वीकाय मे	4	1	3	3	4
3. अप्काय मे	4	1	3	3	4
4 तेऊकाय मे	4	1	3	3	3
5 वायुकाय मे	4	1	5	3	3
6. वनस्पति काय मे	4	1	3	3	4
7. त्रसकाय मे	10	14	15	12	6
8 अकाय मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे त्रसकाय, उनसे तेउकाय असख्यात गुण उनसे पृथ्वीकाय विशेषाधिक उनसे अप्काय विशेपाधिक, वायुकाय विशेषाधिक, उनसे अकाय अनन्त गुण, उनसे वनस्पतिकाय अनन्त गुण, उनसे सकाय विशेषाधिक है।

5. योग द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सयोगी मे	14	13	15	12	6
2 मनयोगी मे	1	13	14	12	6
3 वचनयोगी मे	5	13	14	12	6
4. काययोगी में	14	13	15	12	6

2. गति द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 नरक गति मे	3	4	11	9	3
2 तिर्यच गति मे	14	5	13	9	6
3 तिर्यचिनी मे	2	5	13	9	6
4 मनुष्य गति मे	3	14	15	12	6
5 मनुष्यिनी मे	2	14	13	12	6
6 देव गति मे	3	4	11	9	6
7 देवी मे	2	4	11	9	4
8 सिद्ध गति मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे मनुष्यिनी, उनसे मनुष्य असंख्यात गुण, उनसे नारकी असख्यात गुण, उनसे तिर्यचिनी असख्यातगुण, उनसे देव असख्यात गुण, उनसे देवी संख्यात गुण उनसे सिद्ध अनन्त गुण और इनसे तिर्यच अनन्त गुण है।

3. इन्द्रिय द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सइन्द्रिय मे	14	12	15	10	6
2 एकेन्द्रिय मे	4	1	5	3	4
3 बेइन्द्रिय मे	2	2	4	5	3
4 तेइन्द्रिय मे	2	2	4	5	3
5 चौरिन्द्रिय मे	2	2	4	6	3
6 पचेन्द्रिय मे	4	12	15	10	6
7 अनिन्द्रिय मे	1	2	7	2	1/0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे पंचेन्द्रिय, उनसे चौरिन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे तेइन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे बेइन्द्रिय विशेषाधिक, उनसे अनिन्द्रिय अनन्त गुण, उनसे एकेन्द्रिय अनन्त गुण और उनसे सइन्द्रिय विशेषाधिक।

4. काय द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सकाय मे	14	14	15	12	6
2 पृथ्वीकाय मे	4	1	3	3	4
3 अप्काय मे	4	1	3	3	4
4 तेऊकाय मे	4	1	3	3	3
5 वायुकाय मे	4	1	5	3	3
6 वनस्पति काय मे	4	1	3	3	4
7. त्रसकाय मे	10	14	15	12	6
8 अकाय मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे त्रसकाय, उनसे तेउकाय असख्यात गुण उनसे पृथ्वीकाय विशेषाधिक उनसे अप्काय विशेषाधिक, वायुकाय विशेषाधिक, उनसे अकाय अनन्त गुण, उनसे वनस्पतिकाय अनन्त गुण, उनसे सकाय विशेषाधिक है।

5. योग द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. सयोगी मे	14	13	15	12	6
2 मनयोगी मे	1	13	14	12	6
3 वचनयोगी मे	5	13	14	12	6
4 काययोगी मे	14	13	15	12	6

5 अयोगी मे	1	1	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे मनयोगी, उनसे वचनयोगी असख्यात गुण, उनसे अयोगी अनन्त गुण,उनसे काययोगी अनन्त गुण और उनसे सयोगी विशेषाधिक हैं।

6. वेद द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सवेदी मे	14	9	15	10	6
2 पुरुष वेद मे	2	9	15	10	6
3 स्त्री वेद मे	2	9	13	10	6
4 नपुसक वेद मे	14	9	15	10	6
5 अवेदी मे	1	6	11	9	1/0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे पुरुष वेदी, उनसे स्त्री वेदी सख्यात गुण, उनसे अवेदी अनन्त गुण, उनसे नपुसक वेदी अनन्त गुण, उनसे सवेदी विशेषाधिक हैं। (नवमे गुणस्थान सवेदी-अवेदी दोनो होते है)

7. कषाय द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सकषायी मे	14	10	15	10	6
2 क्रोधकषाय मे	14	9	15	10	6
3 मानकषाय मे	14	9	15	10	6
4 मायाकषाय मे	14	9	15	10	6
5 लोभकषाय मे	14	10	15	10	6
6 अकषायी मे	1	4	11	9	1/0

अल्प वहुत्व–सबसे थोडे अकषायी, उनसे मानी अनन्त गुण, उनसे क्रोधी विशेषाधिक, उनसे मायी विशेपाधिक, उनसे लोभी विशेषाधिक और उनसे सकषायी विशेषाधिक है।

8 लेश्या द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1.सलेशी मे	14	13	15	12	6
2 कृष्ण लेशी मे	14	6	15	10	1
3 नील लेशी मे	14	6	15	10	1
4 कापोत लेशी मे	14	6	15	10	1
5 तेजो लेशी मे	3	7	15	10	1
6 पद्म लेशी मे	2	7	15	10	1
7. शुक्ल लेशी मे	2	13	15	12	1
8. अलेशी मे	1	1	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे शुक्ल लेशी, उनसे पद्म लेशी सख्यात गुण, उनसे तेजो लेशी संख्यात गुण, उनसे अलेशी अनन्त गुण, उनसे कापोत लेशी अनन्त गुण, उनसे नील लेशी विशेषाधिक, उनसे कृष्ण लेशी विशेषाधिक और उनसे सलेशी विशेषाधिक है।

9 दृष्टि द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सम्यग्दृष्टि मे	6	12	15	9	6
2 मिथ्यादृष्टि मे	14	1	13	6	6
3 मिश्रदृष्टि मे	1	1	10	6	6

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे मिश्रदृष्टि, उनसे सम्यग्दृष्टि अनन्त गुण और उनसे मिथ्यादृष्टि अनन्त गुण।

10. सम्यक्त्व द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. सास्वादन सम्यक्त्व मे	6	1	13	6	6
2 क्षयोपशम सम्यक्त्व मे	2	4	15	7	6

5 अयोगी मे	1	1	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे मनयोगी, उनसे वचनयोगी असख्यात गुण, उनसे अयोगी अनन्त गुण,उनसे काययोगी अनन्त गुण और उनसे सयोगी विशेषाधिक हैं।

6. वेद द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सवेदी मे	14	9	15	10	6
2 पुरुष वेद मे	2	9	15	10	6
3 स्त्री वेद मे	2	9	13	10	6
4 नपुसक वेद मे	14	9	15	10	6
5 अवेदी मे	1	6	11	9	1/0

अल्प बहुत्व– सबसे थोडे पुरुष वेदी, उनसे स्त्री वेदी सख्यात गुण, उनसे अवेदी अनन्त गुण, उनसे नपुंसक वेदी अनन्त गुण, उनसे सवेदी विशेषाधिक हैं। (नवमे गुणस्थान सवेदी–अवेदी दोनो होते है)

7. कषाय द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सकषायी मे	14	10	15	10	6
2 क्रोधकषाय मे	14	9	15	10	6
3 मानकषाय मे	14	9	15	10	6
4 मायाकषाय मे	14	9	15	10	6
5 लोभकषाय मे	14	10	15	10	6
6 अकषायी मे	1	4	11	9	1/0

अल्प वहुत्व–सबसे थोडे अकषायी, उनसे मानी अनन्त गुण, उनसे क्रोधी विशेषाधिक, उनसे मायी विशेषाधिक, उनसे लोभी विशेषाधिक और उनसे सकषायी विशेषाधिक है।

3 अवधिदर्शन मे	2	12	15	10	6
4. केवलदर्शन मे	1	2	7	2	1/0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अवधिदर्शनी, उनसे चक्षुदर्शनी असंख्यात गुण, उनसे केवलदर्शनी अनन्त गुण और उनसे अचक्षुदर्शनी अनन्त गुण है।

13. संयम द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 समुच्चय संयती मे	1	9	15	9	6
2. सामायिक संयती में	1	4	14	7	6
3. छेदोपस्थापनीय सयत मे	1	4	14	7	6
4. परिहार विशुद्ध सयत मे	1	2	9	7	3
5. सूक्ष्म संपराय संयत मे	1	1	9	4✪	1
6. यथाख्यात सयत मे	1	4	11	9	1
7 संयतासयत मे	1	1	12	6	6
8 असयत मे	14	4	13	9	6
9 नो-संयत नो- असंयत नो संयतासयत मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे सूक्ष्म संपराय संयत, उनसे परिहार विशुद्ध सयत सख्यात गुण, उनसे यथाख्यात सयत सख्यात गुण, उनसे छेदोपस्थानीय सख्यात गुण, उनसे सामायिक संयत सख्यात गुण, उनसे समुच्चय संयत विशेषाधिक, उनसे सयतासंयत असंख्य गुण, उनसे नो-सयत नो- असंयत नो सयतासयत अनन्त गुण और उनसे असयत अनन्त गुण है।

✪ 10 वे गुणस्थान मे दर्शन तो 3 हो सकते है क्योकि दर्शन आत्मा का निज गुण है। किन्तु दर्शनोपयोग नहीं होता इसलिए सूक्ष्म सम्पराय सयत मे ज्ञानोपयोग के 4 भेद ही लिए गए है।

3 वेदक सम्यक्त्व मे	2	4	15	7	6
4 उपशम सम्यक्त्व मे	2	8	15	7	6
5 क्षायिक सम्यक्त्व मे	2	11	15	9	6

अल्प बहुत्व- सबसे थोडे सास्वादन समकिती, उनसे उपशम समकिती सख्यात गुण, उनसे क्षयोपशम समकिती असख्य गुण, उनसे वेदक समकिती विशेषाधिक, उनसे क्षायिक समकिती अनन्त गुण और उनसे समुच्चय समकिती विशेषाधिक।

11. ज्ञान द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 सज्ञानी मे	6	12	15	9	6
2 मति-श्रुतज्ञानी मे	6	10	15	7	6
3 अवधिज्ञानी	2	10	15	7	6
4 मनःपर्यायज्ञानी मे	1	7	14	7	6
5 केवलज्ञानी मे	1	2	7	2	1/0
6 मतिश्रुतअज्ञानी मे	14	2	13	6	6
7 विभगज्ञानी मे	2	2	13	6	6

अल्प बहुत्व-सबसे थोडे मनःपर्यायज्ञानी, उनसे अवधिज्ञानी असख्यात गुण, उनसे मतिश्रुत ज्ञानी परस्पर तुल्य विशेषाधिक, उनसे विभगज्ञानी असख्यात गुण, उनसे केवलज्ञानी अनन्त गुण, उनसे सज्ञानी विशेषाधिक, उनसे मतिश्रुतअज्ञानी अनन्त गुण परस्पर तुल्य ।

12. दर्शन द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 चक्षुदर्शन मे	6	12	14	10	6
2 अचक्षुदर्शन मे	14	12	15	10	6

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे परित्त, उनसे नो परित्त नो अपरित्त अनन्त गुण और उनसे अपरित्त अनन्त गुण हैं।

18. पर्याप्त द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. पर्याप्त मे	7	14	15	12	6
2 अपर्याप्त मे	7	3	5	9	6
3 नो- पर्याप्त नो अपर्याप्त मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व- सबसे थोडे नो पर्याप्त नो अपर्याप्त, उनसे अपर्याप्त अनन्त गुण और उनसे पर्याप्त सख्यात गुण हैं।

19. सूक्ष्म द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. सूक्ष्म मे	2	1	3	3	3
2 बादर मे	12	14	15	12	6
3. नो सूक्ष्म नो बादर मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व- सबसे थोडे नो सूक्ष्म नो बादर, उनसे बादर अनन्त गुण और उनसे सूक्ष्म असख्यात गुण है।

20. संज्ञी द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1. संज्ञी मे	2	12	15	10	6
2. असज्ञी मे	12	2	6	6	4
3 नो सज्ञी नो असज्ञी मे	1	2	7	2	1/0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे सज्ञी, उनसे नो सज्ञी नोअसज्ञी अनन्त गुण और उनसे असंज्ञी अनन्त गुण हैं।

14. उपयोग द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 साकार उपयोग मे	14	14	15	12	6
2 अनाकार उपयोग मे	14	13	15	12	6

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अनाकार उपयोगी और उनसे साकार उपयोगी सख्यात गुण।

15. आहारक द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 आहारक मे	14	13	14	12	6
2 अनाहारक मे	8	5	1	10⊛	6

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अनाहारक, उनसे आहारक असख्यात गुण है।

16. भाषक द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 भाषक मे	5	13	14	12	6
2 अभाषक मे	10	5	5	11✪	6

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे भाषक, उनसे अभाषक अनन्त गुण है।

17. परित्त द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 परित्त मे	14	14	15	12	6
2 अपरित्त मे	14	1	13	6	6
3 नो परित्त नो अपरित्त मे	0	0	0	2	0

⊛ मन पर्यय ज्ञान एव चक्षु दर्शन के सिवाय

✪ मन पर्यय ज्ञान नहीं होता।

6 बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरेन्द्रिय। इन तीन विकलेन्द्रिय के अपर्याप्त और पर्याप्त ऐसे 6 भेद हुए।

20 पचेन्द्रिय तिर्यच पांच प्रकार के- 1 जलचर 2 स्थलचर 3 खेचर 4. उरपरिसर्प और 5. भुजपरिसर्प। ये पाचो ही असंज्ञी और पाचो ही सज्ञी। ये 10 भेद हुए और इनके अपर्याप्त, और पर्याप्त ऐसे 20 भेद हुए। कुल 22 + 6 +20 =48 भेद तिर्यच के हुए।

मनुष्य के 303 भेद

कर्मभूमिज मनुष्य के 15 भेद है- यथा- 5 भरत, 5 ऐरावत और 5 महाविदेह मे उत्पन्न मनुष्यो के 15 भेद। अकर्मभूमिज (भोगभूमिज) मनुष्य के 30 भेद है। यथा- 5 देवकुरु, 5 उत्तरकुरु, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 हेमवत और 5 हेरण्यवत क्षेत्रो मे उत्पन्न मनुष्यो के 30 भेद है। 56 अन्तरद्वीपो मे उत्पन्न होने वाले मनुष्यो के 56 भेद। ये सभी मिलाकर गर्भज मनुष्य के 101 भेद होते है। इनके अपर्याप्त और पर्याप्त के भेद से 202 भेद होते है। और इन 101 गर्भज मनुष्यो के 14 प्रकार की अशुचि मे उत्पन्न सम्मूर्च्छिम मनुष्य के 101 भेद अपर्याप्त के (ये नियमा अपर्याप्त ही काल करते है इसलिए इनके पर्याप्त के भेद नहीं होते)। 14 उत्पत्ति के स्थान- 1 उच्चारेसु वा (मल) 2 पासवणेसु वा (मूत्र), 3 खेलेसु वा (कफ), 4 सिघाणेसु वा (श्लेष्म), 5 वतेसु वा (वमन), 5 पित्तेसु वा (पित्त), 7. पुइएसु वा (पीप), 8 सोणिएसु वा (रक्त), 9 सुक्केसु वा (वीर्य से), 10 सुक्कपुग्गल परिसाडिएसु वा (सूखे हुए वीर्य आदि के पुद्गलो के पुनः गीले होने पर), 11 विगय जीव कलेवरेसु वा (मृत कलेवरो मे) 12 थी-पुरिस सजोएसु वा (स्त्री-पुरुष के सयोग मे), 13. नगर निधम- मणेसु वा (नगर की नालियो मे), 14 सव्वेसु चेव असुइठाणेसु वा (मनुष्य के सभी अशुचि स्थान मे)) [प्रथम प्रज्ञापनापद] कुल 101+101+101=303 भेद मनुष्य के हुए।

21. भव्य द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 भव्य मे	14	14	15	12	6
2 अभव्य मे	14	1	13	6	6
3 नो भव्य नोअभव्य मे	0	0	0	2	0

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अभव्य, उनसे नोभव्य नोअभव्य अनन्त गुण और उनसे भव्य अनन्त गुण है।

22. चरम द्वार

मार्गणा	जीव	गुणस्थान	योग	उपयोग	लेश्या
1 चरम मे	14	14	15	12	6
2 अचरम मे	14	1	13	8•	6

अल्प बहुत्व–सबसे थोडे अचरम, उनसे चरम अनन्त गुण है।

जीव धड़ा

जीव के 563 भेद है- यथा

नारकी के 14 भेद- सात नारकी के अपर्याप्त और पर्याप्त।

तिर्यच के 48 भेद

22 पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय और वायुकाय- इन चार प्रकार के स्थावर जीवो के प्रत्येक के सूक्ष्म और बादर तथा दोनो के अपर्याप्त और पर्याप्त- ऐसे चार भेदो से कुल 16 भेद हुए। वनस्पतिकाय के सूक्ष्म, साधारण और प्रत्येक- इन तीन के अपर्याप्त और पर्याप्त, ये 6 भेद हुए। इस प्रकार पाच स्थावर के कुल 22 भेद हुए।

• नोट- 1 3 अज्ञान 3 दर्शन अभवी की अपेक्षा, केवल ज्ञान, केवल दर्शन सिद्ध भ की अपेक्षा।

5 अनुत्तर वैमानिक के पाच भेद है। जैसे- 1 विजय 2 वैजयन्त 3 जयन्त 4 अपराजित और 5 सर्वार्थसिद्ध।

3 किल्विषिक देव- 1 त्रैपल्योपमिक 2. त्रैसागरिक और 3 त्रयोदश सागरिक।

9 लोकान्तिक देवो के नौ भेद- 1 सारस्वत 2 आदित्य 3 वन्हि 4 वरुण 5 गर्ततोय 6 तुषित 7 अव्याबाध 8 आग्नेय और 9 अरिष्ट।

इस प्रकार - 10+15+16+10+10+12+3+9+9+5

कुल 99 अप + 99 प = 198 देव के भेद हुए।

उपरोक्त 563 भेदो का सत्ताईस द्वारो से निरूपण किया जाता है-

द्वार-1 जीव, 2 गति, 3 इन्द्रिय, 4 काय, 5 योग, 6 वेद, 7 कषाय, 8 लेश्या, 9 सम्यक्त्व, 10 ज्ञान, 11. दर्शन, 12 सयम, 13 उपयोग 14 आहारक, 15 भाषक, 16 परित्त, 17 पर्याप्त, 18 सूक्ष्म 19 सन्नी, 20 भव्य, 21 चरम, 22 सहनन, 23. सठाण, 24 क्षेत्र, 25 शाश्वत, 26 अमर और 27 गर्भज।

1. जीव द्वार

समुच्चय जीव के भेद 563- नारकी के 14, तिर्यंच के 48, मनुष्य के 303 और देव के 198।

2. गति द्वार

1. नरक गति में 14। तिर्यंच में 48। तिर्यंचिनी में 10 (पाच सन्नी तिर्यंच के पर्याप्त व अपर्याप्त) **मनुष्य गति में 303 मनुष्यिनी में 202** (101 सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त व पर्याप्त 202) **देव में 198 देवी में 128** (10 भवनपति, 15 परमाधामी, 16 वाणव्यन्तर, 10 जृम्भक, 10 ज्योतिषी 1 पहला 1 दूसरा देवलोक के और 1 पहली किल्विषी- कुल 64 के अपर्याप्त और पर्याप्त)। **सिद्ध भगवान में कोई भेद नहीं।**

देव के 198 भेद

10 भवनपति के 10 भेद-1 असुरकुमार 2 नागकुमार 3 सुवर्णकुमार 4 विद्युतकुमार 5 अग्निकुमार, 6 उदधिकुमार, 7 द्वीपकुमार, 8 दिशाकुमार 9 पवनकुमार और 10 स्तनितकुमार।

15 परमाधार्मिक देवो के 15 भेद है। यथा- 1 अम्ब 2 अम्बरीष 3 श्याम, 4 शबल 5 रौद्र 6 महारौद्र, 7 काल 8 महाकाल, 9 असिपत्र, 10 धनुष, 11 कुम्भ 12 बालुका 13 वैतरणी 14 खरस्वर और15 महाघोष ।

26 वाणव्यन्तर के 26 भेद है। जैसे- पिशाचादि 8 (1 पिशाच 2 भूत 3 यक्ष 4 राक्षस 5 किन्नर, 6 किम्पुरुष 7 महोरग और 8 गन्धर्व), आणपण्णे आदि 8 (1 आणपन्ने 2 पाणपण्णे 3 इसिवाई 4 भूयवाई 5 कन्दे 6 महाकन्दे 7 कूह्मण्डे 8 पयगदेवे) जृम्भक 10 (1 अन्न जृम्भक 2 पान जृम्भक 3 लयन जृम्भक 4 शयन जृम्भक 5 वस्त्र जृम्भक 6 फल जृम्भक 7 पुष्प जृम्भक 8 फलपुष्प जृम्भक 9 विद्या जृम्भक 10 अव्यक्त (अधिपति) जृम्भक।

10 ज्योतिषी देवो के 5 भेद - 1 चन्द्र 2 सूर्य, 3 ग्रह 4 नक्षत्र और 5 तारा। इनके चर (भ्रमणशील) और अचर (स्थिर) के भेद से दस भेद हो जाते है।

12 वैमानिक देवो के कल्पोपपन्न और कल्पातीत दो भेद है। इनमे कल्पोपपन्न के 12 भेद है। जैसे- 1 सौधर्म 2 ईशान, 3 सनत्कुमार 4 माहेन्द्र 5 ब्रह्म लोक 6 लांतक 7 महाशुक्र 8 सहस्रार 9 आणत 10 प्राणत 11. आरण और 12 अच्युत।

कल्पातीत के दो भेद- ग्रैवेयक और अनुत्तर वैमानिक। ग्रैवेयक के 9 भेद- 1 भद्र 2 सुभद्र 3 सुजात 4 सुमनस 5 सुदर्शन 6 प्रियदर्शन 7 आमोह 8 सुप्रतिबद्ध और 9 यशोधर।

5 योग द्वार

सयोगी में 563- सभी।

मनयोगी में 212- नारकी के 7, तिर्यच पचेन्द्रिय के 5, सन्नी मनुष्य के 101 और देव के 99। ये सभी पर्याप्त।

वचनयोगी में 220- मनयोगी के 212 एवं 5 असन्नी तिर्यच और तीन विकलेन्द्रिय के पर्याप्त।

काययोगी में 563-सभी।

4 मन, 3 वचन योग में 212- मनयोगी के समान।

व्यवहार भाषा में 220- वचन योगी के अनुसार।

औदारिक योग में 351- तिर्यच के 48 और मनुष्य के 303।

औदारिक मिश्र काय योग में 247- तिर्यच के 30-24 अपर्याप्त, और 5 पर्याप्त सन्नी तिर्यच तथा एक बादर पर्याप्त वायुकाय। मनुष्य के 217- असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101, सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101 और कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त 15।

वैक्रिय काय योग में 233-14 नारकी के सभी, 5 सन्नी तिर्यच के पर्याप्त, 1 बादर वायुकाय के पर्याप्त, 15 कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त और 198 देव के सभी।

वैक्रिय मिश्र काय योग में 219- वैक्रिय योग के 233 मे से 9 ग्रैवेयक और 5 अनुत्तर विमान के पर्याप्त के 14 भेद कम।

आहारक और आहारक मिश्र काय योग में 15- कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त (विशिष्ट संयमी संत की अपेक्षा)।

कार्मण काययोग में 347- नारकी के 7, तिर्यच के 24, देव के 99, असन्नी मनुष्य के 101, सन्नी मनुष्य के 101 ये सभी अपर्याप्त और15 कर्मभूमिज के पर्याप्त (13वे गु की अपेक्षा)।

अयोगी में 15- कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त (14वे गुणस्थानी)।

3. इन्द्रिय द्वार

सइन्द्रिय मे 563- सभी भेद। **एकेन्द्रिय मे 22, बेइन्द्रिय में 2, तेइन्द्रिय में 2, चौरिन्द्रिय में 2** और **पंचेन्द्रिय** मे 535 (563 मे से एकेन्द्रिय के 22 और विकलेन्द्रिय के 6 छोडकर) **अनिन्द्रिय में 15** (15 कर्मभूमि के मनुष्य के पर्याप्त- 13,14 गुणस्थान वाले) **श्रोत्रेन्द्रिय** मे 535 (पचेन्द्रिय के) **चक्षुरिन्द्रिय में 537** (चौरिन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त बढे) **घ्राणेन्द्रिय मे 539** (तेइन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त बढे) **रसनेन्द्रिय के 541** (बेइन्द्रिय के पर्याप्त व अपर्याप्त बढे) **स्पर्शनेन्द्रिय के 563।**

इन्द्रिय अलद्धिया मे [अलद्धिया- अनुपलब्ध- अप्राप्त होना तथा प्राप्त हुई इन्द्रियो का उपयोग नहीं करना (13,14वे गुणस्थान की अपेक्षा)]

श्रोत्रेन्द्रिय के अलद्धिये में 43- एकेन्द्रिय के 22, बेइन्द्रिय के 2 तेइन्द्रिय के 2, चौरिन्द्रय के 2 और 15 कर्मभूमि के पर्याप्त मनुष्य (13, 14 गुणस्थानी)।

चक्षुरिन्द्रिय के अलद्धिये मे 41-(43 मे से चौरिन्द्रिय के 2 कम।)

घ्राणेन्द्रिय के अलद्धिये मे 39-(41 मे से तेइन्द्रिय के 2 कम।)

रसनेन्द्रिय के अलद्धिये में 37-(39 मे से बेइन्द्रिय के 2 कम।)

स्पर्शनेन्द्रिय के अलद्धिये में 15-(15 कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त। 13 वे, 14 वे गुणस्थानी)।

4 काय द्वार

सकाया में 563सभी। **पृथ्वीकाय के 4, अप्काय के 4, तेउकाय के 4, वायुकाय के 4, वनस्पतिकाय के 6** और **त्रसकाय के 541** (एकेन्द्रिय के 22 कम)। **अकाया** (सिद्ध) मे कोई भेद नहीं।

7. कषाय द्वार

सकषायी क्रोध, मान,माया, लोभकषायी में 563 भेद- सभी।

अकषायी में 15- कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त (गुणस्थान 11 से 14 तक)

8. लेश्या द्वार

सलेशी में- 563।

कृष्ण, नील और कापोत, इन तीन लेश्या में, प्रत्येक मे 459।

नारकी के 6- पहली, दूसरी और तीसरी नरक के पर्याप्त-अपर्याप्त मे कापोत लेश्या 6। तीसरी, चौथी और पांचवीं नरक के पर्याप्त-अपर्याप्त मे नील लेश्या 6। पाचवीं, छठी और सातवीं नरक के पर्याप्त-अपर्याप्त मे कृष्ण लेश्या 6।

48 तिर्यच के। 303 मनुष्य के।

102 देव के- भवनपति के 10, परमाधामी के 15, व्यन्तर के 16, जृम्भक के 10। इन 51 के पर्याप्त, अपर्याप्त।

तेजोलेश्या में 343-

13 तिर्यच के- बादर- पृथ्वीकाय, अप्काय और प्रत्येक वनस्पतिकाय के अपर्याप्त 3। सन्नी-तिर्यच पचेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त के 10।

202 मनुष्य- सन्नी के पर्याप्त और अपर्याप्त।

128 देव के- भवनपति के 10, परमाधामी के 15, व्यन्तर के 16, जृम्भक के 10, ज्योतिषी के 10, वैमानिक के पहले देवलोक का 1, दूसरे देवलोक का 1 और प्रथम किल्विषी का 1। इन 64 के पर्याप्त-अपर्याप्त।

पद्म लेश्या में 66।

10 तिर्यच के- सन्नी पंचेन्द्रिय के पर्याप्त-अपर्याप्त।

6 वेद द्वार

सवेदी में 563- सभी।

पुरुष वेद मे 410- पाच सन्नी तिर्यच के पर्याप्त और अपर्याप्त 10, सन्नी मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त 202 और देव के 198।

स्त्रीवेद मे 340- तीसरे देवलोक से बारहवे देवलोक तक 10, दूसरे 1 व तीसरे 1 किल्विषी, नव लोकातिक 9, नव ग्रैवेयक 9 और पाच अणुत्तर विमान के 5। इन 35 के पर्याप्त और अपर्याप्त। ये 70 पुरुषवेदी को छोडकर शेष (10 तिर्यच के, 202 मनुष्य के 128 देवता के)।

नपुंसक वेद में 193- नारकी 14, तिर्यच 48, असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101, कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त 30।

एकवेद में 223- नारकी 14, तिर्यच 38 (48 मे से पाच सन्नी तिर्यच के पर्याप्त व अपर्याप्त 10 छोडकर) 101 असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त, ये सब नपुसक वेदी है। देव के 70 (तीसरे देवलोक से लगाकर सर्वार्थसिद्ध तक 35 के पर्याप्त व अपर्याप्त। ये सब पुरुषवेदी है)।

दो वेद मे 300- अकर्मभूमि के 30, अन्तरद्वीप के 56, इन 86 के पर्याप्त व अपर्याप्त 172 और देवलोक के 128 (198 मे से एकान्त पुरुषवेद के 70 कम)।

तीन वेद मे 40- 10 तिर्यच- पाच सन्नी तिर्यच के पर्याप्त और अपर्याप्त। 30 कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त।

अवेदी मे 15- कर्मभूमिज मनुष्य के पर्याप्त।

एकांत पुरुषवेद में 70- तीसरे देवलोक से आगे के देव।

एकांत नपुसकवेद मे 153- नारकी के 14, तिर्यच के 38 (48 मे से पाच सन्नी तिर्यच के पर्याप्त व अपर्याप्त 10 कम), असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त 101।

172 मनुष्य के- 86 युगलिक के प अ । 102 देवो के- भवनपति, परमाधर्मी, व्यन्तर और जृम्भक के इन 51 के प अप ।

5 लेश्या मे-0 शून्य, कोई नहीं।

छह लेश्या में 40- सन्नी तिर्यच के 10, कर्मभूमि मनुष्य के 30।

अलेशी में 15- कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त (14वे गु)

9. सम्यक्त्व द्वार

सम्यग्दृष्टि में 283 -13 नारकी के (सातवीं का अप छोडकर)।

18 तिर्यच के- 10 सन्नी तिर्यच के प अप । 5 असन्नी तिर्यच और 3 विकलेन्द्रिय के अप ।

90 मनुष्य के- 15 कर्मभूमि, 30 अकर्मभूमि के प अप ।

162 देव के-(15 परमाधर्मी, 3किल्विषी के प अप छोडकर)।

मिथ्यादृष्टि में 553- 563 मे से अनुत्तर विमान के प अ छोडके।

मिश्रदृष्टि में 103- नारकी के 7, तिर्यच के 5, कर्मभूमि मनुष्य के 15, देव के 76 (परमाधर्मी के 15, किल्विषी के 3 और अनुत्तर विमान के 5 ये 23 पर्याप्त कम करके)। सभी पर्याप्त ही है।

एकान्त सम्यग्दृष्टि में 10 -पांच अनुत्तर विमान के प और अप ।

एकान्त मिथ्यादृष्टि में 280- सातवीं नारकी के अप 1, तिर्यच के 30 (एकेन्द्रिय के 22, विकलेन्द्रिय के 3 और असन्नी पचेन्द्रिय के 5), मनुष्य के 213 (असन्नी मनुष्य के अप 101, अतरद्वीप प और अप 112) देव के 36 (परमाधर्मी 15 और किल्विषी 3 के प अप)।

एक दृष्टि में 290- एकान्त सम्यगृदृष्टि के 10 और एकान्त मिथ्यादृष्टि के 280। कुल290।

दो दृष्टि में 170- नारकी के 6 पहली से छठी तक के अप । तिर्यच के 13- पाच सन्नी तिर्यच, पाच असन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय और तीन

30 मनुष्य के- 15 कर्मभूमि के पर्याप्त-अपर्याप्त।

26 देव के- तीसरे, चौथे और पाचवॉ देवलोक, दूसरी किल्विषी, 9 लोकातिक देव इन 13 के पर्याप्त, अपर्याप्त।

शुक्ल लेश्या में-84 -

10 सन्नी तिर्यच के अप प । 30 कर्मभूमि मनुष्य के अप प ।

44 देव के-वैमानिक के छठे से 12 वे तक देवलोक 7, तीसरी किल्विषी, ग्रैवेयक 9 और अनुत्तर 5। इन 22 के प , अप ।

एकान्त कृष्णलेशी में 4 - छठी और सातवीं नरक के प अप ।

एकान्त नील लेश्या में 2- चौथी नरक के पर्याप्त-अपर्याप्त।

एकान्त कापोत लेश्या में 4- पहली दूसरी नरक के प अप.।

एकान्त तेजो लेश्या में 26- ज्योतिषी देव के 10, पहला, दूसरा देवलोक, प्रथम किल्विषी। इन 13 के पर्याप्त, अपर्याप्त।

एकान्त पद्म लेश्या में 26- वैमानिक के 3, 4, 5 देवलोक, दूसरी किल्विषी और लोकातिक 9। इन 13 के पर्याप्त-अपर्याप्त।

एकान्त शुक्ल लेश्या में 44- छठे देवलोक से 12वे तक 7, तीसरी किल्विषी, ग्रैवेयक 9 और अनुत्तर 5। इन 22 के पर्याप्त, अपर्याप्त।

एक लेश्या में 106 -10 नारक के, तीसरी और पांचवीं नारकी के प अप छोडकर। 96 देव के - ज्योतिषी के 10, वैमानिक के 38 इनके पर्याप्त-अपर्याप्त।

दो लेश्या में 4। तीसरी और पाचवीं नरक के पर्याप्त, अपर्याप्त।

तीन लेश्या में 136- 35 तिर्यच के- एकेन्द्रिय के 19 (बादर पृथ्वीकाय, अप् और प्रत्येक वनस्पति के अपर्याप्त छोडकर) विकलेन्द्रिय के 6 और असन्नी पंचेन्द्रिय के 10। समुर्च्छिम मनुष्य के 101।

चार लेश्या में 277 ।

3 तिर्यच के- बादर पृथ्वी, अप् और प्रत्येक वनस्पतिकाय के अपर्याप्त।

मनःपर्याय और केवलज्ञानी में–15 कर्मभूमिज मनुष्यो के प।

मतिश्रुत अज्ञान और समुच्चय अज्ञान में – 553 (पाच अनुत्तर विमानवासी देवो के 10 भेद छोडकर)।

विभंगज्ञान में – 222 14 नारक के प अप.।

5 तिर्यच के – संज्ञी पंचेन्द्रिय के पर्याप्त।

15 मनुष्य के – 15 कर्मभूमिज के पर्याप्त।

188 देव के – 5 अनुत्तर देवो के प अप छोडकर।

11. दर्शन द्वार

चक्षुदर्शन में 537– नारकी के 14,तिर्यच के 22 – (चौरिन्द्रय, 5 असन्नी और 5 सन्नी ति पचेन्द्रिय, इन 11 के पर्याप्त अपर्याप्त)। मनुष्य के 303 और देव के 198।

अचक्षुदर्शन में 563 – सभी।

अवधिदर्शन में 247– नारकी के 14, 5 सन्नी तिर्यच प के पर्याप्त।

15 कर्मभूमिज मनुष्य के प. अप. 30 और देव के 198।

केवलदर्शन में 15 –कर्मभूमि मनुष्यो के पर्याप्त।

12. संयम द्वार

समुच्चय संयत, सामायिक, सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात चारित्र में 15। पन्द्रह कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त।

छेदोपस्थानीय और परिहार विशुद्धि चारित्र में 10 –5 भरत और 5 ऐरावत के मनुष्य के पर्याप्त।

संयतासंयत में 20। 5 सन्नी तिर्यच के प , 15 कर्मभूमि मनुष्य के प ।

असंयत में 563 – सभी।

नो संयत नो असंयत नो संयतासंयत (सिद्ध) में नहीं।

विकलेन्द्रिय, इनके अप । मनुष्य के 75 - कर्मभूमि के अप 15, अकर्मभूमि के प. अप 60। देव के 76 (99 मे से 15 परमाधर्मी 3 किल्विषी तथा 5 अनुत्तर विमान। ये 23 कम करके शेष सभी के अप ।

तीन दृष्टि में 103- मिश्र दृष्टि के समान।

सास्वादन समकित में 213- नारकी के 13 (सातवीं नारकी का अप छोडकर) तिर्यच मे 18 (5 असन्नी तिर्यच और 3 विकलेन्द्रिय के अप और सन्नी तिर्यच के प अप 10)। मनुष्य मे पद्रह कर्मभूमि के पर्याप्त,अपर्याप्त 30। देव के 152-15 परमाधामी, 3 किल्विषी, 5 अनुत्तर विमान के प अप. छोडकर शेष सभी के प अप ।

वेदक समकित मे 103- मिश्रदृष्टि के समान।

उपशम समकित मे 205- सास्वादन समकित के 212 मे से 5 असन्नी तिर्यच 3 विकलेन्द्रिय के अपर्याप्त छोडकर।

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व मे 275। उपशम के 205 मे अकर्मभूमि मनुष्यो के 60, अनुत्तर विमान के 10, ये 70 मिलाने से 275।

क्षायिक सम्यक्त्व मे 262। 8 नारक के- प्रथम चार नारक के प अप ।

2 तिर्यच के- सन्नी थलचर युगल के प अप ।

90 मनुष्य के- 15 कर्मभूमिज, 30 अकर्मभूमिज के प अप ।

162 देव के- 15 परमाधर्मी, 3 किल्विषी के प अप छोडकर।

10. ज्ञान द्वार

समुच्चयज्ञानी और मतिश्रुतज्ञानी में 283। सम्यग्दृष्टि के समान।

अवधिज्ञान में 210- 13 नारक के - सातवीं के अप छोड़कर।

5 सन्नी ति प के प । 30 कर्म भुमिज मनुष्य के।

162 देव के - 15 परमाधर्मी, 3 किल्विषी के प अप छोडकर।

18. सूक्ष्म द्वार

सूक्ष्म में 10- पांच सूक्ष्म स्थावर के प अप ।

बादर में 553- सूक्ष्म के 10 कम करके।

19. सन्नी द्वार

सन्नी में 424 - नारक के 14, तिर्यच पचेन्द्रिय के 10, मनुष्य के 202 (समुच्छिर्म छोडकर) और देव के 198।

असन्नी में 191 - 1 नरक का - पहली का अप ।

38 तिर्यच के - सन्नी के 10 छोडकर।101 असन्नी मनुष्य।

51 देव के- 10 भवनपति के, 15 परमाधामी के, 16 वाणव्यन्तार के 10 जृम्भक के। इन सब के अपर्याप्ता।

22. संहनन द्वार

वज्र-ऋषभ- नाराच संहनन में 212 - सन्नी तिर्यच के 10 और मनुष्य के 202 (सन्नी मनुष्य के प. अप.)।

मध्य के चार संहनन में 40 - सन्नी तिर्यच के 10, मनुष्य के 30 कर्मभूमिज मनुष्य के प अप मे।

सेवार्त संहनन मे 179- 48 तिर्यच के। मनुष्य के 131 - (असन्नी म 101 कर्मभूमि मनुष्य के प. अप., 30)

23. संस्थान द्वार

समचतुरस्त्र संस्थान में 410।10 सन्नी तिर्यच के।

202 सन्नी मनुष्य के 198 देवता के।

मध्य के चार संस्थान में 40। मध्य संहनन के समान।

हुंडक संस्थान में 193- 14 नारक के, 48 तिर्यच के, 131 मनुष्य के (असन्नी मनुष्य के 101, कर्मभूमिज मनुष्य के प अप 30)।

13. उपयोग द्वार

साकार और अनाकार उपयोग मे 563 - सभी।

14. आहारक द्वार

आहारक मे 563 - सभी।

अनाहारक मे 347- 7 नारक, 24 तिर्यच, 202 मनुष्य और 99 देव- ये सब अप , कर्मभूमिज मनुष्य के प 15 (13वे 14वे गु के)।

15. भाषक द्वार

भाषक में 220 भेद-7 नारक के पर्याप्त।

13 तिर्यच के- 3 विकलेन्द्रिय, 5 असन्नी, 5 सन्नी पचे के प ।

101 मनुष्य के पर्याप्त। 99 देव के पर्याप्त।

अभाषक में 358 -7 नारक के अपर्याप्त।

35 तिर्यच के- एकेन्द्रिय के 22 प अप । विकलेन्द्रिय 3 अप और सन्नी-असन्नी पंचेन्द्रिय के पर्याप्त 10।

217 मनुष्य के- 101 सन्नी और 101 असन्नी के अप तथा 15 कर्मभूमि के प (अयोगी)। 99 देवता के अप।

16. परित्त 20. भव्य और 21. चरम द्वार

परित्त, भव्य, चरम में प्रत्येक में 563।

अपरित्त, अभव्य और अचरम में प्रत्येक मे 553 (पाच अनुत्तर विमान के प अप छोडकर)।

17. पर्याप्त द्वार

पर्याप्त में 231- नारकी 7 तिर्यच 24 मनुष्य 101 और देव 99।

अपर्याप्त में 332 - नारकी 7, तिर्यच 24, मनुष्य 202और देव के 99।

3 मनुष्य के- महाविदेह क्षेत्र की सलिलावती विजय के प अप और असन्नी के अप ।

50 देव के- 10 भवनपति और 15 परमाधामी के प अप ।

ऊंचे लोक में 122–46 तिर्यच के (बादर तेउ के प अप कम)।

76 देव के- 12 वैमानिक, 3 किल्विषी, 9 लोकातिक, 9 ग्रैवेयक और 5 अणुत्तर विमान,इनके प अप ।

तिर्च्छे लोक में 423 – 48 तिर्यच के। 303 मनुष्य के।

72 देव के- 16 वाणव्यंतर, 10 जृम्भक और 10 ज्यो के प अ.।

सिद्धशिला में 12– 5 सूक्ष्म (स्थावर) और बादर पृथ्वी के प अप ।

सिद्धशिला के ऊपर तथा सातवीं नरक के नीचे, लोक के चरमान्त में 12– 5 सूक्ष्म स्थावर और बादर वायुकाय के प अप.।

25. शाश्वत द्वार

शाश्वत में 250– 7 नारक के पर्याप्त।

101 मनुष्य सन्नी के पर्याप्त। 99 देव- सभी के पर्याप्त।

43 तिर्यच के- (पांच सन्नी तिर्यच के अपर्याप्त कम)।

अशाश्वत में 313– 7 नारक के, 5 सन्नी तिर्यच के 202 मनुष्य के (101 सन्नी म 101 समूर्च्छिम) 99 देव के।ये सभी अपर्याप्त हैं।

26. अमर द्वार

अमर में 192–7 नारक के।

86 मनुष्य के- 30 अकर्मभूमि और 56 अन्तर्द्वीप के।

99 देव के। ये सभी अपर्याप्त अवस्था मे अमर होते हैं।

मरने वाले 371– 7 नारक के पर्याप्त। 48 तिर्यच के।

217 मनुष्य के- 101 असन्नी के अपर्याप्त, 101 सन्नी के पर्याप्त और 15 कर्मभूमि के अपर्याप्त। 99 देव के पर्याप्त।

24. क्षेत्र द्वार

एक भरत और ऐरावत क्षेत्र में 51। पाचो के 63।

(48 तिर्यच के और 3 मनुष्य के - सन्नी मनुष्यो का अप , प और असन्नी मनुष्य का अप)। **एक महाविदेह में 57** (48 ति, 9 मनुष्य का - 1 महाविदेह, 1 देवकुरू, 1 उत्तरकुरू इन 3 के अप प और समुच्छिंम) **5 महाविदेह क्षेत्र में 93** (48 तिर्यच के। 45 मनुष्य के -5 महाविदेह , 5 देवकुरु, 5 उत्तरकुरु इन 15 के प , अप तथा असन्नी अप. ये 45)।

जम्बूद्वीप में 75। 48 तिर्यच के (सभी)

27 मनुष्य के- 1 भरत, 1 ऐरावत, 1 महाविदेह, 1 हेमवय, 1 हैरण्यवय, 1 हरिवास, 1 रम्यक्वास,1 देवकुरु, 1 उत्तरकुरु, ये 9 प 9 अप और इनके 9 असन्नी के अप ।

लवण समुद्र में 216- 48 तिर्यच के, 168 मनुष्य के- छप्पन अतरद्वीप के प अप 112 और इनके असन्नी के अप ।

घातकी खंड में 102- 48 तिर्यच के। 54 मनुष्य के- 2 भरत, 2 ऐरावत, 2 महाविदेह, 2 हेमवय, 2 हैरण्यवत, 2 हरिवास, 2 रम्यक्वास, 2 देवकुरू, 2 उत्तरकुरू। इन 18 के प , अप ,समूच्छिंम

कालोदधि समुद्र में 46। 46 तिर्यच के (48 मे से बादर तेउकाय के प और अप 2 कम)।

अर्द्ध पुष्करद्वीप में 102 । घातकीखड के समान।

अढाई द्वीप में 351-48 तिर्यच के,303 मनुष्य के।

अढाई द्वीप के बाहर 108-

46 तिर्यच के (48 मे से बादर तेउकाय के प अप कम)

62 देव के- 16 वाणव्यतर के, 10 जृम्भक के, 5 ज्योतिषी अचर। इन 31 के प अप ।

नीचे लोक में 115 -14 नारक । 48 तिर्यच के ।

बोल	जीव.	गुण.	योग.	उप.	ले
12 सातवीं नरक के नेरइये असं गुण	2	4	11	9	1
13 छठी नरक के नेरइये अस गुण	2	4	11	9	1
14 आठवे देवलोक के देव अस गुण	2	4	11	9	1
15 सातवे देवलोक के देव असं गुण	2	4	11	9	1
16 पाचवीं नरक के नेरइये अस गुण	2	4	11	9	2
17 छठे देवलोक के देव अस गुण	2	4	11	9	1
18 चौथी नरक के नेरइये अस गुण	2	4	11	9	1
19 पाचवे देवलोक के देव असं. गुण	2	4	11	9	1
20 तीसरी नरक के नेरइये अस गुण	2	4	11	9	2
21 चौथे देवलोक के देव अस गुण	2	4	11	9	1
22 तीसरे देवलोक के देव असं गुण	2	4	11	9	1
23 दूसरी नरक के नेरइये अस गुण	2	4	11	9	1
24 समूर्च्छिम मनुष्य अस गुण●	1	1	3	4	3
25 दूसरे देवलोक के देवता असं गुण	2	4	11	9	1
26 दूसरे देवलोक के देवी स गुण⊛	2	4	11	9	1
27 पहले देवलोक के देवता स गुण	2	4	11	9	1
28 पहले देवलोक की देवी स गुण	2	4	11	9	1
29 भवनपति देव असंख्यात गुण	3	4	11	9	4
30 भवनपति देवी सख्यात गुण	2	4	11	9	4
31 पहली नरक के नेरइये अस गुण	3	4	11	9	1
32 खेचर तिर्यच पुरुष अस गुण	2	5	13	9	6
33. खेचर स्त्री सख्यात गुणी✪	2	5	13	9	6

● 5 वें असंख्यात प्रमाण।

⊛ 32 गुणीत 32 अधिक।

✪ 3 गुणींत 3 अधिक।

27. गर्भज द्वार

गर्भज में 212- 10 सन्नी ति पचे के प अ ।

202 मनुष्य के- सन्नी मनुष्य के प अप ।

नो गर्भज मे 351- 14 नारक के।

38 तिर्यच के- 5 सन्नी के प अप छोडकर।

101 मनुष्य- असन्नी मनुष्य के अपर्याप्त। 198 देव के।

अठाणु बोल का बासठिया

प्रज्ञापना सूत्र पद 3 के महादण्डक मे 98 बोल की अल्पाबहुत्व, इस प्रकार है- बासठिया इससे भिन्न हैं।

बोल	जीव	गुण.	योग	उप	ले.
1 सबसे थोडे गर्भज मनुष्य*	2	14	15	12	6
2 इनसे मनुष्यनी सख्यात गुणी ®	2	14	13	12	6
3 बादर तेउकाय पर्याप्त असख्य गुणा	1	1	1	3	3
4 पाच अनुत्तर विमान के देव असख्यात गुण	2	1	11	6	1
5 ग्रैवेयक की ऊपर की त्रिक के देव सख्यात गुण	2	4	11	9	1
6 मध्यम त्रिक देव सख्यात गुण	2	4	11	9	1
7 नीचे की त्रिक के देव स गुण	2	4	11	9	1
8 बारहवे देवलोक के देव स गुण	2	4	11	9	1
9 ग्यारहवे देवलोक के देव स गुण	2	4	11	9	1
10 दसवे देवलोकके देव स गुण	2	4	11	9	1
11 नौवे देवलोक के देव स गुण	2	4	11	9	1

* 29 अक प्रमाण अथवा 3 यमलपद से अधिक 4 यमल पद से कम।

® 27 गुणीत 27 अधिक।

बोल	जीव.	गुण	योग.	उप	ले
58 बादर तेउकाय के अपर्या अस गुण	1	1	3	3	3
59 प्रत्येक शरीर बादर वनस्पतिकाय के अपर्याप्त अस गुण	1	1	3	3	4
60 बादर निगोद के अपर्या अस गुण	1	1	3	3	3
61 बादर पृथ्वीकाय के अप अस गुण	1	1	3	3	4
62 बादर अप्काय के अप अस गुण	1	1	3	3	4
63 बादर वायुकाय के अप अस गुण	1	1	3	3	3
64 सूक्ष्म तेउकाय के अप असं गुण	1	1	3	3	3
65 सूक्ष्म पृथ्वीकाय के अप विशेषा	1	1	3	3	3
66 सूक्ष्म अप्काय के अपर्या विशेषा	1	1	3	3	3
67 सूक्ष्म वायुकाय के अपर्या विशेषा	1	1	3	3	3
68 सूक्ष्म तेउकाय के पर्याप्त स गुण	1	1	1	3	3
69 सूक्ष्म पृथ्वीकाय के पर्याप्त विशेषा	1	1	1	3	3
70 सूक्ष्म अप्काय के पर्याप्त विशेषा	1	1	1	3	3
71 सूक्ष्म वायुकाय के पर्याप्त विशेषा	1	1	1	3	3
72 सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्त अस गुण	1	1	3	3	3
73 सूक्ष्म निगोद के पर्याप्त स गुण*	1	1	1	3	3
74 अभव्य जीव अनत गुण	14	1	13	6	[illegible]
75 प्रतिपतित समदृष्टि अनत गुण	14	2*	13	6	6
76 सिद्ध भगवत अनत गुण	0	0	0	2	0
77 बादर वनस्पतिकाय के पर्याप्त अनत गुण	1	1	1	3	[illegible]
78 वादर के पर्याप्त विशेषाधिक	6	14	15	12	

✱ बोल क्र 54, 60 और 72, 73 निगोद शरीर की अपेक्षा समझना [illegible]

* प्रतिपतित समदृष्टि में पहला और तीसरा, इन दो गुणस्थानों की [illegible]
की अपेक्षा। 74-4 थे अनन्त प्रमाण। 75- 5वें अनन्त प्रमाण। [illegible]

बोल	जीव	गुण	योग.	उप.	ले.
34 थलचर पुरुष सख्यात गुण	2	5	13	9	6
35 थलचर स्त्री सख्यात गुणी	2	5	13	9	6
36 जलचर पुरुष सख्यात गुण	2	5	13	9	6
37 जलचर स्त्री सख्यात गुणी	2	5	13	9	6
38 व्यन्तर देव सख्यात गुणा	3	4	11	9	4
39 व्यन्तर देवी सख्यात गुणी	2	4	11	9	4
40 ज्योतिषी देव सख्यात गुणी	2	4	11	9	1
41 ज्योतिषी देवी सख्यात गुणी	2	4	11	9	1
42 खेचर नपुसक (गर्भज) स गु	2	5	13	9	6
43 थलचर नपुसक (गर्भज) स गु	2	5	13	9	6
44 जलचर नपुसक (गर्भज) स गुण	2	5	13	9	6
45 चौरिद्रिय के पर्याप्त सख्यात गुण	1	1	2	4	3
46 पचेन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	2	12	14	10	6
47 बेइद्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	2	3	3
48 तेइद्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	2	3	3
49 पचेन्द्रिय के अपर्याप्त अस गुण	2	3	5	9	6
50 चौरेद्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	6	3
51 तेइद्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	5	3
52 बेइद्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	5	3
53 प्रत्येक शरीर बादर वनस्पतिकाय के पर्याप्त असख्यात गुण	1	1	1	3	3
54 बादर निगोद के पर्याप्त अस गुण	1	1	1	3	3
55 बादर पृथ्वी काय के पर्या अस गुण	1	1	1	3	3
56 बादर अप्काय के पर्या अस गुण	1	1	1	3	3
57 बादर वाउकाय के पर्या अस गुण	1	1	4	3	3

बोल	जीव.	गुण	योग	उप.	ले.
79 बादर वनस्पतिकाय के अपर्याप्त असख्यात गुण	1	1	3	3	4
80 बादर के अपर्याप्त विशेषाधिक	6	3	5	9	6
81 समुच्चय बादर विशेषाधिक	12	14	15	12	6
82 सूक्ष्म वनस्पतिकाय के अपर्याप्त असख्यात गुण	1	1	3	3	3
83 सूक्ष्म के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	1	3	3	3
84 सूक्ष्म वनस्पतिकाय पर्याप्त सख्यात गुण	1	1	1	3	3
85 सूक्ष्म के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	1	3	3
86 समुच्चय सूक्ष्म विशेषाधिक	2	1	3	3	3
87 भवसिद्धिया विशेषाधिक	14	14	15	12	6
88 निगोदिया जीव विशेषाधिक	4	1	3	3	3
89 वनस्पतिकाय के जीव विशेषाधिक	4	1	3	3	4
90 एकेन्द्रिय जीव विशेषाधिक	4	1	5	3	4
91 तिर्यच जीव विशेषाधिक	14	5	13	9	6
92 मिथ्यादृष्टि जीव विशेषाधिक	14	1	13	6	6
93 अव्रती जीव विशेषाधिक	14	4	13	9	6
94 सकषायी जीव विशेषाधिक	14	10	15	10	6
95 छद्मस्थ जीव विशेषाधिक	14	12	15	10	6
96 सयोगी जीव विशेषाधिक	14	13	15	12	6
97 ससारी जीव विशेषाधिक	14	14	15	12	6
98 समुच्चय जीव विशेषाधिक	14	14	15	12	6

"सेवम् भते । सेवम् भते । गौतम पूछे सही ।
वीरजीरा वचन मे सदेह कोई नही ॥"